6 | संपादकीय
जनसत्ता | 11 अगस्त, 2026

कल्पमेधा

अनुपयोग से लोहे को जंग खा जाती है। स्थिरता से पानी अपनी शुद्धता खो देता है। इसी तरह व्यक्ति की निष्क्रियता मस्तिष्क की ताकत सोख लेती है।
- लियोनार्दो दा विंची

हिंसा की राजनीति

पश्चिम बंगाल में विधानसभा चुनाव और उसके नतीजे आने के बाद से ही आए दिन किसी बात पर हिंसा और अराजकता की जैसी स्थिति बनी हुई है, उसमें ऐसा लगता है कि सरकार और पुलिस मूकदर्शक की भूमिका में हैं और जो हो रहा है, उसे होने दिया जा रहा है। अन्यथा क्या कारण है कि किसी भी राजनीतिक पक्ष के कार्यकर्ता या फिर उनका समर्थन करने वाले लोग बिना किसी बड़ी वजह के अचानक ही आक्रामक या अराजक हो जाते हैं और पुलिस कानून व्यवस्था बनाए रखने का इंतजाम करने के बजाय उदासीन दिखती है। राज्य में 24 परगना जिले के हलिशहर में रविवार को पूर्व मुख्यमंत्री ममता बनर्जी के साथ जो हुआ, वह न केवल कानून व्यवस्था पर एक गहरा सवाल है, बल्कि इससे यह भी पता चलता है कि बदले की भावना जब राजनीति में जगह पाती है, तो किस तरह एक अफसोसनाक हिंसा की संस्कृति का विस्तार होता है। गौरतलब है कि तृणमूल कांग्रेस के एक कार्यकर्ता की पुलिस हिरासत में मौत के बाद ममता बनर्जी उसके परिजनों से मिलने जा रही थीं। इस बीच उनकी गाड़ी पर हमला किया गया, कीचड़ और पत्थर फेंके गए, आक्रामक और अवांछित नारे लगाए गए। अफसोसनाक यह था कि वहां मौजूद पुलिस ने यह सब रोकने के लिए जरूरी सक्रियता नहीं दिखाई।

हैरानी की बात यह है कि वहां की स्थिति एक तरह से बेलगाम हो जाने की आशंका के बावजूद पुलिस ने उपद्रवियों की भीड़ को जमा होने से नहीं रोका। यह बेवजह नहीं है कि इस घटना के बाद ममता बनर्जी ने आरोप लगाया कि पुलिस के सामने ही उनकी गाड़ी पर बड़े-बड़े पत्थर फेंके गए... गाड़ी पर किया गया हमला इतना गंभीर था कि अगर खिड़कियां खुली होतीं, तो उनका सिर फट जाता। सवाल है कि राज्य में तीन बार मुख्यमंत्री रह चुकी एक महिला नेता को जब इस स्तर की अराजकता का सामना कर पड़ रहा है, तो राज्य में कानून व्यवस्था की वास्तविक तस्वीर क्या होगी! हालांकि यह पहली बार नहीं है जब राज्य में असंतोष और नाराजगी के नाम पर चुनावों के बाद इस तरह की बेलगाम प्रतिक्रिया देखी गई हो। ज्यादा दिन नहीं बीते हैं, जब विधानसभा चुनाव के नतीजों में तृणमूल कांग्रेस की हार हुई थी और भाजपा की सरकार बनी। उसके बाद राज्य के अलग-अलग इलाकों में अनेक जगहों पर तृणमूल कांग्रेस के कार्यकर्ताओं या समर्थकों पर हमले की घटना सामने आई।

अंदाजा इससे लगाया जा सकता है कि अभिषेक बनर्जी और कल्याण बनर्जी जैसे कद्दावर नेताओं पर घातक हमले किए गए। इसी तरह एक घटना में तृणमूल कांग्रेस की नेता महुआ मोइत्रा पर भी अंडे फेंके गए। विचित्र यह है कि सत्ता में होने के नाते जहां भाजपा सरकार को ऐसी घटनाओं पर शर्मिंदा होना चाहिए, वहां इस पर अफसोसनाक प्रतिक्रियाएं सामने आईं। क्या ऐसी घटनाओं को सिर्फ जनता की नाराजगी बता कर इनकी गंभीरता को खारिज किया जा सकता है? क्या इस तरह का रवैया कानून व्यवस्था को संभाल पाने में राज्य सरकार की नाकामी को नहीं दर्शाता है? पश्चिम बंगाल की राजनीति में हिंसा कोई नई बात नहीं है। मगर सवाल है कि जिन राजनीतिक दलों को इससे शिकायत रही, जिन्होंने इससे पहले की सरकारों और सत्ताधारी पार्टियों पर सवाल उठाए, वे जब खुद सत्ता में आए तब उन्हें राजनीतिक हिंसा की प्रवृत्ति को रोकना जरूरी क्यों नहीं लग रहा!

गुणवत्ता पर सवाल

देश में सड़क परिवहन की बेहतर सुविधाएं विकसित करने के लिए राजमार्गों का विस्तार और नए एक्सप्रेस-वे का निर्माण सरकार की प्राथमिकताओं में शामिल हैं। दावा किया जाता है कि उच्च तकनीक के इस्तेमाल से बनने वाले इन सड़क मार्गों पर सफर सुरक्षित होगा और वाहनों की तेज गति से समय की भी बचत होगी। मगर, हाल ही में बने कानपुर-लखनऊ एक्सप्रेस-वे की मौजूदा स्थिति सरकार के इन दावों की हकीकत बताती है। इस मार्ग को आधुनिक मशीनों, कृत्रिम मेधा आधारित निगरानी कैमरे और उन्नत यातायात प्रबंधन प्रणाली जैसी उच्च तकनीक के इस्तेमाल से तैयार किया गया है, मगर हालत यह है कि पिछले कुछ दिनों में पैंतालीस किलोमीटर की दूरी में औसतन हर दो किलोमीटर पर सड़क धंस जाने की खबरें आईं हैं। ऐसे में यह सवाल उठना स्वाभाविक है कि क्या वास्तव में गुणवत्ता के पैमाने को दरकिनार करके इस सड़क का निर्माण किया गया है? अगर ऐसा नहीं है, तो फिर क्या वजह है कि एक माह के भीतर ही सड़क की सतह जगह-जगह धंसने लगी है!

किसी एक्सप्रेस-वे का निर्माण के कुछ समय बाद ही क्षतिग्रस्त हो जाने की यह कोई पहली घटना नहीं है। पिछले माह प्रयागराज को मेरठ से जोड़ने वाले गंगा एक्सप्रेस-वे का लगभग साठ मीटर हिस्सा धंस गया था। इस सड़क मार्ग का उद्घाटन घटना के करीब तीन माह पूर्व हुआ था। जबकि कानपुर-लखनऊ एक्सप्रेस-वे पर वाहनों की आवाजाही शुरू हुए अभी एक माह भी नहीं हुआ है। इसके अलावा, निर्माणाधीन या लोकार्पण के कुछ दिन बाद ही पुलों के ढह जाने की खबरें भी आए दिन आती रहती हैं। इससे साफ है कि केवल आधुनिक तकनीक के आधार पर किसी निर्माण कार्य की गुणवत्ता तय नहीं की जा सकती। इंजीनियरों की निगरानी और निर्माण सामग्री की जांच में ढिलाई बरतने का परिणाम इसी तरह की क्षति के रूप में सामने आता है। सड़क निर्माण में खामियां कई बार वाहन दुर्घटनाओं का कारण भी बनती हैं। सच यही है कि जब तक किसी भी सार्वजनिक निर्माण कार्य की ईमानदारी से नियमित निगरानी नहीं जाएगी और संबंधित पक्षों की जिम्मेदारी तय नहीं की जाएगी, तब तक मानकों पर पूरी तरह अमल नहीं हो पाएगा।

प्लास्टिक कणों से सेहत पर संकट

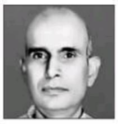

वैज्ञानिकों का मानना है कि माइक्रोप्लास्टिक से सिर्फ लोगों की सेहत पर असर नहीं हो रहा, बल्कि महिलाओं की प्रजनन क्षमता पर भी यह नकारात्मक प्रभाव डाल रहा है।

अखिलेश आर्येंदु

आधुनिक विकास का पहिया जैसे-जैसे आगे बढ़ रहा है, वैसे-वैसे कई ऐसी समस्याएं पैदा हो रही हैं, जिनका निकट भविष्य में कोई समाधान नहीं दिखाई दे रहा है। ऐसी ही एक विकट समस्या है माइक्रोप्लास्टिक (प्लास्टिक के सूक्ष्म कण) की। यह हवा, ओस और बारिश के जरिए मनुष्य सहित तमाम जीव-जंतुओं की सेहत तथा जैव विविधता पर गहरा असर डाल रहा है। यह प्लास्टिक हमें दिखता नहीं है, लेकिन हमारे ऊपर लगातार वार कर रहा है। इस पर अमेरिका में हुआ शोध एक विज्ञान पत्रिका में प्रकाशित हुआ है। इसके मुताबिक, दुनिया की साफ मानी जानी वाली जगह 'दक्षिण नेशनल पार्क' की हवा में भी प्लास्टिक के महीन कण पाए गए हैं। इस इलाके में न तो वाहनों की भीड़भाड़ है और न ही यहां उद्योग हैं, इसके बावजूद यहां प्लास्टिक के सूक्ष्म कणों की बरसात होती रही है। इससे सैकड़ों टन प्लास्टिक के कण धरती पर बिछ चुके हैं। दूसरी तरफ यूनिवर्सिटी आफ आकलैंड (न्यूजीलैंड) के वैज्ञानिकों के मुताबिक, इलेक्ट्रिक और इलेक्ट्रानिक सामान से पालिकार्बोनेट निकलता है, जो एक तरह का प्लास्टिक ही है। इससे भी मानव स्वास्थ्य पर बुरा असर पड़ता है।

वैज्ञानिकों ने माइक्रोप्लास्टिक के असर पर शोध के दौरान पाया कि हम रोज प्लास्टिक के लगभग सात हजार सूक्ष्मकण अपनी सांस के जरिए लेते हैं। अध्ययन के मुताबिक, इससे वैसा ही असर होता है जैसा तंबाकू खाना या सिगरेट पीना। यह एक गंभीर स्थिति है। वैज्ञानिकों का मानना है कि इससे लोगों की सेहत पर ही असर नहीं हो रहा, बल्कि महिलाओं की प्रजनन क्षमता पर भी यह नकारात्मक प्रभाव डाल रहा है।

वैज्ञानिकों का मानना है माइक्रोप्लास्टिक हमारी कुल क्षमता पर भी असर डाल रहा है। गौरतलब है माइक्रोप्लास्टिक एक बार इस्तेमाल होने वाले प्लास्टिक में खासतौर से पाया जाता है। इसके इस्तेमाल पर तुरंत रोक लगनी चाहिए, क्योंकि केवल एक बार उपयोग में आने वाले प्लास्टिक से महज हवा ही प्रदूषित नहीं हो रही, बल्कि मिट्टी और पानी भी प्रदूषित हो रहा है। माइक्रोप्लास्टिक से जलीय जीव-जंतुओं और पक्षियों पर भी असर हुआ है। इससे कई जीव-जंतु विलुप्त हो गए। जीव-जंतुओं में कई तरह की बीमारियां हो रही हैं और उनकी उम्र में भी कमी देखी जा रही है। इसके अतिरिक्त समुद्र, नदियों और झीलों का जल कई तरह के प्रदूषण से ग्रस्त हो गया है। कस्बों और गांवों के कुओं तथा नहरों का जल भी प्लास्टिक और माइक्रोप्लास्टिक के कारण प्रदूषित हो गया है। इससे ग्रामीण और कस्बाई लोग कई प्रकार की बीमारियों से ग्रस्त हो गए हैं। एक अनुमान के मुताबिक नदियों और समुद्र तटों पर अरबों टन प्लास्टिक कचरा मौजूद है। हालांकि इस कचरे का पुनर्चक्रण करने का कार्य दुनिया की कुछ कंपनियां कर रही हैं।

इस समस्या को ध्यान में रखते हुए केंद्र और राज्य सरकारों ने एक बार इस्तेमाल होने वाले प्लास्टिक के लिए राज्य स्तरीय नियम बना कर इसे प्रतिबंधित करने का कार्य किया, वहीं अनेक बहुराष्ट्रीय कंपनियों ने भी 2025 तक पैकेजिंग में सौ फीसद पुनर्चक्रित उत्पाद का उपयोग करने की घोषणा की

थी, लेकिन अभी इस दिशा में कितना काम हुआ है, बता पाना मुश्किल है। उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र, कर्नाटक, केरल, उत्तराखंड, पंजाब, दिल्ली, हिमाचल प्रदेश और हरियाणा सहित देश के अनेक राज्यों में प्लास्टिक कचरे पर प्रतिबंध लगाया जा चुका है, लेकिन व्यावहारिक रूप से एक बार इस्तेमाल होने वाले

> **एक बार उपयोग में आने वाले प्लास्टिक से केवल हवा ही प्रदूषित नहीं हो रही, बल्कि यह मिट्‌टी और पानी को भी प्रदूषित कर रहा है। माइक्रोप्लास्टिक से जलीय जीव-जंतुओं और पक्षियों पर असर की वजह से उनकी कई प्रजातियां विलुप्त हो गईं। उनमें नई तरह की बीमारियां हो रही हैं और इनकी उम्र में भी कमी देखी जा रही है। इसके अतिरिक्त समुद्र, नदियों और झीलों का जल कई तरह के प्रदूषण से ग्रस्त हो गया है। कस्बों और गांवों के कुओं तथा नहरों का जल भी प्लास्टिक और माइक्रोप्लास्टिक के कारण प्रदूषित हो गया है। इससे ग्रामीण और कस्बाई लोग कई प्रकार की बीमारियों से ग्रस्त हो गए हैं। एक अनुमान के मुताबिक नदियों और समुद्र तटों पर अरबों टन प्लास्टिक कचरा मौजूद है।**

प्लास्टिक का चलन अब भी जारी है। यदि एक बार इस्तेमाल वाले प्लास्टिक को चलन से बाहर नहीं किया गया, तो माइक्रोप्लास्टिक से मानव सभ्यता का जो नुकसान होगा, वह हमारी कल्पना से भी अधिक हो सकता है।

वैज्ञानिकों के अनुसार साधारण प्लास्टिक को सड़ने में भी लगभग पांच सौ वर्ष लग जाते हैं। मगर सहजता से उपलब्ध होने के कारण इसके जहरीलेपन को नजरअंदाज कर कर दिया जाता है। दुनिया में इसका महज पांच में से एक हिस्से का ही पुनर्चक्रण हो पाता है। इस तरह इसका 80 फीसद हिस्सा समुद्र में जा रहा है। इसमें माइक्रोप्लास्टिक का हिस्सा सबसे ज्यादा होता है। समुद्री पक्षी प्लास्टिक के कारण असमय मौत का शिकार बन रहे हैं। एक अनुमान के मुताबिक हर वर्ष करीब एक लाख समुद्री जीव मर जाते हैं। कई जीव-जंतु और पक्षी तो विलुप्त हो गए। इसके अतिरिक्त समुद्र, नदियों और झीलों का जल भी प्रदूषण का शिकार हो गया। कस्बों और गांवों के कुओं और नहरों का जल भी प्लास्टिक के कारण प्रदूषित हो गया है। एक सर्वेक्षण के मुताबिक सत्तर के दशक के बाद प्लास्टिक का उपयोग शहरी, ग्रामीण और कस्बाई क्षेत्रों में बढ़ता गया। अब यह कई बीमारियों का कारण बन गया है। अब तो प्लास्टिक के बगैर काम नहीं चलता। जाहिर है, इसके असर से बचना नामुमकिन है।

उपयोग में आने वाले प्लास्टिक को जलाने से कई तरह की जहरीली गैसें पैदा होती हैं, जिनमें नाइट्रिक आक्साइड, कार्बन डाइआक्साइड और कार्बन मोनोआक्साइड प्रमुख हैं। इन गैसों से फेफड़ों और आंखों की बीमारियां, कैंसर, मोटापा, मधुमेह, थायराइड, पेट और सिर दर्द तथा कब्ज जैसी समस्याएं पैदा हो सकती हैं। नए शोध के अनुसार, प्लास्टिक से बने बर्तनों के उपयोग से इसमें मौजूद नुकसानदेह रसायन खाद्य पदार्थों में घुलकर हमारे शरीर में पहुंच जाते हैं, जिससे पेट, सिर, फेफड़े और आंख से संबंधित समस्याएं पैदा हो जाती हैं। महिलाओं में प्लास्टिक के अधिक उपयोग के कारण बांझपन आ सकता है। नदियों, झीलों और समुद्र के किनारे उगी वनस्पतियों और पेड़ों पर इसका असर अधिक देखा गया है।

माइक्रोप्लास्टिक पर दुनियाभर में लगातार शोध जारी हैं। एक अंतरराष्ट्रीय अध्ययन के मुताबिक इंसानी शरीर खासकर मस्तिष्क पर माइक्रोप्लास्टिक का असर बहुत तेजी से बढ़ रहा है। इससे मस्तिष्क की मूल संरचना में बदलाव आ रहा है। दिल का दौरा और मस्तिष्क आघात की संभावना कई गुना बढ़ जाती है। जांच के सभी नमूनों में माइक्रोप्लास्टिक पाए जाने के प्रमाण मिले। गौरतलब है कि प्लास्टिक प्रदूषण का स्तर लगातार बढ़ता जा रहा है। शोध बताता है कि यह कैंसर और मनोभ्रंश का बहुत बड़ा कारण बन रहा है। प्लास्टिक प्रदूषण जिस तरह गहरा होता जा रहा है, उसे गंभीरता से लेने की जरूरत है। पिछले पांच दशकों में प्लास्टिक प्रदूषण मानव सभ्यता के लिए खतरनाक बनता चला गया है। पहाड़ों से लेकर समुद्र की गहराइयों तक, धरती का कोई भी कोना शायद ही बचा हो जहां प्लास्टिक न पहुंचा हो। मनोभ्रंश से प्रभावित लोगों के मस्तिष्क में छह गुना ज्यादा माइक्रोप्लास्टिक मिलना चिंता की बात कही जा रही है। ऐसे मरीजों के मस्तिष्क में सामान्य लोगों की तुलना में छह गुना माइक्रोप्लास्टिक अधिक पाया गया है।

माइक्रोप्लास्टिक के खतरे और दुष्परिणामों से क्या मनुष्यों को बचाया जा सकता है? क्या इसके बढ़ते असर को रोक पाना संभव होगा? लोगों को इससे बचाने के लिए ऐसे क्या कदम उठाए जा रहे हैं और हर व्यक्ति किस तरह माइक्रोप्लास्टिक के असर से बच सकता है? इन मसलों पर भी लगातार शोध किए जाने चाहिए। उम्मीद की जानी चाहिए कि आने वाले वक्त में माइक्रोप्लास्टिक से बचने-बचाने के बेहतर तरीके खोजे जा सकेंगे।

तप का ह्रास

दुनिया मेरे आगे

सदाशिव श्रोत्रिय

भारतीय संस्कृति में तप एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण मूल्य रहा है। इसका संबंध केवल धार्मिक साधना से नहीं, बल्कि अपनी गुणवत्ता में वृद्धि, परोपकार और किसी उच्च उद्देश्य की प्राप्ति के लिए स्वेच्छा से शारीरिक और मानसिक कष्ट सहने से है। भगीरथ, ध्रुव, दधीचि, महावीर और बुद्ध जैसे महापुरुषों से लेकर रामकृष्ण परमहंस, महर्षि रमण, महात्मा गांधी, विनोबा भावे, मार्टिन लूथर किंग और नेल्सन मंडेला तक अनेक व्यक्तित्व तप के आदर्श रहे हैं। ऐसे अनेक तपस्वी भी हुए हैं, जिन्हें व्यापक प्रसिद्धि नहीं मिली, पर जिन्होंने अपना जीवन समाज के लिए समर्पित कर दिया।

तप का अर्थ है स्वेच्छा और प्रसन्नतापूर्वक कष्ट स्वीकार करना। यही भावना साधारण कष्ट को आनंद और आत्म-विकास का माध्यम बना देती है। सोने को तपाने से जैसे उसकी चमक बढ़ती है, वैसे ही तप मनुष्य के व्यक्तित्व को निखारता है। संगीत, योग, साहित्य, भक्ति और समाज सेवा जैसे क्षेत्रों में उत्कृष्टता का आधार भी दीर्घकालीन तप ही रहा है। पंडित रविशंकर ने अपनी आत्मकथा में अपने गुरु उस्ताद अलाउद्दीन खां के कठोर अभ्यास का जो वर्णन किया है, वह बताता है कि किसी क्षेत्र में सिद्धि बिना तप के संभव नहीं।

तप के दो ऐसे पक्ष हैं जिन पर आज कम ध्यान दिया जाता है। पहला, तप के लिए समय चाहिए, जबकि आज अधिकांश लोग शीघ्र परिणाम चाहते हैं। दूसरा, तप का सबसे बड़ा प्रभाव व्यक्ति के भीतर होता है, जो बाहर से तुरंत दिखाई नहीं देता। आज सफलता का मूल्यांकन लोकप्रियता, धन और बाजार की कसौटी पर होने लगा है। जबकि श्रेष्ठता और लोकप्रियता हमेशा एक-दूसरे की पर्याय नहीं होतीं। पतंजलि के योगसूत्र में तप को 'नियम' का आवश्यक अंग माना गया है और क्रियायोग के तीन प्रमुख तत्वों- तप, स्वाध्याय और ईश्वर-प्रणिधान में उसको स्थान दिया गया है। इससे स्पष्ट है कि भारतीय चिंतन में तप केवल व्यक्तिगत साधना नहीं, बल्कि आत्म-विकास का अनिवार्य साधन रहा है।

हमारे समाज में तप का भाव लंबे समय तक विविध रूपों में विद्यमान रहा। उपवास, व्रत, सेवा, अनुशासन और त्याग उसी के रूप हैं। माता-पिता बच्चों को दूसरों के लिए कष्ट उठाने की शिक्षा देते थे, शिक्षक अपने शिष्यों को विषय के गहन अध्ययन के लिए प्रेरित करते थे और विद्यार्थी आज की तरह किन्हीं दर्ज बिंदुओं पर आश्रित न रह कर मूल ग्रंथों का अध्ययन करते थे। सेवा को भी तप का रूप माना जाता था। एक परिचित ने अपने वृद्ध माता-पिता की सेवा को जीवन का प्रमुख दायित्व माना, जबकि उसके अन्य भाइयों ने उसमें विशेष रुचि नहीं ली। यह सेवा-तप का एक प्रेरक उदाहरण था।

किसी उद्देश्य के प्रति समर्पण और उसके लिए धैर्य का धारण भी तप ही है। कई लोग किसी लक्ष्य का निर्धारण तो कर लेते हैं, लेकिन उसे प्राप्त करने के लिए जिस मार्ग पर चलना पड़ता है, उस पर चलने का धैर्य नहीं रखते। ऐसे में मन में जिस तरह की हड़बड़ी या जल्दी मचती है, उसके नतीजे में या तो लक्ष्य की ओर का यह सफर अधूरा रह जाता है या फिर व्यक्ति रास्ता भटक कर कहीं और पहुंच जाता है। इसके बाद एक समस्या और आती है। अपनी चूक पर गौर नहीं करने के बाद या तो लक्ष्य को, या फिर रास्ते को कठघरे में खड़ा किया जाता है। जबकि सच यह है कि आज तप-भाव तेजी से क्षीण होता दिखाई देता है। आलस्य, आरामतलबी और त्वरित सफलता की इच्छा बढ़ रही है। विद्यार्थी गहन अध्ययन के स्थान पर संक्षिप्त रास्ता खोजते हैं। त्याग, सादगी, मितव्ययिता और तप जैसे मूल्य पहले जितने आदरणीय नहीं रहे। जीवन का आदर्श अधिक से अधिक सुविधा प्राप्त करना बनता जा रहा है। इस सुविधा-प्रधान जीवनशैली को ही प्रतिष्ठा का प्रतीक माना जाने लगा है।

कुछ लोग तकनीकी प्रगति, उपभोक्तावाद और परिवार-संरचना में परिवर्तन को इसका कारण मानते हैं, लेकिन इसका सबसे बड़ा कारण पूंजीवादी अर्थव्यवस्था है। यह व्यवस्था व्यक्ति को इतना धन अर्जित करने के लिए प्रेरित करती है कि भविष्य में बिना श्रम के जीवनयापन संभव हो सके। परिणामस्वरूप सुखवाद और आरामतलबी बढ़ती है और तप का महत्त्व घटता जाता है। बिना परिश्रम अधिक आय प्राप्त करने के प्रलोभन देने वाली अनेक योजनाएं इसी मानसिकता का उदाहरण हैं। आज अगर व्यक्ति कठिन परिश्रम भी करता है तो आमतौर पर उसका उद्देश्य धन, पद या सत्ता प्राप्त करना होता है। गीता की भाषा में इसे राजसी तप कहा जा सकता है, पर यह सात्विक तप नहीं है। प्रतियोगी परीक्षाओं की तैयारी में किया गया कठोर श्रम भी अक्सर भविष्य के व्यक्तिगत लाभ का निवेश होता है। उसमें आत्मिक उन्नति, चरित्र-निर्माण या लोक-कल्याण का भाव अनिवार्य रूप से उपस्थित नहीं होता।

तप के अभाव में मनुष्य की गुणवत्ता का भी ह्रास होता है। केवल आर्थिक सफलता के लिए किया गया परिश्रम किसी व्यक्ति को संयमी, इंद्रियनिग्रही और निस्वार्थ नहीं बना सकता। जब समाज में तप का आदर्श कमजोर पड़ता है, तब मनुष्य स्वयं भी अधिक उपयोगी और संवेदनशील नहीं रह जाता। यह भी विचारणीय है कि कहीं हमारी दुनिया इतनी असंवेदनशील तो नहीं होती जा रही कि किसी के त्याग और कष्ट से न प्रेरणा मिलती है, न करुणा।

अगर समाज को दीर्घकालीन नैतिक और मानवीय शक्ति चाहिए, तो तप को फिर से एक आदर्श मूल्य के रूप में प्रतिष्ठित करना होगा। तप केवल कष्ट सहने का नाम नहीं, बल्कि स्वयं को श्रेष्ठ बनाने और व्यापक हित के लिए समर्पित करने की वह साधना है, जिसके बिना व्यक्ति और समाज दोनों का वास्तविक उत्थान संभव नहीं।

> **तप के अभाव में मनुष्य की गुणवत्ता का भी ह्रास होता है। केवल आर्थिक सफलता के लिए किया गया परिश्रम किसी व्यक्ति को संयमी, इंद्रियनिग्रही और निस्वार्थ नहीं बना सकता। जब समाज में तप का आदर्श कमजोर पड़ता है, तब मनुष्य स्वयं भी अधिक उपयोगी और संवेदनशील नहीं रह जाता।**

चौपाल

जड़ता का अंधेरा

'अंधविश्वास की जंजीरें (संपादकीय, 7 अगस्त) पढ़ा। आज विज्ञान और तकनीक के सहारे जीवन में बदलाव लाने की प्रक्रिया चल रही है। ऐसे समय में जब देश में अंधविश्वास से जुड़ी खबरें सुनने को मिलती हैं, तो मन व्यथित हो जाता है। इसी तरह की हैरान करने वाली एक घटना पिछले दिनों बाराबंकी में हुई। अफसोस की बात है कि आज भी हमारे देश में बीमारी का इलाज झाड़-फूंक के सहारे किया जाता है, जबकि चिकित्सा विज्ञान के क्षेत्र में काफी तरक्की हो चुकी है। हमारे चिकित्सकों के पास हर बीमारी का इलाज है। ऐसे में जब कोई अपने बीमार परिजन का इलाज झाड़-फूंक से कराता है, तो अचरज नहीं दुख होता है। मरीजों को नाहक प्रताड़ना सहनी पड़ती है। सवाल उठता है कि अंधविश्वास में जकड़े लोगों में वैज्ञानिक चेतना क्यों नहीं है। अंधविश्वास का दायरा इतना बड़ा है कि ज्यादातर लोग इससे अछूते नहीं हैं। इस मामले में शहरी लोग भी अलग नहीं हैं, लेकिन ग्रामीण इलाकों के लोग इसके ज्यादा शिकार होते रहते हैं, जो झाड़-फूंक से ही किसी मर्ज का इलाज कराने होशियारी समझते हैं। जबकि अक्सर देखा गया है कि यह मरीज के लिए काफी तकलीफदेह होता है।

- एमएम राजावत राज, शाजापुर

उचित नसीहत

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के प्रमुख मोहन भागवत ने छात्रों के आंदोलन को सही ठहराया है। भागवत ने जंतर मंतर पर पैलट गन के इस्तेमाल पर भी प्रश्नचिह्न खड़ा किया। वहीं उन्होंने बजट का छह फीसद शिक्षा पर खर्च करने का सुझाव दिया। सच यही है कि आंदोलन को केवल कानून-व्यवस्था के नजरिए से देखने के बजाय उसके पीछे मौजूद कारणों का भी विश्लेषण किया जाना चाहिए। यह वक्तव्य केंद्र और राज्य सरकारों के लिए नसीहत है कि छात्रों के साथ बेहतर संवाद और समन्वय स्थापित करना चाहिए और उनकी ओर से उठाए गए मुद्दों पर गंभीरता से चर्चा कर समाधान निकालना चाहिए। देश के युवाओं के साथ संवाद, उनकी आकांक्षाओं को समझना और उनकी शिकायतों को गंभीरता से सुनना किसी भी लोकतांत्रिक व्यवस्था में जरूरी कदम है। आज देश में शिक्षा के मुद्दे पर विद्यार्थी आवाज उठा रहे हैं। यदि समय रहते सरकारों ने उनकी समस्याएं हल नहीं की, तो यह विद्यार्थियों के साथ अन्याय होगा।

- वीरेंद्र कुमार जाटव, दिल्ली

सार्थक पहल

केंद्रीय शिक्षा मंत्रालय और वित्त मंत्रालय देश में शिक्षा ऋण की वितरण राशि दोगुना करने के लिए एक योजना पर काम कर रहे हैं। प्रस्तावित रूपरेखा के तहत विद्यार्थियों के माता-पिता को संपत्ति गिरवी रखने या आय प्रमाण प्रस्तुत करने की जरूरत नहीं होगी। इसके अलावा, ब्याज दरों की अधिकतम सीमा तय की जाएगी। विभिन्न विविध शुल्कों को माफ किया जाएगा और बैंकों को सीधे 'परिसर अभियान' के माध्यम से दस दिनों के भीतर आवेदनों को स्वीकृत करने के निर्देश दिए जाएंगे। बैंक अक्सर बड़ी राशि के ऋणों के लिए भारी जमानत की मांग करते थे। इसके अलावा, बैंक केवल प्रमुख इंजीनियरिंग और प्रबंधन संस्थानों को प्राथमिकता देते थे। राज्य विश्वविद्यालयों या मानविकी पाठ्यक्रमों के छात्रों को उच्च ब्याज दरों का सामना करना पड़ता था या उनके आवेदन खारिज कर दिए जाते थे। सरकार ने युवाओं की इस समस्या को समझने की कोशिश की है।

- प्रसिद्ध यादव, फुलवारी, पटना

अधूरा पाठ

संसद में दी गई जानकारी के मुताबिक दसवीं और बारहवीं की कक्षा के बाद आठ फीसद लड़कियां स्कूल छोड़ देती हैं। बेटियों को पढ़ने के लिए चलाए गए तमाम अभियानों के बावजूद यह स्थिति निराशाजनक ही है। हालांकि पिछले पांच वर्षों में नौवीं और दसवीं में स्कूल छोड़ने की दर में कमी आई है। पहले यह 17.1 फीसद थी जो अब आठ फीसद रह गई है, लेकिन अभी भी यह ज्यादा है। विभिन्न राज्य लड़कियों को शिक्षा प्रदान करने के लिए कई कार्यक्रम चला रहे हैं, लेकिन इसका पूरा लाभ उन परिवारों की लड़कियों को नहीं मिल पा रहा, जिनको इसकी आवश्यकता है। सवाल है कि ऐसी स्थिति में लड़कियों को आत्मनिर्भर बनाने के प्रयास कैसे सफल होंगे। हमें सामाजिक कुरीतियों को रोकना होगा तथा बेटा और बेटी में अंतर को समाप्त करना होगा। वहीं स्कूलों में बुनियादी सुविधाएं उपलब्ध करनी होगी।

- मीना धानिया, सिरसपुर

हमें लिखें, हमारा पता : edit.jansatta@expressindia.com | chaupal.jansatta@expressindia.com

लोकमानस

loksatta@expressindia.com

रोखीचा व्यवहार आणखी वाढणार

'मोफत मिजासीच्या मर्यादा' हा 'लोकसत्ता'मधील अग्रलेख (१० ऑगस्ट) वाचला. केंद्र सरकारने १० वर्षांपूर्वी अत्यंत गाजावाजा करत सुरू केलेली मोफत यूपीआय सेवा आता अंगाशी आल्यानंतर आता ती सशुल्क करण्यासाठी हालचाली सुरू झाल्या आहेत ही गोष्ट अर्थांधळेपणाचीच म्हणावी लागेल. परंतु आता ही योजना सशुल्क करण्याच्या वेळीदेखील सरकारची भाषा फसवीच आहे त्याला काय म्हणावे? सशुल्क करताना त्याचा भर फक्त आस्थापनांवरच येणार आहे, ग्राहकांवर नाही ही मखलाशी कशासाठी? कोणता व्यापारी हा भार सहन करेल आणि त्याने का सहन करावा?

अर्थात केंद्र सरकार अजूनही ८० कोटी जनतेला धान्यपुरवठा करते तर डबल इंजिन असलेले राज्य सरकारदेखील लाडक्या बहिणींना अजूनही फुकट भाऊबीज वाटत आहे. यामध्ये ८१ लाख बहिणी आता विविध कारणांनी योजनेच्या बाहेर गेल्या आहेत, पण या ८१ लाख बहिणींनीदेखील लाडक्या भाऊरायाला मतांची भरघोस भेट दिलेली आहेच, त्याबद्दल कुणीच काही बोलत नाही. ही टक्केवारी सुमारे ३८ टक्के आहे, म्हणजे ३८ टक्के मते या सरकारला अशीच विनासायास मिळाली. अवैध ठरणाऱ्या बहिणींकडून वसुली केली जाणार नाही म्हणजे काही हजार कोटी रुपये वाया गेले नाहीत का?

हीच गोष्ट शेतकऱ्यांच्या कर्जमाफीची. एकूण एक लाख ४० हजार शेतकऱ्यांपैकी ९४ हजार शेतकरी चक्क प्राप्तिकर भरणारे आहेत. ही सर्वसामान्य जनतेची फसवणूक नाही का? हीच तऱ्हा याच शेतकऱ्यांच्या वीज बिल माफीबाबतदेखील घडलेली आहे, म्हणजे सर्वसामान्य नागरिकांकडून कररूपाने मिळालेल्या पैशांची अशी उधळपट्टी कशासाठी? यामुळेच राज्य सरकारला दर अधिवेशनात लाखो कोटी रुपयांच्या पुरवणी मागण्या मांडाव्या आणि मंजूर कराव्या लागतात. हीच गोष्ट केंद्रीय अर्थसंकल्पाच्या बाबतीतदेखील घडत आहे. यूपीआय सशुल्क करण्यामागे ट्रम्प यांचादेखील मोठा वाटा आहे. कारण अमेरिका- भारत यांच्यातील व्यापारी करारावर अद्यापही चर्चाच सुरू आहे. त्यामुळे यूपीआय सशुल्क करण्यासाठी अमेरिकी कंपन्यादेखील कारणीभूत ठरल्या आहेत. केंद्र सरकारने रोख रकमेस पर्याय देणारा जगातील एकमेव देश म्हणून कितीही गमजा मारल्या तरी रोखीच्या व्यवहाराचे प्रमाण दिवसेंदिवस वाढत आहे, ही गोष्ट नाकारता येणार नाही. यात सर्वसामान्यांचे जे नुकसान होते त्याला कोण जबाबदार?

■ **शुभदा गोवर्धन,** ठाणे

यशाची किंमत कोण चुकवणार?

'मोफत मिजासीच्या मर्यादा' हा अग्रलेख (१० ऑगस्ट) वाचला. जगातील यूपीआय स्वरूपाच्या बहुतांश सुविधा या व्यावसायिक शुल्क, इंटरचेंज फी आणि नेटवर्कच्या अर्थकारणावर आधारित आहेत. उदाहरणार्थ, अमेरिका आणि युरोपमधील कार्ड-नेटवर्क व्यवस्थांमध्ये व्यापाऱ्यांकडून व्यवहाराच्या स्वरूपानुसार शुल्क आकारले जाते. याउलट भारताने यूपीआयला सार्वजनिक डिजिटल पायाभूत सुविधा मानून जवळपास शून्य व्यवहार खर्चाचा मार्ग स्वीकारला. त्यामुळे यूपीआयचे यश हे केवळ एका डिजिटल सुविधेचे यश नाही; ते भारताच्या आर्थिक नवोन्मेषाचे ठळक उदाहरण ठरले आहे आणि याच प्रारूपामुळे आज तत्क्षणी होणाऱ्या डिजिटल आर्थिक व्यवहारांत भारताने जगात आघाडी घेतली आहे.

या व्यवहारांची संपूर्ण किंमत सरकारनेच कायम उचलत राहणे शक्य आणि व्यवहार्य नव्हतेच. सामान्य नागरिक आणि छोटा व्यापारी यांचे व्यवहार मोफतच राहिले पाहिजेत, मात्र, मोठ्या व्यावसायिक व्यवहारांवर उदाहरणार्थ कॉर्पोरेट पेमेंट्स किंवा ठरावीक मर्यादेपुढील उच्च-मूल्य व्यवहारांवर अत्यल्प शुल्क आकारून यूपीआयला आर्थिकदृष्ट्या सक्षम करणे, हा अधिक व्यवहार्य आणि दीर्घकालीन मार्ग ठरू शकतो. भारताने केवळ जगातील सर्वाधिक यूपीआय व्यवहार करणारा देश, एवढीच ओळख निर्माण करण्याचे उद्दिष्ट ठेवणे योग्य नाही. भविष्यातील जागतिक डिजिटल आर्थिक व्यवहारांची व्यवस्था उभी करणारा देश अशी ओळख निर्माण करण्याची महत्त्वाकांक्षा असली पाहिजे. 'मोफत' यूपीआय ही भारताच्या डिजिटल क्रांतीची ताकद होती, यात शंका नाही. पण आता या व्यवस्थेला आर्थिक बळ देणे, हीच भारताच्या जागतिक महत्त्वाकांक्षेची खरी कसोटी आहे.

■ **संदीप देवरे,** चारकोप (मुंबई)

आयजीच्या जिवावर बायजी उदार!

'मोफत मिजासीच्या मर्यादा' हा अग्रलेख वाचला. अन्य परकीय क्रेडिट/ डेबिट काड्र्सना पर्याय म्हणून आणलेले 'रुपे कार्ड' निदान सशुल्क तरी होते. पण नोटाबंदीनंतर 'डिजिटल व्यवहार' वाढविण्यासाठी म्हणून आणलेले 'यूपीआय' पूर्णतः मोफत! आपल्या मोफत सेवा धोरणाचा भाग म्हणून सरकार त्या खर्चाची अंशतः भरपाई करतही असेल. पण ही सेवा ग्राहकांना मोफत देण्याच्या सरकारी आदेशाचा भार अंतिमतः या सेवेचा एक भाग झालेल्या बँकांना उचलावा लागतो. त्यासाठी उभाराव्या लागणाऱ्या तांत्रिक क्षमता व ही सुविधा देणारे पुरवठादार यांच्या खर्चाचा भार लहान नागरी बँकांवर पडतो आणि तो किमान वार्षिक एक कोटीपर्यंत असतो.

आधीच पतपेढ्या, मल्टिस्टेटमुळे मंदावलेला व्यवहार त्यात रिझर्व्ह बँक व सरकारतर्फे घोषित छुप्या योजनांचा खर्च बँकांनाच उचलावा लागतो. सरकारी बँका व मोठ्या व्यापारी बँकांतून सरकारी योजनेचा भरपूर विनावापर निधी पडून असतो. तो मिळविण्यासाठी नामांकित खासगी बँकेने केलेला वरखर्च दोन महिन्यांपूर्वी बातमीचा विषय ठरला होता. परिणामी त्या बँकेच्या शेअरचा भाव घसरला होता. या व अशा निधीमुळे हा सेवा खर्च त्यांना पेलवतो, पण जनसामान्यांपर्यंत पोहोचलेल्या नागरी सहकारी बँकांवरील खर्चाचा अतिरिक्त भार म्हणजे 'आयजीच्या जिवावर बायजी उदार' म्हणतात ते हेच.

■ **लक्ष्मण संगेवार,** नांदेड

'मक्का करारा'त लक्ष्य भारत

'इस्लामी नेटोच्या शक्यतेचे आव्हान' हा (१० ऑगस्ट) 'अन्वयार्थ' वाचला. यापूर्वीही इस्लामी राष्ट्रांदरम्यान अशी परिस्थिती होती, आता ती मूर्त स्वरूप धारण करत आहे. पाकिस्तान अण्वस्त्रसंपन्न होऊन स्थिरावल्यामुळे अर्थातच त्यांच्याकडे नेतृत्व जात आहे. इस्रायलने १९८१ सालीच इराकची अणुभट्टी उद्ध्वस्त करून त्यांना अणुबॉम्ब बनवण्यापासून रोखले आणि त्याच कारणासाठी आज इराणविरोधात युद्धात उतरला आहे. भारताने मात्र सर्व काही समजत असून आणि पाकिस्तानचा पूर्वानुभव असूनही दूरदर्शिता न दाखवता, पाकिस्तान अण्वस्त्र बनवेपर्यंत कोणतीही प्रतिबंधात्मक लष्करी कारवाई केली नाही. त्यामुळे आता भारत आणि पाकिस्तान यांचे एकाच पातळीवर आंतरराष्ट्रीय मूल्यांकन होत असून इतर इस्लामी राष्ट्रे पाकिस्तानला त्यांचा तारणहार समजत आहेत. पुढे सौदी आणि तुर्की आपापल्या परीने पाकिस्तानला आर्थिक आणि प्रत्यक्ष लष्करी मदत करतील हे उघड आहे. 'मक्का करार' हा विशेषतः भारताला केंद्रस्थानी ठेवून करण्यात आला आहे, असे गृहीत धरणे भारताच्या संरक्षण धोरणांशी सुसंगत राहील.

■ **पराग देशमुख,** ठाणे

राज्यशकट हाकण्याची पद्धत उघड

अनंत गाडगीळ यांनी 'बुकमार्क'मध्ये 'मुक्त माध्यमांतील मजेदार किस्से' या शीर्षकाखाली एका इंग्रजी पुस्तकाची करून दिलेली तोंडओळख (८ ऑगस्ट) वाचली. देश कोणताही असो, राजकारण्यांविषयीचे किस्से वाचनाची रंगत वाढवतात हे मात्र खरं. ब्रिटनसारख्या देशातील मुक्तपत्रकारिता व आपल्यासारख्या देशातील मागील दशकभरातील पत्रकारिता यांची तुलना करण्याचा मोह टाळणेच योग्य. त्या देशातील जनता 'सातच्या बातम्यां'ऐवजी छापील माध्यमांवर अधिक अवलंबून असावी, कदाचित.

याच अंकात 'मी तुमच्या पाठीशी!' या शीर्षकाखालील वृत्तही छापून आले आहे. मुक्त पत्रकारिता असणाऱ्या देशांत असे वक्तव्य करण्याआधी नेत्यांना, त्यावर पत्रकारांची व त्यानंतर जनतेची प्रतिक्रिया काय असू शकेल, याचा विचार करावा लागत असावा. महाराष्ट्रातील पक्ष संघर्ष सर्वोच्च न्यायालयात निर्णायक वळणावर आला असताना पंतप्रधानांनी, 'मी तुमच्या पाठीशी आहे!' यासारखे वक्तव्य करणे हे त्यांची राज्यशकट हाकण्याची पद्धत उघड करणारे वाटले. माध्यमे मुक्त असल्यास ती राज्यकर्त्यांनाच आरोपीच्या पिंजऱ्यात उभे करताना दिसतात आणि मध्यमे खंबीरपणे प्रश्न विचारताना दिसल्यास न्यायालयेदेखील अशा वक्तव्याची दखल घेताना दिसतात.

■ **शैलेश पुरोहित,** मुंबई

'एफसीआरए' : कर नाही त्याला डर कशाला?

उत्तरदायित्व आणि पारदर्शकता ही सार्वजनिक जीवनातली मूल्ये पाळणे स्वयंसेवी संस्थांनाही बंधनकारक असणे आवश्यकच आहे. स्वयंसेवी कामाच्या नावाखाली परदेशी पैशांच्या मदतीने राजकारण करणाऱ्यांना इतर अनेक देशांप्रमाणे आपणही वेसण घातलीच पाहिजे...

विनय सहस्रबुद्धे
अध्यक्ष, एशियाटिक सोसायटी (मुंबई), सदस्य भाजप राष्ट्रीय कार्यकारिणी

पहिली बाजू

मोठमोठी सेवा कार्ये किंवा सामाजिक कामे उभी राहतात त्या मागे एक उत्कट संवेदनशीलता असते आणि समाजाचे आपण जे देणे लागतो ते आपण फेडले पाहिजे या विशुद्ध भावनेची प्रेरणाही असते. धोंडो केशव कर्वे, शिवाजीराव पटवर्धन, बाबा आमटे, नानाजी देशमुख, छत्तीसगडमध्ये जनजातीय समुदायात काम सुरू करणारे बाळासाहेब देशपांडे किंवा मणिपुरात जाऊन शाळा चालविणारे भैयाजी काणे या सर्वांची प्रेरणा हीच होती. विलक्षण उत्कट अंतःप्रेरणेच्या रेट्याने हाती घेतलेल्या स्वयंस्फूर्त सामाजिक कामांची एक मोठी परंपरा आपल्याला लाभली आहे. पण पुढे लोकशाही मार्गाने निवडून आलेली जगभरातील लोकनियुक्त सरकारेसुद्धा प्रशासनावर असलेल्या, मुख्यत्वे नोकरशाहीच्या अनावश्यक पकडीमुळे खरे लोककल्याण साधू शकली नाहीत. त्यामुळे सरकारी यंत्रणा लोककल्याणाच्या योजना आणि विकासाचे कार्यक्रम राबविण्यासाठी गैर-सरकारी संस्था शोधू लागल्या आणि त्यांच्यावर पूर्णपणे अवलंबूनही राहू लागल्या. इथेच सेवा संस्थांच्या एनजीओ-करणाला सुरुवात झाली. पुढे या नॉन-गव्हर्नमेंट संस्था मोठ्या प्रमाणावर हळूहळू गव्हर्नमेंटसारखेच काम करू लागल्या. अंतर्यामीच्या प्रेरणेपेक्षा प्रकल्प-प्रस्ताव महत्त्वाचे ठरू लागले आणि हळूहळू स्वयंसेवी/स्वयंस्फूर्त संघटनासुद्धा- कधी कधी त्यांच्याही नकळत- एका सापळ्यात अडकत गेल्या.

सुरुवातीस कामाच्या विस्तारासाठी आणि मग काम आणि कार्यकर्ते व कर्मचारी जपण्यासाठी, ते टिकवून ठेवण्यासाठी लोकाश्रय आणि पुढे राजाश्रय म्हणजेच सरकारी पैसा मिळवीत राहणे क्रमप्राप्त होत गेले. स्वयंसेवी सेवाकार्यात कालानुरूप व्यवसायनिष्ठता येणे आवश्यकच होते. पण हळूहळू व्यवसायनिष्ठतेच्या हातात हात घालून एक प्रकारचा व्यापारी किंवा व्यावसायिक दृष्टिकोनही शिरला आणि तिथूनच कार्यकर्त्यांच्या उत्कट ऊर्मीच्या बळावर सुरू झालेली अनेक स्वयंसेवी कामे सरकारी अनुदानावर अथवा धर्मादाय संस्थांच्या देणगीवर अवलंबून राहू लागली. नेमक्या याच टप्प्यावर स्वयंसेवी संस्थांच्या आर्थिक संसाधनांची गरज भागविण्यासाठी विदेशी धनदात्या संस्थांचा शिरकाव सुरू झाला. त्यानंतर जगभरातून परदेशी निधी देणारे फाउंडेशन्स आले आणि त्यांनी या एक प्रकारच्या स्युडो-वॉलंटरिझमला किंवा छद्म-स्वयंसेवेला अधिक प्रोत्साहन दिले. भारतात स्वयंसेवी संस्थांसाठी येणाऱ्या परदेशी पैशाचे प्रमाण नेमके असावे तरी किती? सरकारी संकेतस्थळावरील अधिकृत आकडेवारीनुसार जुलै १५ पर्यंत एकूण १४ हजार ४४९ संस्था अधिकृतपणे विदेशी धन संपादन करीत आहेत. २०१९-२०२२ या काळात एकूण १३ हजार ५२० स्वयंसेवी संस्थांनी मिळविलेल्या परदेशी देणग्या व अनुदानाचा आकडा तब्बल ५५ हजार ७४१ कोटी रुपये एवढा आहे. कथित 'स्वदेश-कल्याणाच्या' कामांसाठी येणारे परदेशी धनाचे हे प्रमाण विचार करण्यास भाग पाडणारे आहे.

संसदेत लवकरच 'एफसीआरए' कायद्यातील दुरुस्त्यांवर चर्चा होणार आहे आणि नागरी समाज क्षेत्रातील किंवा ग्रामीण व आदिवासी भागांत काम करणाऱ्या काही स्वयंसेवी संस्था या सुधारणांवरून आक्रोश करत आहेत, सरकारवर संशय व्यक्त करत आहेत आणि काही वेळा बिनबुडाचे आरोपही करत आहेत. तथापि, परदेशी निधीच्या बळावर भरभराटीस आलेल्या स्वयंसेवी संस्थांच्या कार्याचे जगभरात नेमके काय परिणाम झाले आहेत आणि ज्या अमेरिकी लोकप्रतिनिधीगृहांचे सदस्य एवढी आगपाखड करीत आहेत ती अमेरिका त्या देशात येणाऱ्या परदेशी पैशांबाबत काय भूमिका घेते हे समजून घेणे उद्बोधक ठरेल.

विदेशी वित्त-पुरवठ्याच्या आधारे टिकून राहणाऱ्या स्वयंसेवी संस्थांच्या व्यापक सामाजिक - सांस्कृतिक परिणामांबाबत अनेकांनी अभ्यास केला आहे आणि हे विश्वसनीय अभ्यास अहवाल माहितीजालात उपलब्धही आहेत. तीसएक वर्षांपूर्वी म्हणजे १९९७ मध्येच, लॅटिन अमेरिकी समाजावरील परदेशी निधीच्या प्रभावाचा अभ्यास करणारे अभ्यासक जेम्स पेट्रास यांनी अनेक महत्त्वाची निरीक्षणे नोंदविली आहेत. त्यांच्या अभ्यासानुसार, 'एनजीओचे व्यवस्थापक प्रकल्प आखण्यात कुशल झाले आहेत. ते एका बाजूला 'अस्मिता' आणि दुसरीकडे 'जागतिकीकरणवाद' अशा परस्परविरोधी मुद्द्यांवर आधारित एक कथानक प्रसारित करतात.' पेट्रास यांच्या मतानुसार मुख्यत्वे आंतरराष्ट्रीय धनदाता समुदाय त्यांच्या प्रकल्पांमधून सामील झालेल्या स्वयंसेवी संस्थांना एक प्रकारे परदेशी देणगीदारांवर आर्थिकदृष्ट्या अवलंबून राहण्यास भाग पाडतात.

आफ्रिकेतही हीच कहाणी आहे. काही दशकांपूर्वी, झिम्बाब्वेचे अभ्यासक टी. एच. झिवान्झा यांनी आपल्या अतिशय भेदक लिखाणातून निदर्शनास आणून दिले होते की, 'परदेशी मदतीचा सतत येणारा प्रवाह आफ्रिकेसाठी फायद्यापेक्षा जास्त हानीकारकच ठरला आहे, ज्यामुळे परावलंबनाचे एक असे दुष्टचक्र निर्माण झाले आहे की जे मोडून काढणे कठीण जात आहे. पाश्चात्त्य महासत्ता, बहुराष्ट्रीय कंपन्यांचे अधिकारी आणि आंतरराष्ट्रीय व स्थानिक एनजीओच्या अधिकाऱ्यांचे एकत्र येणे एका घातक संधिसाधूपणाला जन्म देत आहे; कारण या उच्चभ्रूंना गरिबी पूर्णपणे नष्ट करण्यात रस नाही, तर शतकानुशतकांच्या साम्राज्यवादाने निर्माण केलेल्या गोंधळाचा आणि विषमतेचा फायदा घेण्यात अधिक रुची आहे.' 'द गार्डियन'चे पत्रकार गॅरी यंग यांनी १९९८ मध्ये यावर एक मार्मिक टिप्पणी केली होती. आफ्रिकन एनजीओंबाबतचा त्यांचा अनुभव सांगताना त्यांनी लिहिले की, 'मदत करणारी संस्था जमा करत असलेल्या पैशांपैकी सुमारे ७५ टक्के रक्कम त्यांच्या स्वतःच्या संस्थेच्याच प्रशासनावर खर्च केली जाते.' अमेरिकेतल्या लोकप्रतिनिधींचे भारतातील स्वयंसेवी कामाशी काहीही देणे - घेणे नसताना आपल्या एफसीआरए दुरुस्त्यांसंदर्भात ते भारतावर टीका करण्याचा अगोचरपणा करीत आहेत, तिथेही पेट्रियट कायद्यानुसार परदेशी धनाचा उपयोग दहशतवादाला उत्तेजन देण्यासाठी होत नाही ना हे पाहण्यासाठीचे कठोर निर्बंध आहेतच. आणखी महत्त्वाचे म्हणजे भारतातील गरिबी निर्मूलनासाठी मिळणारी परदेशी मदत परिणामकारक ठरलेली नाही हे, स्पष्ट करणारे संशोधन-आधारित पुरावेही मुबलक प्रमाणात उपलब्ध आहेत.

या पार्श्वभूमीवर परदेशी धनदात्या संस्था नेमक्या कोण आहेत? त्या का आणि कशासाठी निधी देत आहेत? निधी स्वीकारणाऱ्या स्वयंसेवी संस्था त्या निधीचा; तो ज्या कारणासाठी दिला गेला आहे त्यासाठीच उपयोग करत आहेत की इतर कारणांसाठी? अशा अनेक वाजवी प्रश्नांची उत्तरे शोधणे सोपे व्हावे हा आणि केवळ हाच उद्देश समोर ठेवून एफसीआरए कायद्यात आवश्यक ते बदल करण्यात येत आहेत.

येणारा परदेशी पैसा देशाची सुरक्षा आणि सार्वभौमत्व यांना धक्का बसेल अशा उपक्रमांसाठी वापरला जात असेल, तर तो रोखण्यासाठी आवश्यक त्या तरतुदी नव्या कायद्यात आहेत आणि त्या योग्यच आहेत. विशेष म्हणजे, सर्वोच्च न्यायालयानेही २०२२ मध्ये, केअर अँड शेअर फाउंडेशन, विजयवाडा यांनी दाखल केलेल्या एका खटल्याचा निकाल देताना 'परदेशातून पैसा मिळविणे आणि तो हवा तसा भारतात खर्च करणे हा काही मूलभूत अधिकार असू शकत नाही' असे स्पष्टपणे म्हटले आहे. भारतातील उपक्रमांसाठी परदेशातून आलेल्या आर्थिक मदतीचा मूळ स्रोत आणि या मदतीच्या विनियोगाबद्दलची घोषित भूमिका आणि वास्तविक स्वरूप या पायाभूत मुद्द्यांच्या संदर्भात आवश्यक असलेली पारदर्शकता या नव्या दुरुस्त्यांमुळे आपोआपच साधली जाणार आहे आणि खरे पाहता यात विरोध करण्याजोगे काहीही नाही. याशिवाय, प्रस्तावित नियामक चौकट ही आंतरराष्ट्रीय मानकांनुसारच आहे- जगभरातील सार्वभौम राष्ट्रे देशांतर्गत गैर-सरकारी उपक्रमांच्या परदेशी निधीवर अशीच आणि अनेकदा यापेक्षाही अधिक कडक नियंत्रणे ठेवतात.

विशेष म्हणजे, प्रस्तावित नियामक चौकट ही पूर्णपणे धर्म-निरपेक्ष आणि क्षेत्र-निरपेक्ष आहे. ती हिंदू, मुस्लीम, ख्रिश्चन, शीख, बौद्ध किंवा इतरही सर्वांना सारखीच लागू आहे. तसेच धार्मिक संस्था आणि धर्मनिरपेक्ष सेवाभावी संस्था यांच्यातही ती कोणताही फरक करत नाही. विदेशी मदत घेणाऱ्या संस्थांच्या नोंदणीची प्रक्रिया असो व तपशील उघड करण्याबाबतची बंधने असोत, काही अपवाद वगळता प्रत्येक एफसीआरए-नोंदणीकृत संस्थेला हे सर्व समान रीतीने लागू होणार आहे.

उत्तरदायित्व आणि पारदर्शकता ही सार्वजनिक जीवनातली मूल्ये पाळणे स्वयंसेवी संस्थांनाही बंधनकारक असणे आवश्यकच आहे. ऊठसूट कुठे धरण बांधणीस विरोध, कुठे खाण प्रकल्पात खोडा आणि अनेकदा निवडक विषयांतील मानवाधिकारांबाबत आरडा-ओरडा असे करणाऱ्या काही स्वयंसेवी संस्थाही आपल्याकडे आहेत. काही विशिष्ट आंतरराष्ट्रीय पुरस्कार केवळ त्यांनाच मिळत राहतात. पण तरीही त्यांची आंदोलने तर्क, संशोधनावर आधारित पुरावे आणि स्वदेशी संसाधने यांच्या बळावर असतील आणि त्यांच्याकडे लपविण्याजोगे काही नसेल तर त्यांना भीती कशाची? कर नाही त्यांना डर असण्याचे काहीच कारण नाही. पण तसे नसेल तर स्वयंसेवी कामाच्या नावाखाली परदेशी पैशांच्या मदतीने राजकारण करणाऱ्यांना इतर अनेक देशांप्रमाणे आपणही वेसण घातलीच पाहिजे. एफसीआरए दुरुस्त्या त्यासाठीच आहेत.

कुतूहल

मधमाश्या मध कसा तयार करतात?

मध म्हणजे फुलांनी तयार केलेल्या मकरंदावर, मधमाश्यांनी प्रक्रिया करून त्यांच्यासाठी तयार केलेले अन्न, जे आपण खातो! मुळातच मध तयार करणं हे एकट्या-दुकट्याचं काम नाही. हजारो मधमाश्यांनी एकत्रित येऊन सर्वांच्या सहकार्याने, कामाची विभागणी करून, काबाडकष्ट करत, शिस्तबद्धपणे राबवलेला हा मध-निर्मिती प्रकल्प असतो! मध तयार करण्यासाठी लागणारा कच्चा माल म्हणजे 'मकरंद'. तो फुलं तयार करतात. त्यासाठी हजारो फुलांना भेटी देणं भाग असतं. एका पोळ्यात साधारणपणे साठ हजार मधमाश्या असतात. अर्धा किलोच्या आसपास मध

तयार करण्यासाठी कित्येक हजार मधमाश्यांना आपलं पोळं सोडून रानावनात फुलं शोधत भटकावं लागतं. जवळजवळ ८० लाख फुलांमधून मकरंद गोळा करावा लागतो. हा सगळा प्रवास एकत्र धरला तर तीन वेळा पृथ्वी प्रदक्षिणा होईल!

मधमाश्यांना पोकळ सोंडेसारखा सूक्ष्म अवयव असतो. ती सोंड त्या फुलांच्या तळाशी खुपसतात आणि मकरंद शोषून घेतात. हा मकरंद त्यांच्या पोटात ठेवतात. त्या पोटाला 'मधू-जठर' म्हणतात. मकरंदाने पोट खच्चून भरल्यावर मंडळी परतीच्या मार्गाला लागतात. मकरंद पोटात शिरल्याबरोबर मध तयार करण्याची प्रक्रिया सुरू झालेली असते. जठरात विविध विकरं या मकरंदावर सोडली जातात. या मधमाश्या पोळ्यात परत आल्यावर प्रक्रिया सुरू झालेला मकरंद उलटी करून दुसऱ्या मधमाशीच्या तोंडात सोडतात. ही माशी आणखी काही विकरं जठरामध्ये सोडते. ही दुसरी माशी आता तिसऱ्या माशीच्या तोंडात उलटी करून हा मकरंद सोडते किंवा तिला भरवते. असं करत करत असंख्य मधमाश्यांच्या मधू-जठरांमधून हा मकरंद त्यावर प्रक्रिया होत होत पुढे जातो. यामध्ये 'इन्व्हर्टेज' नावाचं प्रमुख एन्झाइम असतं. त्यामुळे ग्लुकोज आणि फ्रुक्टोज या शर्करा तयार होतात. याशिवाय 'ग्लुकोज ऑक्सिडेज' या विकरामुळे ग्लुकॉनिक आम्ल तयार होतं.

मूळ मकरंदामध्ये ८० टक्के पाणी असतं. पण या टप्प्यापर्यंत मकरंद थोडाफार घट्ट झालेला असतो. तरीपण त्यात अजूनही पाण्याचा अंश असतोच. पाण्याचा अंश तसाच राहिला तर मध जिवाणूंमुळे खराब होऊ शकतो. पण पाण्याचा अंश १८ टक्क्यांपेक्षा कमी झाला तर तो खराब होत नाही. यासाठी ही मंडळी फार नामी युक्ती योजतात! हा मधूसदृश पदार्थ षटकोनी खणांमध्ये ओकतात आणि त्यावर हजारो मधमाश्या आपले पंख वेगाने हलवून हवेचा झोत तयार करतात. त्यामुळे पाण्याचं बाष्पीभवन होऊन जेव्हा पाणी १८ टक्क्यांपेक्षा कमी होतं, तेव्हा मध तयार होतो. आता त्या षटकोनी खणांवर मेणाचा थर लावून ते सीलबंद करण्यात येतात.

– बिपीन भालचंद्र देशमाने
मराठी विज्ञान परिषद
ईमेल : office@mavipa.org
संकेतस्थळ : www.mavipa.org

उलटा चष्मा

गेले दामले कुणीकडे?

काय दामले *तुम्ही? अहो, इतकी वर्षे रंगभूमीवर काम करून विनोद आणि थट्टेतला फरक कळला नाही का तुम्हाला? म्हणे, नीटचा 'फुलफार्म' माहिती नसलेले तरुण आंदोलनात सहभागी झालेत. ही क्रूर थट्टा हे तुम्हाला कळत नसेल व किती मस्त विनोद केला असे वाटत असेल तर तुमच्या विनोदाचा दर्जा फारच खुळचट म्हणायला हवा. तुमची नाटके बघून खी खी हसणारे प्रेक्षक हे सहन करतील पण शिक्षण व्यवस्थेवरून सध्या आक्रमक झालेल्या तरुणांनी का म्हणून हे सहन करायचे? नाटकात विनोद 'पाडणे' व वृत्तवाहिन्यांच्या व्यासपीठावर तो करण्याचा प्रयत्न करणे यातला फरक कळतो का तुम्हाला! विद्यार्थ्यांनी उपस्थित केलेले प्रश्न तुम्हाला 'गेला माधव'मधल्या तीन बायकांकडे फिरणाऱ्या दादल्यासारखे वाटले काय? कलावंतांनी सरकारची तळी उचलावी या धोरणाचे असाल तुम्ही खंदे समर्थक, म्हणून तळव्यापर्यंत खाली याल का? गंभीर प्रश्नावर विनोद करायला उच्चदर्जाची तयारी लागते. तुमच्यातील या तयारीच्या अभावावर न बोललेलेच बरे! अहो, तुम्हाला पद्मश्री मिळवायची असेल तर खुशाल करा सरकारची खुशामतगिरी. आमचे काही म्हणणे नाही, पण विद्यार्थ्यांच्या जखमेवर मीठ कशाला चोळता?*

या आंदोलनावर वाट्टेल ते बोलणे रंगमंचाच्या मागे इतरांकडून तंबाखू घेऊन चघळण्याइतके सोपे वाटले का तुम्हाला? तुमच्यापेक्षा तर त्या आंदोलनात सहभागी झालेल्या विद्यार्थ्यांनी फलकांच्या माध्यमातून केलेले विनोद कितीतरी श्रेष्ठ होते हो! काय तेच तेच लेखक घेऊन बसलात, या नव्या पिढीच्या प्रतिभेचाही वापर करायला शिका जरा! 'अरे, हाय काय अन् नाय काय' असे नेहमीच्या पठडीतले वाक्य म्हणत हा 'नीट'चा प्रश्न माझ्या आवाक्यातला नाही असे जरी तुम्ही म्हटले असते तरी चालले असते की! उगीच 'पचकायची' काय गरज होती? तुमच्या रंगमंचावरच्या विनोदाने प्रेक्षकांना आनंद (?) होतो तसा या वाक्याने सरकारलाही होईल असे वाटले का तुम्हाला? आधी 'एका लग्नाची गोष्ट', मग 'एका लग्नाची पुढची गोष्ट'. हे आंदोलन म्हणजे तेच तेच कथानक फिरवून फिरवून पैसे मिळवण्याचे साधन वाटले काय तुम्हाला?

अहो, या विद्यार्थ्यांनी उभा केलेला मंच वास्तव मांडणारा, तुमच्यासारखे फुटकळ विनोद सांगणारा नाही. आधीच आपल्याकडे विनोदी नटाला कुणी गांभीर्याने घेत नाही. त्यामुळे असेल कदाचित, सरकारने तुमच्या पद्मश्रीच्या तुणतुण्याकडे आजवर दुर्लक्ष केले असेल. असे काही बोललो तर हेसुद्धा गांभीर्याने विचार करणारे आहेत अशी जाणीव सरकारला होईल असे वाटले काय तुम्हाला? नको तिथे कडमडायला हा माधव वाटला काय तुम्हाला? अहो, तुमची भूमिका फक्त 'काम-ले, दाम-ले' एवढीच ठेवा ना! नको तिथे तोंड कशाला खुपसता? उद्या हेच विद्यार्थी तुमच्यावर तुटून पडले तर 'गेले दामले कुणीकडे' अशी अवस्था होईल तुमची.

माझ्या नाटकातल्या विनोदावर जे हसणार नाहीत त्यांनी ते बघायला येऊ नये असे तुम्ही म्हणू शकता काय? आहे हिंमत? समजा तुम्ही ती दाखवली व अर्धे नाट्यगृह खाली झाले तर मग काय कराल? स्वतःला तंबाखू मळत बसावे लागेल ना! तेव्हा दुसऱ्यांची चेष्टा करताना जरा जपून प्रशांतभौ! देशातल्या तरुणांचे दुःख तुम्हाला समजून घेता येत नसेल तर 'सुख म्हणजे नक्की काय असतं' या भसाड्या आवाजातल्या गाण्याला अर्थ काय? नाट्य परिषदेचे अध्यक्ष आहात तर जरा शिका थोरल्या साहेबांकडून, सार्वजनिक स्थळी कसे बोलायचे ते!

राजवाडे विचारविश्व

दक्षिणेत नवे स्वतंत्र (?) राज्य स्थापन

'मनुष्यमात्र म्हटले की त्याला काही तरी त्याच्या दृष्टीने सर्वोत्तम असे व्यसन असतेच. कोणी दारूबाज, कोणी अफूबाज, कोणी इष्कबाज, कोणी गप्पाबाज, कोणी कविताबाज, कोणी ब्रह्मासक्त, कोणी काही, कोणी काही, असे प्रत्येक मनुष्याला काही तरी जन्मसिद्ध व्यसन असते. तसे शहाजीला सेनेचे व्यसन होते आणि अशा सरदाराच्या सेवेत देह पडला तरी बेहेत्तर, अशी भावना शहाजीविषयी सैनिकांची असे', अशा शेलक्या भाषेत राजवाड्यांनी शहाजीराजा व त्याची सेना यांच्या परस्परसंबंधांची आवर्जून दखल घेतली आणि तशा निष्ठावान सेनेच्या बळावर त्याने पुढे कोणकोणत्या मोहिमा गाजवल्या, कोणाकोणाचे उट्टे काढले, कोणाकोणाला शह दिला, कोणाकोणाशी तह केला, याचे खूप विस्ताराने वर्णनही केले. ती सगळीच वर्णने जिज्ञासू अभ्यासकांनी मुळातूनच वाचावीत, अशी महत्त्वाची आहेत. उदाहरण म्हणून आणखी दोन-तीन उलथापालथींचाच तेवढा उल्लेख करून पुढील तात्त्विक विवेचनाकडेही लक्ष पुरवणे आवश्यक आहे.

शहाजीचा संबंध प्रारंभी जरी फक्त निजामशाहीशी व आदिलशाहीशी येत राहिला, तरी नंतर तो दिल्लीच्या मोंगलांशीही येत गेला, हे सांगून पुढे राजवाड्यांनी लिहिले, 'शक १५४९ मध्ये जहांगीर पातशहाचा मृत्यू झाल्यावर तोपर्यंत दक्षिणेतच माश्या मारीत बसलेला शहाजहान दिल्लीस गेला व तिकडे त्याने स्वतःला राज्याभिषेकही करून घेतला. किंचित स्थिरस्थावर झाल्यावर दक्षिणेच्या बंदोबस्ताचा विचार त्याच्या मनात येतो न येतो तेवढ्यात त्याच्याविरुद्ध खान जहान लोदी याने बंड पुकारले व दक्षिणेचा रस्ता धरला. जहांगीरच्या रियासतीत त्याची नोकरी दक्षिणेतच विशेष झाली होती, मलिकंबराशी व आदिलशाहीतील काही कारभाऱ्यांशी त्याचा स्नेहच नव्हे तर घरोबाहि जडला होता. मोंगलांच्या कचाटीतून निजामशाही प्रांत सोडविण्याच्या कामी मलिकंबराला अंतःस्थ मदत करून त्याने निजामशाहीतील मुत्सद्द्यांना व लढवय्यांना ऋणी करून ठेविले होते. बंड करून दक्षिणेत येण्यात त्याचा मतलब असा होता की, दक्षिणेतील निजामशहा, आदिलशहा व शहाजी या सर्वांना शहाजहानाविरुद्ध उठवून खुद्द दिल्लीचे तख्त उलथून पाडावे...'

'विशिष्ट हेतू मनात बाळगून खान जहान लोदी दक्षिणेत उतरला खरा, पण इकडे पोचतो तोच त्याला दौलताबादेत एक लहानशी क्रांति होत असलेली दिसली. मोंगलांशी मिळून निजामशाही बुडविण्याचा फतेखानाचा विचार आहे, अशा संशयावरून मूर्तिजाने मलिकंबराच्या त्या मुलाला नजरकैदेत ठेवले होते. तसाच संशय लखूजी जाधवरावाबद्दलही आल्यामुळे मूर्तिजाने लखूजी व त्याचा मुलगा अचलोजी यांचा खून करविला होता. त्याचा अनिष्ट परिणाम असा झाला की, परांडा प्रांतात लखूजीचा जावई जो शहाजीराजा त्याने निजामशहावर स्वारी केली, पुणे, संगमनेर हे पश्चिमेकडील प्रांत जप्त केले व स्वतंत्र राजाप्रमाणे तो नांदू लागला...'

'शहाजी निजामशाही गारद करून आपले एखादे स्वतंत्र राज्य स्थापील, अशी भीति आदिलशाही मुत्सद्द्यांना पडली. त्यामुळे वेळीच काटा काढून टाकण्याच्या हेतूने त्यांनी शहाजीवर सैन्यासह मुरार जगदेवाला धाडले. अशा दंगलीत कोणाचा आश्रय करावा ह्या विवंचनेने खान जहान लोदी यास घेरले. मूर्तिजा तर बोलूनचालून अर्धवट, खुनी व दुर्बल आणि आदिलशहाचे सूत्र मोंगलांकडे लागलेले, तेव्हा शहाजीचा आश्रय करण्यावाचून लोदीस गत्यंतर राहिले नाही. तो संगमनेरास शहाजीस येऊन मिळाला. त्या दोघांनी जुन्नर व संगमनेरपासून अहमदनगर व दौलताबादपर्यंतचा सर्व मुलूख व बालेघाटाजवळील सर्व प्रांत काबीज करून बहुतेक निजामशाही आटोपिली. फक्त राजधानी व पूर्वेकडील प्रांत तेवढा मूर्तिजाच्या हाती राहिला. लोदीच्या साह्याने शहाजींचा हा आक्रम पाहून आदिलशहाचे व शहाजहानचेहि धाबे दणाणले. शहाजीने बहुतेक सारी निजामशाही हाताखाली घातली, इतकेच नव्हे, तर भीमगड म्हणून मोडकळीस आलेला जुनाट किल्ला होता तो दुरुस्त करून व त्याचे नाव शाहगड असे बदलून त्या गडावर आपले मुख्य ठाणे स्थापित केले... दक्षिणेत एक नवीन स्वतंत्र राज्य स्थापिले गेले, असाच ह्या कृत्याचा अर्थ झाला...'

– आनंद हर्डीकर
anand47.hardikar@gmail.com

निवडणूकग्रस्तांचा नरसंहार

आपणच बळी असल्याचा कांगावा करतानाच इतरांचे अव्याहत बळी घेत राहायचे ही इस्रायली लबाडी. अध्यक्षांच्या राजकारणापलीकडील अमेरिकेस आता तरी ती लक्षात येईल...

अमेरिकेचे अध्यक्ष डोनाल्ड ट्रम्प यांचा इतका जाहीर अपमान त्यांच्या कडव्या प्रतिस्पर्ध्यांनीही आतापर्यंत कधी केलेला नाही. ते पुण्य इस्रायलचे पंतप्रधान नरसंहारी नेतान्याहू यांच्या नावे नोंदले जाईल. नेतान्याहू यांनी अमेरिकेचे अध्यक्ष डोनाल्ड ट्रम्प यांचा गाझा पट्टीसाठीचा शांतता प्रस्ताव जाहीरपणे फेटाळला. पश्चिम आशियात आणि त्यातही इस्रायल-गाझा पट्ट्यात शांतता नांदावी यासाठी अध्यक्ष ट्रम्प यांनी एक मार्गदर्शक गट स्थापन केला असून त्यातर्फे असा १५ कलमी शांतता प्रस्ताव इस्रायलला सादर केला गेला. नरसंहारी नेतान्याहू यांनी तो फेटाळला आणि वर ''शांतता प्रस्थापित व्हावी यासाठी आम्ही काय करावे याची प्रवचने कोणी देऊ नयेत'', असे विधान करून अमेरिकेचा- त्यातही विशेषतः ट्रम्प यांचा- पाणउतारा केला. आपण ज्या देशाच्या जिवावर टिकून आहोत त्या अमेरिकेस कोलवण्याइतके धैर्य नरसंहारी नेतान्याहू दाखवत असतील तर अमेरिकी नेतृत्वाचे पाणी इस्रायलने किती जोखले आहे ते दिसते. अवघ्या दोन महिन्यांपूर्वी अमेरिकी लोकप्रतिनिधींनी इस्रायलच्या 'मोसाद' या गुप्तहेर संघटनेच्या वाढत्या कारवायांविषयी आवाज उठवला होता. 'मोसाद' आता अमेरिकी यंत्रणा, अधिकारी यांच्यावरच पाळत ठेवत असावी आणि त्यांच्यावर हेरगिरी करत असावी अशी तक्रार या लोकप्रतिनिधींनी केली होती. त्याचा संबंध नरसंहारी नेतान्याहू यांच्या या वाढत्या आत्मविश्वासाशी निश्चितच असणार. यावरून; ट्रम्प यांस मुठीत ठेवण्यासाठी आवश्यक ऐवज इस्रायली गुप्तहेर यंत्रणांनी गोळा केला असेल; याची खात्री बाळगता येते. जे झाले ते केवळ अमेरिका-इस्रायल यांच्या संबंधांसाठीच नव्हे; तर संपूर्ण पश्चिम आशिया आणि जागतिक शांततेसाठी महत्त्वाचे असल्याने त्यावर भाष्य आवश्यक ठरते.

याचे कारण ट्रम्प आणि नरसंहारी नेतान्याहू या दोघांसाठी हे निवडणूक वर्ष आहे. इस्रायलमध्ये येत्या ऑक्टोबरात निवडणुका होतील तर अमेरिकी मध्यावधी निवडणुका त्यानंतरच्या महिन्यात. या दोन्ही नेत्यांसाठी या निवडणुका सर्वार्थाने निर्णायक ठरतील. त्यातही या निवडणुकांचे महत्त्व नरसंहारी नेतान्याहू यांच्यासाठी अधिक. कारण या निवडणुकीत त्यांचा पराजय झाला तर या नरसंहारी नेत्यास थेट तुरुंगाची हवा खावी लागू शकते. भ्रष्टाचाराच्या आरोपांखाली नखशिखान्त अडकलेल्या या इस्रायली पंतप्रधानास देश सतत युद्धग्रस्त हवा आहे. कारण अशा युद्धजन्य परिस्थितीत नैमित्तिक विषय मागे पडतात, देशप्रेमाच्या भावनेस हात घालता येतो आणि सर्व पापे झाकता येतात. तिकडे अमेरिकेत ट्रम्प यांच्या रिपब्लिकन पक्षाचा या मध्यावधी निवडणुकांत पराभव झाला तर अध्यक्षपदाचा उर्वरित काळ या विद्यमान अध्यक्षास पंगू होऊन व्यतीत करावा लागणार. हे झाले या दोन नेत्यांस भेडसावत असलेल्या परिस्थितीतील साम्य. ते तसे असले तरी या दोहोंचे हितसंबंध मात्र एकमेकांच्या विरोधात आहेत. म्हणजे आपण अमेरिकेच्या दबावासमोर कसे झुकलो नाही आणि शत्रूविरोधात किती ठाम भूमिका घेतली हे आपल्या देशातील मतदारांसमोर नरसंहारी नेतान्याहू दाखवू इच्छितात तर ट्रम्प यांची इच्छा याच्या बरोबर उलटी. पश्चिम आशियात आपण कशी शांतता निर्माण केली, इराणला नमवले, रशियाला झुकवले आणि इस्रायलला शांत केले हे दाखवण्यात ट्रम्प यांचे हित. त्यामुळे या दोन्ही निवडणूकग्रस्त नेत्यांमुळे पश्चिम आशियाचे संकट अधिकच गडद होण्याची शक्यता अधिक. ट्रम्प यांच्यासाठी आगामी निवडणुकांत अमेरिकेतील यहुदींचा पाठिंबा निर्णायक ठरेल.

नरसंहारी नेतान्याहू यांची भीड चेपलेली दिसते ती यामुळे. अमेरिकावासी यहुदी आणि त्यांची कारस्थाने हा नरसंहारी नेतान्याहू यांचा मोठा आधार. हे अमेरिकावासी यहुदी वित्त, मनोरंजन, माध्यमे आणि अर्थातच राजकारण अशा विविधांगी क्षेत्रांत मोठ्या प्रमाणावर असून विविध संघटनांद्वारे ते स्थानिक अमेरिकी यंत्रणांवर इस्रायलच्या बाजूने दबाव गट म्हणून काम करत असतात. या स्थानिक यहुदी गटांस कह्यात, नियंत्रणाखाली ठेवण्यात किती यश येते यावर अमेरिकी अध्यक्षांचे यशापयश मोजले जाते. अमेरिकेतील हे स्थानिक यहुदी गट इतके प्रभावशाली आहेत की अमेरिकेचे माजी अध्यक्ष बिल क्लिंटन यांच्याही संतापाचा कडेलोट त्यामुळे झाला होता. या अमेरिकी यहुदींच्या पाठिंब्यावर आडमुठेपणा करणाऱ्या नरसंहारी नेतान्याहू यांस उद्देशून क्लिंटन यांनी संतापून ''हू इज *** सुपरपॉवर हिअर'' अशी विचारणा केली होती. त्यांच्यानंतर या यहुदींना वेसण घालण्यात लक्षणीय यश आले ते फक्त बराक ओबामा यांना. त्यांच्या काळातही इस्रायली पंतप्रधानाने दांडगाई करण्याचा प्रयत्न केला. पण ओबामा यांनी त्यास भीक घातली नाही. त्याच काळात उपाध्यक्ष जो बायडेन इस्रायलच्या दौऱ्यावर असताना नरसंहारी नेतान्याहू यांनी इस्रायली फौजा गाझा पट्टीत घुसवल्या होत्या आणि आपल्या विस्तारवादी धोरणाची प्रचीती दिली होती. त्यांच्यानंतर इस्रायलला वेसण घालण्यात ट्रम्प यांस कसे अपयश आले, ते साऱ्या जगाने पाहिले. केवळ या नरसंहारी नेत्याच्या हट्टापोटी ट्रम्प यांनी अमेरिकेस इराणविरोधात युद्धात लोटले. त्यातून आपली मान सोडवणे ट्रम्प यांस अजूनही शक्य झालेले नाही. त्या युद्धात इस्रायल राहिला नामानिराळा; आता उलट अमेरिकाच अधिक अडकली. हा मुद्दा ट्रम्प यांच्यासाठी निवडणुकीत डोकेदुखी ठरणार, हे उघड.

> आपण ज्या देशाच्या जिवावर टिकून आहोत त्या अमेरिकेस कोलवण्याइतके धैर्य नेतान्याहू दाखवत असतील तर अमेरिकी नेतृत्वाचे पाणी इस्रायलने किती जोखले आहे ते दिसते. पण नेतान्याहूंप्रमाणेच ट्रम्प यांना सत्ता टिकवायची आहे, ही यातील मेख...

ही डोकेदुखी किती सहन करायची असा प्रश्न ट्रम्प यांस पडलेला असणार. याचे कारण ट्रम्प यांचे उपाध्यक्ष आणि आगामी अध्यक्षीय निवडणुकीतील रिपब्लिकन पक्षाचे उमेदवार ठरण्याची शक्यता असलेले जे. डी. व्हान्स यांनी इस्रायलविरोधात घेतलेली ठाम भूमिका. इस्रायल अमेरिकवासी यहुदींना हाताशी धरून जनमत आपल्या बाजूने वळवण्याचा प्रयत्न करत असल्याचा जाहीर आरोप व्हान्स यांनी अलीकडेच केला आणि स्वतःला हवे तितका काळ इस्रायल युद्ध सुरू ठेवू शकत नाही, अशी भूमिका घेतली. नरसंहारी नेतान्याहू यांच्या या युद्धखोरीमुळे त्याआधी ट्रम्प यांचाही संयम सुटला आणि 'माझ्यासारखा तुमचा समर्थक रक्षक आहे; म्हणून तुम्ही टिकून आहात' असे म्हणण्याची वेळ ट्रम्प यांच्यावर आली. तथापि उपाध्यक्ष व्हान्स आणि अध्यक्ष ट्रम्प यांच्या या इस्रायलविरोधी भूमिकांत फरक आहे. तो असा की नोव्हेंबरात रिपब्लिकनांस पराभव पत्करावा लागला तर त्याचे बालंट उपाध्यक्ष व्हान्स यांच्यावर नव्हे; तर अध्यक्ष ट्रम्प यांच्यावर येईल. त्यामुळे तेही नरसंहारी नेतान्याहू यांच्या युद्धखोरीस विटलेले असले तरी व्हान्स यांस असलेली मुभा त्यांना नाही. त्यांची अवस्था धरले तर चावते आणि सोडले तर पळते, अशी. त्याचाच पुरेपूर फायदा नरसंहारी नेतान्याहू उठवताना दिसतात.

गाझा पट्ट्यात 'हमास'चे पुरते निःशस्त्रीकरण झाल्याखेरीज शस्त्रसंधी नाही, शांतता करार नाही, अशी भूमिका ते घेतात. आंधळ्या इस्रायलभक्तांस त्यात गैर काय, असा प्रश्न पडेल. यात गैर हे की हमास निःशस्त्र झाली आहे की नाही हे ठरवण्याचा अधिकार इस्रायल स्वतःकडेच ठेवणार; हे. त्यासाठी कोणतीही तटस्थ यंत्रणा या नरसंहारी नेत्यांस मान्य नाही. हे म्हणजे स्वतःवरील आरोपांचा युक्तिवाद स्वतःच करायचा आणि त्यावरील निर्णयही स्वतःच द्यायचा, असे. इस्रायलचे वर्तन- त्यातही हा नरसंहारी नेता पंतप्रधान झाल्यापासून- असेच राहिलेले आहे. आपणच बळी असल्याचा कांगावा करतानाच इतरांचे अव्याहत बळी घेत राहायचे ही इस्रायली लबाडी. अध्यक्षांच्या राजकारणापलीकडील अमेरिकेस आता तरी ती लक्षात येईल. डेमॉक्रॅटिक पक्षाने इस्रायली भस्मासुराविरोधात भूमिका घ्यायला सुरुवात केलेली आहेच. रिपब्लिकनांसही त्याचे भय वाटले तरच निवडणूकग्रस्तांनी चालवलेला हा नरसंहार टळेल.

धर्मांतराचा कायदा की जातिव्यवस्थेची पुनर्बांधणी?

लेख

वैभव खरात
दिल्ली स्कूल ऑफ इकॉनॉमिक्स, नवी दिल्ली येथे समाजशास्त्र विभागात पीएचडी संशोधक
vaibhvkharat@gmail.com

> जेव्हा एखादी व्यवस्था जन्माने ठरलेली ओळख कायम ठेवू इच्छिते, तेव्हा स्वेच्छेने निवडलेली नवी ओळख तिला अस्वस्थ करू शकते. अशा व्यवस्थेला राज्याच्या सत्ताबळाने कायद्यांचा आधार देऊन स्वेच्छेच्या निर्णयांवर संशय घेणारे वातावरण निर्माण झाले, तर त्याचा परिणाम केवळ धर्मांतरावर नव्हे- व्यक्तीच्या विवेक-स्वातंत्र्यावर होईल...

महाराष्ट्र सरकारने धर्मांतरासंबंधी नवीन कायदा लागू केल्यानंतर लगेच सार्वजनिक आणि वैचारिक चर्चेत दोन स्पष्ट भूमिका दिसू लागल्या. एका बाजूला या कायद्याचे समर्थक म्हणतात की, हा कायदा सक्ती, फसवणूक आणि आमिष देऊन होणाऱ्या धर्मांतराला बंदी घालण्यासाठी आवश्यक आहे. दुसऱ्या बाजूला विरोधक प्रश्न उपस्थित करत आहेत की, हा कायदा व्यक्तीच्या विवेक-स्वातंत्र्यावर आणि भारतीय राज्यघटनेने दिलेल्या धर्म-स्वातंत्र्यावर परिणाम करतो. तिसरी भूमिका विरोधाची वा पाठिंब्याचीही नाही. ती समाजशास्त्रीय भूमिका अशी की, कायद्याचे मूल्यमापन केवळ त्याच्या शब्दांवरून न करता त्या कायद्याच्या मागे समाजातील, राज्याची कोणती भीती, कोणते सत्तासंबंध, राजकारण आणि कोणत्या ऐतिहासिक स्मृती कार्यरत आहेत हे पाहणे अधिक महत्त्वाचे असते. हा लेख या कायद्याचे कायदेशीर विश्लेषण करण्यासाठी नाही; तर आपल्या समाजाच्या मनोवस्थेचा अभ्यास करण्याचा प्रयत्न आहे.

भारतात २०१४ च्या नंतर धर्मांतराची भीती इतकी तीव्र का झाली आहे? एखाद्या व्यक्तीने आपला धर्म बदलण्याचा निर्णय घेतला की, तो केवळ वैयक्तिक राहत नाही, तर तो राजकीय आणि सामाजिक वादाचा विषय कसा बनतो? या प्रश्नांची उत्तरे शोधण्यासाठी आपल्याला इतिहासात जावे लागेल. भारतीय समाजात 'धर्म' हा केवळ श्रद्धेचा विषय नाही. तो सामाजिक स्थान ठरवणारी रचना आहे. जन्म कोणत्या जातीत झाला, कोणाच्या घरी जेवायचे व जायचे, कोणत्या हातून पाणी प्यायचे आणि कोणाला पाणी पाजायचे, कोणते काम करायचे, कोणाशी विवाह करायचा या सर्व गोष्टींवर धर्माच्या नावाने आजसुद्धा वैधता आहे. म्हणूनच डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांनी त्यांच्या 'जातीचे निर्मूलन' यामध्ये वारंवार सांगितले आहे की, ''जात ही केवळ सामाजिक संस्था नाही; ती धार्मिक मान्यतेने टिकवून ठेवलेली व्यवस्था आहे.'' त्यामुळे अनेकांसाठी धर्मांतर म्हणजे श्रद्धेचा बदल नसून सामाजिक स्थान बदलण्याचा प्रयत्न असतो. नागपूरच्या दीक्षाभूमीवर बाबासाहेबांनी बौद्ध धम्म स्वीकारला, तो फक्त एक धार्मिक क्षण नव्हता. समाजशास्त्राचे अभ्यासक त्या घटनेला भारतीय इतिहासातील सर्वात मोठ्या नैतिक आणि सामाजिक कृतींपैकी (मॉरल अँण्ड सोशल अॅक्शन्स) एक समजतात. लाखो लोकांनी धर्म बदलला; पण त्यांनी कोणावर आक्रमण केले नाही, कोणाकडून सत्ता हिसकावून घेतली नाही. कुणाला फसवून, आमिष, लालूच देऊन धर्मांतर करण्यास भाग पाडणाऱ्यांपैकी डॉ. आंबेडकर नव्हते. त्यांनी केवळ इतकेच सांगितले की, 'आम्हाला मनुष्य म्हणून जगण्याचा अधिकार हवा आहे,' आणि कदाचित याच कारणामुळे ७० वर्षांपूर्वीचे ते धर्मांतर आजही बऱ्याच समाजातील वर्गांना अस्वस्थ करते, कारण त्या धर्मांतराने केवळ धर्म बदलला नाही; तर समाजातील श्रेणीबद्धतेच्या नैतिक वैधतेवरच प्रश्न उपस्थित केला.

जर धर्म किंवा समाजच विषमता आणि असमानतेवर उभा असेल, तर त्या समाजाला एकत्र ठेवणाऱ्या धार्मिक रचना समानतेलाही विरोध करतात. आणि जरी तो धर्म सामाजिक ऐक्य निर्माण करत असला तरी 'ते ऐक्य कोणाच्या किमतीवर आणि डोक्यावर उभे आहे?' हा प्रश्न उरतो. यामुळेच भारतात प्रत्येक सामाजिक समूह वेगवेगळे ठरतात, जरी ते एका धर्माचे असले तरीसुद्धा. हे वेगवेगळे समूह म्हणजे वेगवेगळ्या जाती. अनेक वेळा धर्म आणि जात यांचे नाते इतके घट्ट वाटू लागते की धर्मांतर हे व्यक्तीच्या अंतःकरणातील, सद्विवेक- निर्णयापेक्षा सामाजिक बंड वाटू लागते.

त्यामुळे धर्मांतराला विरोध हा केवळ धार्मिक श्रद्धेच्या संरक्षणाचा प्रश्न नाही; तर तो प्रस्थापित सामाजिक रचनेच्या संरक्षणाबाबतचाही प्रश्न ठरतो. यामुळेच हा कायदा वाचताना आपण याचाही विचार केला पाहिजे की, राज्याला (महाराष्ट्र) नेमकी कोणती भीती आहे? सक्तीने होणाऱ्या धर्मांतराची, की स्वेच्छेने विवेकाच्या आधारावर घेतलेल्या निर्णयांची? कारण भारतीय राज्यघटना प्रत्येक नागरिकाला विवेक-स्वातंत्र्य व धर्म-स्वातंत्र्य देते. व्यक्तीला श्रद्धा आणि विश्वास ठेवण्याचा अधिकार आहे; तितकाच तो बदलण्याचासुद्धा आहे. अर्थात फसवणूक, धमकी किंवा सक्तीला कोणत्याही लोकशाहीत स्थान असू शकत नाही. पण स्वेच्छा आणि सक्ती यांच्यामधील सीमारेषा कोण आखणार? आणि ती आखताना राज्य व्यक्तीच्या अंतःकरणात कितपत प्रवेश करू शकते? हीच या कायद्याची खरी चाचणी ठरणार आहे.

कदाचित राज्य धर्मांतर रोखण्यासाठी संख्याबळावर कायदे सहजतेने करू शकते. पण 'एखाद्या व्यक्तीला स्वतःचा धर्म सोडण्याची वेळच का येते?' हा प्रश्न राज्य कधीच करत नाही. जर समाजात वैयक्तिक अस्मिता, समान प्रतिष्ठा, न्याय आणि बंधुता प्रत्यक्षात अस्तित्वात असती, तर धर्मांतराच्या प्रश्नाला इतकी तीव्रता मिळाली असती का? कदाचित यामुळेच बाबासाहेबांनी धर्मांतराकडे पलायन म्हणून पाहिले नाही तर त्यांनी त्याला एक 'नैतिक पुनर्जन्म' मानले. त्यांनी धर्म बदलला कारण त्यांना माणूस म्हणून जगण्याची नवी भाषा हवी होती. आज महाराष्ट्र पुन्हा धर्मांतरावर चर्चा करत आहे. परंतु आपण केवळ धर्मांतरावर चर्चा करणार आहोत, की धर्मांतर घडवून आणणाऱ्या सामाजिक परिस्थितीवरही? हा प्रश्न राज्यासाठी महत्त्वाचा असायला हवा.

भारतीय राज्यघटनेच्या कलम २५ मध्ये प्रत्येक नागरिकाला विवेकाचे, धर्माचा प्रचार व प्रसार करण्याचे स्वातंत्र्य दिले आहे. या अधिकारावर सार्वजनिक सुव्यवस्था, नैतिकता आणि आरोग्य यांच्या आधारावर काही मर्यादा घालता येतात. त्यामुळे फसवणूक, धमकी किंवा बळजबरीने धर्मांतराला विरोध करणे ही लोकशाहीचीही जबाबदारी आहे. परंतु येथे एक अधिक गुंतागुंतीचा प्रश्न उभा राहतो तो म्हणजे स्वेच्छा म्हणजे काय? उदाहरणार्थ, एखादी दलित स्त्री जर जातीय अपमानाच्या अनुभवातून; दुसरा एखादा धर्म स्वीकारत असेल, तर तो निर्णय तिच्या विवेकाचा आहे की सामाजिक परिस्थितीने घडवलेला आहे? किंवा एखादा आदिवासी आपल्या आयुष्याला नवा अर्थ देण्यासाठी दुसरा धर्म स्वीकारत असेल, तर ते 'आमिष' आहे की सामाजिक सन्मानाच्या शोधाचा प्रवास? कदाचित या प्रश्नांची उत्तरे राज्याच्या चौकशीत किंवा प्रशासकीय फॉर्ममध्ये मिळू शकत नाहीत. अशातच मिशेल फुको यांचे विश्लेषण महत्त्वाचे वाटते. फुको म्हणतो की, ''आधुनिक सत्ता केवळ शिक्षा, आरोग्य, निवारा, संरक्षण देत नाही; तर ती नागरिकांच्या वैयक्तिक जीवनात प्रवेश करते आणि स्वतःकडे सत्ता कायम राहावी म्हणून त्यांचे निरीक्षण (सर्व्हेलन्स) करून त्यांना 'सामान्य' व 'अपसामान्य' चौकटीत नेहमी बसवत असते, आणि हे सर्व होते प्रशासकीय दस्तावेजांच्या माध्यमातून''! त्यामुळे धर्मांतरासंबंधी पूर्वसूचना, परवानग्या किंवा प्रशासकीय देखरेखीच्या व्यवस्था केवळ कागदोपत्री प्रक्रिया नसणार आहेत, त्याद्वारे व्यक्तीच्या अंतःकरणातील निर्णयालाही सार्वजनिक नियंत्रणाच्या क्षेत्रात आणून, त्याच्या वैयक्तिक विवेक आणि आवडीवर निर्बंध लादण्याचा राज्याकडून पुरेपूर प्रयत्न केला जाईल. म्हणजे नेमके काय? जातिव्यवस्थेला अगोदर धार्मिक शास्त्राचा घट्ट आधार होता, आता तो राज्याच्या अंतर्गत कायदेशीर असेल. राज्याचे सर्वच कायदे चुकीचेच नसतात. परंतु लोकशाहीत प्रत्येक कायद्याला प्रश्न विचारणे आवश्यक असते. कारण विवेक हा मुळात वैयक्तिक असतो आणि धर्मातून नव्हे तर स्वतःच्या बुद्धिमत्तेच्या आधारावर केलेल्या विश्लेषणातून निर्माण होतो. कदाचित राज्य हे नागरिकाच्या धार्मिक कृतीचे परीक्षण करू शकते; पण नागरिकाच्या श्रद्धेच्या प्रामाणिकतेचे मोजमाप कोणत्या निकषावर करणार? प्रश्न विचारणारा भारत!

धर्मांतराच्या चर्चेत आणखी एक विरोधाभास दिसतो. भारतातील सामाजिक इतिहासात अनेक शतकांपासून विविध धार्मिक परंपरांमध्ये विचारांची देवाणघेवाण झाली. भक्ती चळवळीने कर्मकांडाला प्रश्न विचारले. बौद्ध, जैन, लिंगायत, शीख आणि इतर परंपरांनी प्रस्थापित धार्मिक रचनांना पर्याय दिले. या सर्व प्रक्रियांमुळे भारतीय संस्कृती समृद्ध झाली. मग आज धर्मांतराकडे केवळ संशयाच्या दृष्टीने का पाहिले जाते? कारण याचे उत्तर धर्मात नाही तर आपल्या समाजरचनेत आहे. आपली समाजरचना म्हणजे जातिव्यवस्था, यात किंचितही शंका नसावी. जातिव्यवस्थेचा पाया जन्मावर आधारित आहे. जेव्हा एखादी व्यवस्था जन्माने ठरलेली ओळख कायम ठेवू इच्छिते, तेव्हा स्वेच्छेने निवडलेली नवी ओळख तिला अस्वस्थ करू शकते. म्हणूनच धर्मांतराचा प्रश्न केवळ 'धर्म बदलला का?' इतकाच नसतो. खरा प्रश्न असा आहे की, 'एखाद्या व्यक्तीला आपले जीवन नव्याने रचण्याचा अधिकार आहे का?' लोकशाही असलेल्या राज्यामध्ये या प्रश्नाचे उत्तर 'होय' असेच असले पाहिजे. कारण संविधान नागरिकाला केवळ मतदानाचा अधिकार देत नाही; ते त्याला विचार करण्याचा, श्रद्धा ठेवण्याचा आणि आवश्यक वाटल्यास ती बदलण्याचाही अधिकार देते. निश्चितच, कोणत्याही प्रकारची फसवणूक, दबाव किंवा हिंसा स्वीकारता येणार नाही. परंतु स्वेच्छेच्या निर्णयांवर संशय घेणारे वातावरण निर्माण झाले, तर त्याचा परिणाम केवळ धर्मांतरावर होणार नाही; तो व्यक्तीच्या विवेक-स्वातंत्र्यावर होईल.

म्हणून आपण कोणत्या प्रकारच्या समाजाची निर्मिती करू इच्छितो? असा समाज, जिथे नागरिकांच्या अनुभवावर राज्याचा संशय असेल? की असा समाज, जिथे राज्य नागरिकांच्या विवेकावर बंदी घालण्याचा प्रयत्न करेल? की जातिव्यवस्थेची पुनर्बांधणी करेल? धर्मांतरविरोधी कायद्यांवरील खरी चर्चा या प्रश्नापासून सुरू झाली पाहिजे.

अन्वयार्थ

महामार्गांवरील 'मिसिंग' मुद्दे

मुंबई-पुणे द्रुतगती मार्गाला खऱ्या अर्थाने द्रुत करणाऱ्या 'मिसिंग लिंक'वरच्या वेगाचा बळी केवळ दुर्दैवी म्हणता येणार नाही. या 'मिसिंग लिंक'वर- किंवा राज्यातल्या, देशातल्या अन्य महामार्गांवरही- वाहनचालकांनी पाळायचे नियम आणि त्या नियमांची अंमलबजावणी करणारी प्रभावी यंत्रणा हे दोन्ही 'मिसिंग' असतील, तर अशा अभावातून होणारे उत्पातही आतापासूनच दिसू लागले आहेत. हा जोडरस्ता सुरू होऊन जेमतेम तीन महिने होत नाहीत, तोवर गेल्या आठवड्यातल्या भीषण अपघातात कारचा चेंदामेंदा होऊन एका तरुणाचा बळी गेला. यानिमित्ताने महामार्ग सुरक्षा, वेग, चालक मानसिकता आणि महामार्गांवर अपेक्षित वाहनचलन शिष्टाचार यांबाबत जे प्रश्न उपस्थित झाले आहेत, त्यावर भाष्य आवश्यक ठरते.

'मिसिंग लिंक'वरच्या अपघातामध्ये मालवाहू टेम्पोला धडकलेल्या 'एसयूव्ही'ची गती १५० किलोमीटर प्रति तास इतकी असल्याचे चौकशीत उघड झाले. या जोडरस्त्याच्या बोगद्यांमध्ये ८० किलोमीटर प्रति तास वेग ठेवण्याबाबतचे इलेक्ट्रॉनिक फलक विशिष्ट अंतरांवर आहेत. तरीही वेगाचे उल्लंघन होते आणि तेही जवळपास दुप्पट वेगाने. तसे ते द्रुतगती मार्गाच्या इतर टप्प्यांतही होतच असते. आता राज्य रस्ते विकास महामंडळ (एमएसआरडीसी) म्हणते आहे, की वेगाचे उल्लंघन करणाऱ्यांवर देखरेखीकरिता विशेष कॅमेरे लावू. अशी देखरेख-व्यवस्था ही वास्तविक 'मिसिंग लिंक' उभारणीची पूर्वअट असायला हवी होती, असे एमएसआरडीसी आणि महामार्ग पोलिसांना का वाटले नसावे? आता या कॅमेऱ्यांचा उपयोग ते लावल्यानंतर कारवाई किती होते, यावरच अवलंबून राहील.

या अपघाताने आणखी एक मुद्दा उपस्थित केला, तो म्हणजे बंदी असूनही मालवाहू टेम्पो 'मिसिंग लिंक'वर आलाच कसा? मालवाहू व्यावसायिक वाहनांनी जुन्या घाटातून जाणेच अपेक्षित असताना हे घडले. 'मिसिंग लिंक' सुरू झाल्यापासूनच असे घडते आहे. महामार्ग पोलिसांच्या आकडेवारीनुसार गेल्या तीन महिन्यांत मिसिंग लिंकवरील बंदीचे उल्लंघन करणाऱ्या ६२९ अवजड वाहनांवर कारवाई करून ई-चलानद्वारे ७.३८ लाखांचा दंड वसूल केला गेला. म्हणजे दररोज सरासरी सात अवजड वाहने, हा फक्त कारवाई झालेला आकडा. असे बरेच असू शकतात. त्यासाठी 'मिसिंग लिंक'च्या बऱ्याच अलीकडेपासून हा मार्ग अवजड वाहनांसाठी नसल्याचे सांगणारी व्यवस्था असणे किती गरजेचे आहे, हे अधोरेखित होते आहे.

परवाच्या रविवारी समृद्धी महामार्गावर घडलेल्या घटनेने या चर्चेला आणखी एक आयाम दिला. एका ट्रेलरवर कारवाई झाली, तर चालक ट्रेलरच रस्त्यात आडवा घालून, महामार्गच अडवून पळून गेला. चलानचे पैसे भरल्यावरही गाडीची कागदपत्रे दिली गेली नाहीत आणि अडवून ठेवले गेले, म्हणून हे कृत्य झाल्याचे दावे आता केले जात आहेत. पण मुळात हा ट्रेलर महामार्गावर थांबायची परवानगी नसतानाही थांबला. अशा थांबलेल्या अवजड वाहनांवर मागून येऊन गाड्या आदळल्याने होणारे अपघातही बरेच आहेत. हाही वाहनचलन शिष्टाचार, संकेतांची पायमल्ली करण्याचाच भाग. त्यामुळे वेगमापक कॅमेरे, वाहन परवाने रद्द करणे, गुन्हे दाखल करणे, आदी उपाययोजनांच्या जंत्रीबरोबर या वर्तनदोषावरही बोट ठेवणे क्रमप्राप्त.

महामार्गावरील मोकळा आणि गुळगुळीत रस्ता म्हणजे अॅक्सिलरेटरवर पाय दाबून कितीही वेग वाढविण्याची मोकळीक नव्हे. प्रशस्त, आलिशान चारचाकी गाड्यांत खिडक्या बंद करून बसल्यावर वेगाचे भान राहत नाही, हा त्यावरचा प्रतिवाद अत्यंत बेमुर्वत. लहान, कमी क्षमतेच्या चारचाकींनाही अनेकदा वेगाचा वारू खुणावतो, तोही गंभीर. चारचाकीत बसल्यावर फक्त चालकाने नव्हे, तर सर्वांनी सीटबेल्ट लावणे वगैरे मूलभूत नियमांची ऐशीतैशी होत राहते. हेही चारचाकी खरेदीची ऐपत आल्यानंतरही ती चालवण्याचे आणि त्यातून प्रवास करण्याचेही शास्त्र असते, या समजेच्या अभावाचे लक्षण.

अर्थात, वेगाचे आणि अन्य नियमांचे पालन केल्यानंतरही अनेक महामार्गांवरील रस्त्यांची दयनीय स्थिती आणि त्यामुळे होणारे अपघात याबाबत त्या-त्या यंत्रणांनी उत्तरदायित्व घेणे घडताना दिसत नाही, हेही खरेच. नियमभंगाच्या कारवाईवेळी, सावज सापडल्याचा आनंद होणाऱ्या यंत्रणा रस्त्यांच्या अवस्थेची जबाबदारी घ्यायला पुढे येतील, तो सुदिन. सध्या हेही 'मिसिंग' आहे.

एआय, ड्रोन, सायबर युद्ध... 'भविष्यातील युद्धतंत्र' अभ्यासक्रम कसा आहे?

विश्लेषण

अनिकेत साठे
aniket.sathe@expressindia.com

> सैन्यदलांना आधुनिक युद्धासाठी सज्ज करण्यासाठी निर्मिलेल्या 'भविष्यातील युद्धतंत्र' अभ्यासक्रमाच्या चौथ्या तुकडीच्या प्रशिक्षणास नवी दिल्लीत नुकतीच सुरुवात झाली. या अभ्यासक्रमात नवे काय आहे?

'भविष्यातील युद्ध' वेगळे कसे?

युद्धाचे स्वरूप पुढील दोन दशकांत कसे असेल, याविषयी विविध पातळ्यांवर अभ्यास होत आहे. अमेरिकेच्या 'नॅशनल इंटेलिजन्स कौन्सिल'च्या अहवालानुसार भविष्यातील युद्धे केवळ अग्नी क्षमतेवर नव्हे तर, माहिती आणि विदा संकलनावर आधारित असतील. माहिती गोळा करणे आणि अचूक निर्णय घेणे यावर त्यांचे यश अवलंबून असेल. शत्रूच्या हालचालींवर २४ तास लक्ष ठेवले जाईल. यामुळे माहिती प्रणाली, सॅटेलाइट, जीपीएस यावर सायबर अथवा 'इलेक्ट्रॉनिक जॅमिंग'द्वारे हल्ल्याचा धोका वाढेल. हायपरसॉनिक शस्त्रांचा वापर होईल. लेसर, मायक्रोवेव्ह यासारखी निर्देशित शस्त्रे संरक्षणासाठी वापरली जातील. जमिनीवर, मानवरहित वाहनांचा वापर वाढेल. अनेक ड्रोन्स एकत्र येऊन, प्संवाद साधून, परिस्थितीनुसार स्वतःची रणनीती बदलून हल्ला करतील. कृत्रिम बुद्धिमत्तेचा वापर इतका वाढेल की, मानवी हस्तक्षेपाशिवाय स्वतःच लक्ष्य ठरवून हल्ला करणारी स्वायत्त शस्त्रे युद्धभूमीवर दिसू शकतील. थेट युद्धाऐवजी छुप्या युद्धपद्धतींचा वापर वाढेल.

भारतीय अभ्यासक्रमाचे महत्त्व काय?

तिन्ही सैन्यदलांसाठी भारताच्या एकात्मिक संरक्षण दल मुख्यालयाने विकसित केलेला 'भविष्यातील युद्धतंत्र' हा अभ्यासक्रम पावणेदोन वर्षांपूर्वी सुरू झाला. आता त्यामध्ये सैन्यदलांबरोबर प्रमुख संरक्षण संस्थांमधून प्रतिसाद वाढत आहे. यातून आधुनिक युद्धाचे संचालन आणि तांत्रिक पैलूंची ओळख करून दिली जाते. कृत्रिम बुद्धिमत्ता, यंत्रमानव, 'हायपरसॉनिक' यांसारख्या विकसित होणाऱ्या युद्धतंत्रांच्या प्रतिमानांवर विशेष भर दिला जातो. तंत्रज्ञानात होणारे बदल, जागतिक घडामोडी, नव्याने उद्भवणारे धोके लक्षात घेता तिन्ही सैन्यदलांसाठी अशा अभ्यासक्रमाची आवश्यकता होती. यातून जटिल परिस्थितीचा सामना, नवतंत्रज्ञानाचा लाभ आणि नावीन्यपूर्ण डावपेचांशी जुळवून घेण्यास अधिकारी सुसज्ज होतील. अनिश्चित वातावरणात राष्ट्रीय हितसंबंध राखण्यात, भविष्यवादी व तंत्रस्नेही शक्तीच्या विकासात याचा उपयोग होणार आहे. यात भू-राजकीय परिस्थिती, उदयोन्मुख तंत्रज्ञान, सायबर युद्ध आणि तंत्रज्ञान-सक्षम युद्ध आदी विषयांवर विचारविनिमय केला जाईल, असे संरक्षण मंत्रालयाने म्हटले आहे.

'सीडीएस' काय म्हणाले?

अभ्यासक्रमाच्या यंदाच्या तुकडीच्या उद्घाटन सत्रात भारतीय सैन्यदलांचे संरक्षणप्रमुख (सीडीएस) जनरल एन. एस. राजा सुब्रमणी यांनी युद्धतंत्राचे बदलते स्वरूप आणि लष्करी कारवायांवर प्रगत तंत्रज्ञानाचा वाढता प्रभाव याकडे लक्ष वेधले. भविष्यातील संघर्षांना तोंड देण्यात कृत्रिम बुद्धिमत्ता, सायबर सज्ज क्षमता, स्वायत्त यंत्रणा, माहितीपूर्ण युद्धतंत्र, अंतराळ तंत्रज्ञान आणि विदाचलित (डेटा) निर्णय प्रक्रिया या घटकांचे महत्त्व त्यांनी अधोरेखित केले. राष्ट्रीय संरक्षण सज्जता मजबूत करण्यासाठी सैन्य दल, उद्योग, शिक्षण क्षेत्र व संशोधकांत समन्वय, एकात्मता आणि सहकार्य असण्याची आवश्यकता मांडण्यात आली.

या अभ्यासक्रमाने समन्वय वाढेल?

लष्करातील मेजर ते मेजर जनरल आणि नौदल व हवाई दलातील त्यांच्या समकक्ष स्तरावरील अधिकाऱ्यांसाठी हा अभ्यासक्रम आहे. या अभ्यासक्रमाने आपले पदनिरपेक्ष वैशिष्ट्य कायम राखल्यामुळे मेजर ते मेजर जनरल आणि त्यांच्या समकक्ष अधिकाऱ्यांमध्ये मोकळ्या आणि आंतर-पद संवादाला प्रोत्साहन मिळेल. या अभ्यासक्रमात उद्योग आणि सैन्यदलात संवाद घडतो. यातून खासगी कंपन्यांना तिन्ही दलांच्या कार्यात्मक गरजांविषयी प्रत्यक्ष माहिती मिळवणे शक्य होऊ शकते.

प्रभावी सामाईक कारवाईची तयारी

तिन्ही दलांच्या क्षमता एकत्रित करणारा एकात्मिक युद्ध विभाग अर्थात 'थिएटर कमांड' स्थापण्याची प्रक्रिया प्रगतिपथावर आहे. या विभागात तिन्ही दलांतील अधिकारी एका छताखाली काम करतील. यामध्ये सामाईक लष्करी कारवाईसह पुरवठा व्यवस्था, वाहतूक, दळणवळणाची संयुक्त व्यवस्था आणि एकत्रित प्रशिक्षणाचाही समावेश आहे. 'भविष्याकालीन युद्धतंत्र' हा अभ्यासक्रम त्याचाच एक भाग. आधुनिक युद्धात एकात्मिक दृष्टिकोन महत्त्वाचा ठरतो. प्रभावी सामाईक कारवाईसाठी तीनही दलांत समन्वय वाढवा, म्हणूनच एका दलातील अधिकारी दुसऱ्या दलात (क्रॉस पोस्टिंग) नियुक्तीतून उत्कृष्ट कार्यपद्धती विकसित करण्याचा प्रयत्न होत आहे. तमिळनाडूच्या वेलिंग्टन येथील संरक्षण सेवा कर्मचारी महाविद्यालयात संयुक्तपणे विशेष लष्करी शिक्षण घेणाऱ्या 'पर्पल' अधिकाऱ्यांची संख्याही वाढत आहे.

दैनिक जागरण

अंतर्मन की आवाज सदैव सही राह दिखाती है

छात्र हित की अनदेखी

जब किसी समस्या-शिकायत पर समय रहते सही तरह ध्यान नहीं दिया जाता, तब उसके कैसे नतीजे होते हैं, यह पहले दिल्ली में काकरोच जनता पार्टी के संसद मार्च के दौरान देखने को मिला और फिर रांची में छात्रों के विधानसभा मार्च में। दिल्ली की तरह रांची में पुलिस को बल प्रयोग करना पड़ा, क्योंकि भीड़ पुलिस बैरिकेड तोड़कर आगे बढ़ रही थी। निःसंदेह रांची में छात्रों की भीड़ की तुलना जंतर-मंतर पर सीजेपी के नेतृत्व में जुटी भीड़ से नहीं की जा सकती, क्योंकि दिल्ली में भीड़ में कुछ अराजक तत्व भी शामिल थे। इसके बावजूद इस तथ्य को भी अनदेखा न किया जाए कि पुलिस के पास उस समय बल प्रयोग के अलावा और कोई चारा नहीं रहता, जब कोई समूह किसी निषिद्ध क्षेत्र में जाने की जबरन कोशिश करता है। समस्या यह है कि जब तक कोई आंदोलनरत समूह शांतिपूर्ण रहता है, तब तक सरकारें उसकी परवाह नहीं करतीं। दिल्ली में संसद मार्च और रांची में विधानसभा के घेराव की नौबत नहीं आती, यदि दोनों जगह सरकारें समय पर सक्रियता और संवेदनशीलता दिखातीं।

रांची में राज्य सरकार की ओर से आयोजित परीक्षाओं में अनियमितता को लेकर झारखंड के छात्र 15 दिनों से अधिक समय से धरना-प्रदर्शन कर रहे थे, लेकिन झारखंड मुक्ति मोर्चा के नेतृत्व वाली सरकार तब चेती, जब उसे लगा कि आक्रोशित छात्रों की संख्या बढ़ती जा रही है और वे अपनी मांगों से पीछे हटने वाले नहीं है। उसने छात्रों के दबाव में उनके प्रतिनिधियों से वार्ता करके यह दावा किया कि उनकी 98 प्रतिशत मांगें मान ली गई हैं, लेकिन छात्र इस दावे को नकार रहे हैं, क्योंकि परीक्षाओं में धांधली की सीबीआइ जांच की उनकी मांग नहीं मानी गई। समझना कठिन है कि जब राज्य सरकार परीक्षाओं में धांधली की जांच कर ही रही है और प्रथमदृष्टया यह सिद्ध हो गया है कि परीक्षाओं में अनियमितता हुई, तब फिर उसे इसकी जांच सीबीआइ से कराने में क्या हर्ज है? यदि केंद्र सरकार काकरोच जनता पार्टी के दबाव में शिक्षा मंत्री का त्यागपत्र ले सकती है, तो झारखंड सरकार परीक्षाओं में गड़बड़ी की सीबीआइ जांच की तार्किक मांग मानने से क्यों इन्कार कर रही है? पता नहीं क्यों सरकारें यह समझने के लिए आसानी से तैयार नहीं होतीं कि जायज मांगों के प्रति केवल संवेदनशील दिखना ही पर्याप्त नहीं होता, बल्कि कुछ ठोस कदम भी उठाने पड़ते हैं। इससे ही आक्रोश शांत होता है और पीड़ित लोगों में न्याय मिलने का भरोसा पैदा होता है। यदि झारखंड सरकार छात्रों का भरोसा हासिल नहीं कर सकी तो इसके लिए वही जिम्मेदार है। वह इसके लिए भी जिम्मेदार है कि छात्रों के आंदोलन को लेकर दलगत राजनीति शुरू हो गई और पुलिस बल प्रयोग भी एक मुद्दा बन गया।

निर्माण कार्यों की गुणवत्ता

उत्तराखंड सरकार के सख्त निर्देशों के बावजूद विभागों की कार्यप्रणाली में अपेक्षित सुधार नजर नहीं आ रहा है। नंदा की चौकी में टौंस नदी पर नवनिर्मित पुल की एप्रोच रोड क्षतिग्रस्त होने के मामले में यही देखने को मिला। लोक निर्माण विभाग के स्तर से तकनीकी खामियों को नजरअंदाज करना भारी पड़ा। परिणामस्वरूप एप्रोच रोड क्षतिग्रस्त होने पर विभाग के संबंधित अधिकारियों पर कार्रवाई की गाज गिरी। सवाल यह है कि मुख्यमंत्री पुष्कर सिंह धामी स्वयं समीक्षा के दौरान विभागों को निर्माण कार्यों की गुणवत्ता सुनिश्चित करने के निर्देश देते रहे हैं। यही नहीं, ऐसे मामलों में लापरवाही बरतने वालों के विरुद्ध मुख्यमंत्री के कड़े रुख के बाद विभाग को त्वरित कार्रवाई करनी पड़ी है। बेहतर यही होगा कि इस प्रकार की लापरवाही को लेकर समय रहते सजगता बरती जाए। कैग अपनी रिपोर्ट में निर्माण कार्यों की गुणवत्ता पर सवाल उठाता रहा है। लोक निर्माण विभाग की परियोजनाओं की ड्राइंग में तकनीकी खामियों को सामने रखा जा चुका है। विभाग को इसे गंभीरता से लेने की आवश्यकता है। आमजन की यह शिकायत अक्सर रहती है कि नई बनीं कई सड़कें बरसात के मौसम में क्षतिग्रस्त हो रही हैं। नई बनी सड़कों को भी तुरंत ही यदि बदहाली से जूझना पड़े तो ऐसे मामलों में भी जवाबदेही सुनिश्चित की जानी चाहिए। विभाग के लिए आवश्यक है कि वह अपने निगरानी तंत्र को चुस्त-दुरुस्त करे। थर्ड पार्टी निगरानी की व्यवस्था इसी कारण की गई है, लेकिन लगता है कि इस व्यवस्था को भी अधिक पारदर्शी और जवाबदेह बनाना होगा।

जनता की गाढ़ी कमाई के दुरुपयोग को रोकने के लिए निर्माण कार्यों की गुणवत्ता जरूरी है

सुधार की मांग करता लोकतंत्र

डा. एके वर्मा

विपक्ष जहां मोदी-हटाओ एजेंडे में लिप्त हैं, वहीं सत्तापक्ष और खासकर भाजपा प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी की स्वीकार्यता के पीछे छुपे हैं

बिहार, मध्य प्रदेश और गुजरात में एक-एक विधानसभा सीटों के उपचुनावों में तीन राजनीतिक दलों को सफलता प्राप्त हुई। बिहार की बांकीपुर में जन सुराज पार्टी की जीत से इस दल की बोहनी हुई तो मध्य प्रदेश की दतिया को कांग्रेस और गुजरात की मांजलपुर को भाजपा ने अपने पास बरकरार रखा। यह भारतीय लोकतंत्र की परिपक्वता का प्रतीक है और चुनावों की शुचिता का संकेत भी। चुनाव ही सरकार चुनने का लोकतांत्रिक तरीका है। लोकतंत्र तो एक व्यवस्था है, जिसमें नीतियों और कानूनों का निर्माण, विकास परियोजनाएं, लोक कल्याण के प्रतिमान, वित्तीय संसाधन जुटाने और उनके समुचित प्रयोग तथा सुरक्षा और प्रतिरक्षा व्यवस्थाओं को बनाने में जनप्रतिनिधियों के माध्यम से जन भावनाओं के अनुरूप निर्णय लिए जाने चाहिए। जनता को अपने जनप्रतिनिधियों से बहुत अपेक्षाएं होती हैं, चाहे वे सत्तापक्ष के हों या विपक्ष के। हालांकि विगत 76 वर्षों में राजनीतिक संस्कृति में गिरावट आई है और जनप्रतिनिधियों ने जनता को निराश किया है।

लोकतांत्रिक सरकारें जनता के प्रति उत्तरदायी होती हैं, भले ही जनता को आगामी चुनावों तक प्रतीक्षा करनी पड़ती है। वैसे भी लोकतंत्र में सरकारें जनप्रतिनिधियों के माध्यम से जनता के प्रति दैनिक आधार पर उत्तरदायी होती हैं, क्योंकि उन्हें सरकार से प्रश्न पूछने, जनहित के मुद्दे उठाने, सरकार के विरुद्ध निंदा और अविश्वास प्रस्ताव लाने का अधिकार है। वे सदन में ऐसा कर सकें, इसके लिए संविधान का अनुच्छेद 105 सांसदों और अनुच्छेद 194 विधायकों को सदन में अभिव्यक्ति और मतदान की पूर्ण स्वतंत्रता देता है।

हाल के दौर में लोकतंत्र के मोर्चे पर दो विसंगतियां दिखाई पड़ती हैं। एक, सरकार और विपक्ष में सतत, गंभीर, बौद्धिक और शालीन संवाद का अभाव हो चला है, जिससे संसदीय बहसें और कार्यवाहियां बाधित हो रही है। दूसरा, सत्ता पक्ष के प्रस्तावों पर विपक्ष गंभीर आलोचना करने के बजाय कटाक्ष, उपहास, आरोप, शोर, बहिष्कार आदि का सहारा ले रहा है। इससे संसद परिसर में ही धरना-प्रदर्शन की प्रवृत्ति विकसित हो रही है। वह गंभीरता से कोई वैकल्पिक या रचनात्मक सुझाव देने की स्थिति में नहीं। परिणामस्वरूप, संसदीय बहसों में लोगों की रुचि घटती जा रही है।

एक समय विपक्ष के नेता संख्या में कम होने के बावजूद अपने ज्ञान, बौद्धिकता और प्रभावी अभिव्यक्तियों से सत्ता पक्ष और देश का ध्यान और

अवधेश राजपूत

सम्मान अर्जित करते थे। वह परंपरा अब विलुप्तप्राय है। दलों ने अच्छे और योग्य लोगों को पीछे धकेल, अपराधियों और धनवानों को जिताऊ प्रत्याशी के रूप में आगे कर दिया। निर्वाचन आयोग केवल मतदान प्रतिशत बढ़ाने पर ध्यान देता है और यह प्रयास नहीं करता कि राजनीतिक दल अच्छे और योग्य लोगों को राजनीति में लाएं। बहुत कम विधायक और सांसद बहस के लिए अच्छी तैयारी करके आते हैं। परिणामस्वरूप, महत्वपूर्ण विधेयक शोर-शराबे के बीच बिना गंभीर वाद-विवाद के ऐसे ही पारित जाते हैं।

देश में भाजपा और वामदलों के अलावा अधिकांश दल परिवार केंद्रित राजनीति पर आधारित हैं। कुछ अपवादों को छोड़ अधिकतर दल आंतरिक-लोकतंत्र के अभाव से ग्रस्त हैं। परिणामस्वरूप दलों के अंदर नीतिगत मुद्दों पर सार्थक और प्रभावी रणनीति नहीं बन पाती, जिससे उनके सांसद/विधायक किसी मुद्दे पर तथ्यात्मक और तार्किक विचार नहीं रख पाते। इससे सरकार को बेहतर सुझाव नहीं मिलते।

जनता ने कांग्रेस और भाजपा दोनों सरकारों को परखा है। प्रत्येक सरकार ने कुछ अच्छा काम किया है। उनमें कुछ खामियां भी रही हैं, लेकिन विपक्ष का दायित्व न केवल उन खामियों को रेखांकित करना है, वरन बेहतर विकल्प सुझाना भी है। तभी आगामी चुनावों में जनता विपक्ष को सत्ता सौंपने का मन बनाए। मोदी सरकार में कई बड़े और महत्वपूर्ण काम हुए, विकास हुआ, सुरक्षा-प्रतिरक्षा सुदृढ़ हुई तथा बिगड़ते वैश्विक-परिदृश्य में देश के हितों को सुरक्षित करने की कवायद हुई। यह भी लोकतंत्र की ही कसौटी है कि कोई सरकार कितना भी अच्छा काम करे, उसे आलोचना भी सहनी पड़ेगी और साथ ही साथ जन समर्थन प्राप्त करने के प्रयास भी जारी रखने होंगे।

विपक्ष को समझना होगा कि जनता की रुचि इसमें नहीं है कि आप मोदी सरकार को हटाएं, उसकी रुचि इसमें अधिक होगी कि आप उससे बेहतर क्या करेंगे? ऐसा नहीं कि जनता किसी भी सरकार से शत-प्रतिशत संतुष्ट होती है, लेकिन जब उसे मतदान करना होता है तो वह सरकार और विपक्ष दोनों को तौलती है। आज विपक्ष 'मोदी-हटाओ' एजेंडा में इतना लिप्त है कि जनता के सामने अपना सकारात्मक एजेंडा रख ही नहीं पाता। वहीं, सत्तारूढ़ भाजपा की समस्या है कि प्रधानमंत्री मोदी की स्वीकार्यता के पीछे पार्टी के अधिकतर सांसद और विधायक छुपे हुए हैं, जनता से कटे हुए हैं, भ्रष्टाचार में लिप्त हैं और स्थानीय विकास के लिए उनके पास कोई रोडमैप नहीं। कब तक जनता मोदी के नाम पर उन्हें चुनेगी?

प्रधानमंत्री वैश्विक और राष्ट्रीय स्तर पर कील-कांटे दुरुस्त करने में जुटे हैं, लेकिन स्थानीय स्तर पर तो विधायकों, सांसदों एवं संगठन पदाधिकारियों की जिम्मेदारी है कि वे प्रशासन से संवाद कर समस्याओं का समाधान कराएं और विकास गतिविधियों को आगे बढ़ाएं। कुछ लोग इस स्थिति का लाभ उठाकर 'देश में अब लोकतंत्र संसद से नहीं, सड़क से तय होगा, चुनाव से नहीं, प्रतिरोध से तय होगा' जैसी बातें करने लगते हैं, लेकिन वे भूल जाते हैं कि सड़क और प्रतिरोध से निकला जनादेश अंततः जाएगा तो संसद की ओर ही। फिर भी इस आवश्यकता को अनदेखा नहीं किया जा सकता कि आज लोकतंत्र पुनर्विन्यास मांगता है, क्योंकि जनता को सत्ता-परिवर्तन से अधिक व्यवस्था-परिवर्तन की दरकार है।

(लेखक सेंटर फार द स्टडी आफ सोसायटी एंड पालिटिक्स के निदेशक एवं राजनीतिक विश्लेषक हैं)

response@jagran.com

कब मिलेगी भाषाई पराधीनता से मुक्ति

डा. ऋतु सारस्वत

किसी के उच्चारण का उपहास करना उपहास करने वाले व्यक्ति की मानसिक गुलामी का सबसे बड़ा प्रमाण होता हैं

हाल में प्रधानमंत्री मोदी द्वारा एक अंग्रेजी शब्द के उच्चारण को लेकर कुछ लोगों ने इंटरनेट मीडिया पर जिस प्रकार उपहास किया, उसने एक बार फिर हमारी उस मानसिक रुग्णता को सामने ला खड़ा किया, जो विगत अनेक दशकों से न केवल हमें भीतर ही भीतर खोखला करती आ रही है, बल्कि हमारे आत्मविश्वास को भी निरंतर क्षीण कर रही है। विडंबना यह है कि उसके कारणों पर न हमने कभी गंभीर आत्ममंथन किया और न ही उसके विरुद्ध कोई वैचारिक प्रतिरोध खड़ा किया। परिणामस्वरूप उपहास की यह घृणित प्रवृत्ति हमारे सार्वजनिक जीवन का लगभग स्वीकृत व्यवहार बन गई है। इस घटना ने एक और गंभीर प्रश्न खड़ा कर दिया कि किसी व्यक्ति को यह अधिकार किसने दिया कि वह किसी अन्य की भाषा, उच्चारण अथवा अभिव्यक्ति को अपनी तथाकथित श्रेष्ठता की कसौटी पर परखे और स्वयं को श्रेष्ठ घोषित करते हुए दूसरे का मखौल उड़ाए। यदि किसी भाषा का ज्ञान किसी व्यक्ति में दूसरों के प्रति सम्मान के स्थान पर उपेक्षा और उपहास का भाव उत्पन्न कर रहा है तो समस्या भाषा की नहीं, उस ज्ञान के अहंकार की है।

राजनीतिक स्वतंत्रता प्राप्त कर लेने के दशकों बाद भी हम मानसिक और विशेष रूप से भाषाई पराधीनता से आज तक मुक्त नहीं हो पाए हैं। प्रश्न किसी व्यक्ति का नहीं है। यदि अंग्रेजी में पारंगत होना ही ज्ञान, प्रतिभा और श्रेष्ठता का अंतिम प्रमाण होता तो आज चीन, जापान, जर्मनी और दक्षिण कोरिया जैसे देश विश्व के अग्रणी राष्ट्र नहीं होते। इन देशों ने विज्ञान, प्रौद्योगिकी, उद्योग, शिक्षा और नवाचार के क्षेत्र में विश्व का नेतृत्व अपनी भाषाओं के आत्मविश्वास के साथ स्थापित किया है। उन्होंने अपनी भाषा को आधुनिक बनाया, जबकि हमने आधुनिकता को ही विदेशी भाषा का पर्याय मान लिया। वहां अपनी भाषा में बोलना गौरव का विषय है, जबकि किसी विदेशी भाषा में संवाद करना सामाजिक प्रतिष्ठा का मानदंड नहीं माना जाता। वैश्विक मंचों पर भी उनके राष्ट्रीय नेता अपनी भाषा में विचार रखना

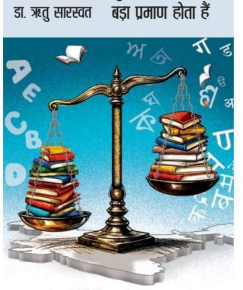

ज्ञान का पर्याय नहीं विदेशी भाषा में दक्षता। प्रतीकात्मक

स्वाभाविक समझते हैं, क्योंकि भाषा उनके लिए केवल अभिव्यक्ति का माध्यम नहीं, बल्कि राष्ट्रीय अस्मिता और आत्मसम्मान का भी प्रतीक है।

भारतीय समाज की सबसे बड़ी विडंबना यह है कि विदेशी भाषा में पारंगत होना योग्यता, बुद्धिमत्ता और सामाजिक प्रतिष्ठा का पर्याय मान लिया गया है, जबकि अपनी ही मातृभाषा में बोलना अनेक लोगों के लिए संकोच का विषय बना चुका है। यह किसी व्यक्ति की कमजोरी नहीं, बल्कि उस स्थापित सामाजिक मानसिकता का परिणाम है, जिसने भाषा को अभिव्यक्ति का माध्यम नहीं, बल्कि सामाजिक मूल्यांकन का पैमाना बना दिया है। इस मानसिकता का सबसे जीवंत उदाहरण हमारा सिनेमा जगत है, जिसने हिंदी भाषा के माध्यम से अपार लोकप्रियता, प्रतिष्ठा और आर्थिक समृद्धि अर्जित की, किंतु उसके अनेक प्रतिष्ठित कलाकार सार्वजनिक मंचों पर अंग्रेजी में संवाद करना अधिक सहज समझते हैं। आवश्यकता ऐसी सामाजिक चेतना की है, जो निरंतर इस तथ्य को स्थापित करे कि अपनी मातृभाषा में संवाद करना सम्माननीय है। सिंगापुर के पूर्व प्रधानमंत्री ली कुआन यू ने कहा था, 'जिस समाज के पास अपनी भावनाओं से जुड़ी मातृभाषा नहीं होती, वह भावनात्मक रूप से अपंग हो जाता है। ऐसा समाज स्वयं पर संदेह करने लगता है और उसका आत्मविश्वास धीरे-धीरे कमजोर पड़ने लगता है।' दुर्भाग्य यह है कि भारत में इस मानसिकता का पोषण सबसे अधिक हमारी शिक्षा व्यवस्था ने किया है। बचपन से ही बच्चों और अभिभावकों को यह विश्वास दिलाया जाता है कि सफलता का मार्ग ज्ञान से अधिक अंग्रेजी से होकर जाता है। परिणामस्वरूप हमारी ऊर्जा किसी कौशल, अनुसंधान, सृजनात्मकता और नवाचार विकसित करने के बजाय अंग्रेजी सीखने में अधिक व्यय होने लगती है। जबकि रोजगार भाषा नहीं, योग्यता और कौशल उत्पन्न करते हैं।

दुखद यह है कि मानसिक गुलामी की यह प्रवृत्ति केवल सामान्य जनजीवन तक सीमित नहीं है, बल्कि राजनीतिक गलियारों में भी स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है। नेतृत्व का मूल्यांकन अनेक बार उसके विचारों, अनुभव और कार्यक्षमता की अपेक्षा अंग्रेजी में संवाद करने की क्षमता के आधार पर किया जाता है। यदि वह अंग्रेजी में सहज नहीं हैं तो उसके ज्ञान, योग्यता और नेतृत्व क्षमता पर भी प्रश्नचिह्न लगाने का प्रयास किया जाता है। यह प्रवृत्ति किसी भी लोकतांत्रिक समाज के लिए उचित नहीं कही जा सकती। लोकतंत्र की शक्ति भाषा में नहीं, विचार में होती है। किसी के उच्चारण का उपहास करना उपहास करने वाले व्यक्ति की मानसिक पराधीनता का प्रमाण होता है और विश्व की किसी भी संस्कृति में मानसिक रूप से पराधीन व्यक्ति सम्मान योग्य नहीं होता।

(लेखिका समाजशास्त्र की प्रोफेसर हैं)

response@jagran.com

ऊर्जा

आशीर्वाद की शक्ति

मनुष्य का अंतर्मन विचार, आकांक्षाओं और भावनाओं का वास है। ये तीनों इहलोक की ही अस्मिताएं नहीं हैं। इनका साहचर्य और उद्गम समस्त लौकिक-अलौकिक जगत को संचालित करती सार्वभौम चेतना है। शब्द अथाह क्षमता से परिपूर्ण, निरंतर स्पंदन की स्थिति में रहने वाले जीवंत ऊर्जापिंड हैं। सुधीजनों में शब्दों के प्रति श्रद्धाभाव रहता है, इनका प्रयोग वे सुविचार के उपरांत करते हैं। शब्दों का समादर ब्रह्मांडीय शक्ति में आस्था का परिचायक है। जब व्यक्ति स्वयं को उच्चतर शक्तियों का अंशमात्र मान लेता है, तब उसमें उद्विग्नता, अहंकार, लोभ, ईर्ष्या, वैमनस्य, स्वार्थपरकता जैसे विकारों का विलोप होने लगता है। शांत मन और स्थिर चित्त की स्थिति को प्राप्त ऐसा व्यक्ति ईश्वर का प्रतिनिधि होता है, उसके मन, आचरण और कार्य में ईश्वरीय झलक मिलेगी। अपने भीतर निहित दिव्यदृष्टि के कारण उसे कालांतर में घटने वाली परिस्थितियों का आभास हो जाएगा। उसके मुख पर सरस्वती विराजमान रहती है और उसके शब्द निष्फल नहीं जाते।

लोकहित भाव से अभिप्रेरित सन्मार्ग का पथिक उच्च जीवनमूल्यों की प्रतिष्ठा के लिए सुयोग्य पात्र तलाशते-तराशते हैं, जिन्हें पहचानने की उसमें अद्भुद् क्षमता होती है। जिस प्रकार बुजुर्गों की शुभकामनाएं आगामी पीढ़ियों की उन्नति सुगम बनाती हैं और उनको दी गई पीड़ा विनाश बढ़ाती हैं, उसी भांति आहत होने पर संतों-सदाचारियों का आक्रोश व्यर्थ नहीं जाता। इसलिए हमारे कार्य और मनोकामनाएं उच्चतर शक्तियों की अनुपालना में रहेंगी तो हमारा जीवन उन अमोघ शक्तियों के आशीर्वचनों से सफल हो जाएगा। आशीर्वाद ही वह अदृश्य शक्ति होती है जो कठिन से कठिन परिस्थितियों में भी हमें आत्मबल प्रदान कर पथ से विचलित होने से बचाती है।

हरीश बड़थ्वाल

दूर हों सुरक्षित सफर के राह की बाधाएं

रामबाबू सोनी

यात्रा समय में वास्तव में कमी आई हैं, लेकिन सुरक्षित सफर एक यक्ष प्रश्न बन चुका हैं

देश में सड़कों का विकास तेजी से हो रहा है। राष्ट्रीय राजमार्गों के निर्माण की औसत गति लगभग 35 किमी प्रतिदिन है, जिसे बढ़ाकर 100 किमी प्रतिदिन करने का लक्ष्य है। सड़क परिवहन मंत्रालय की 2025-26 की रिपोर्ट के अनुसार भारत में सड़कों की लंबाई 63.73 लाख किमी से भी अधिक है। सड़क नेटवर्क में अमेरिका के बाद भारत ही दूसरे क्रम पर है। मार्च 2014 तक देश में राष्ट्रीय राजमार्गों की लंबाई 91,287 किमी थी, जो दिसंबर 2025 तक बढ़कर 1,46,572 किमी हो गई थी। सड़कें बढ़ने से वाहनों और वाहन दुर्घटनाओं की संख्या भी तीव्रता से बढ़ रही है। दुर्घटनाओं का ग्राफ साल-दर-साल ऊपर ही जा रहा है।

केंद्रीय सड़क परिवहन एवं राजमार्ग मंत्री नितिन गडकरी ने लोकसभा में जानकारी देते हुए बताया कि वर्ष 2025 में देशभर में 5,13,563 लाख सड़क दुर्घटनाएं हुईं जिनमें 1,83,382 लोगों की मृत्यु हुई। अर्थात हर घंटे 59 दुर्घटनाएं और उनमें जान गंवाने वालों की संख्या 21 रही। वर्ष 2024 की तुलना में 2025 में सड़क दुर्घटनाएं 5.3 प्रतिशत बढ़ी हैं। गलत दिशा में वाहन चलाने और लेन से संबंधित के नियमों का पालन नहीं करने से लगभग चार हजार, लाल बत्ती पार करने से 276 और वाहन चलाते समय मोबाइल पर बात करने से 136 सड़क दुर्घटनाएं हुईं।

वाहनों की तीव्र गति के कारण सर्वाधिक 82 हजार से अधिक दुर्घटनाएं हुई हैं, जो कुल दुर्घटनाओं का 16 प्रतिशत है। इस वर्ष भी जनवरी से जून तक वाहन दुर्घटनाओं का आंकड़ा 2,85,770 लाख को पार कर गया है। दो पहिया वाहनों पर सवार लगभग 66 प्रतिशत मौतें 18 से 34 साल के उम्र के युवाओं की होती हैं, जो बेहद गंभीर स्थिति है। शराब पीकर वाहन चलाने एवं सड़कों पर गड्ढों के कारण भी दुर्घटनाएं होती रहती हैं।

विश्व सड़क सांख्यिकी एवं विश्व बैंक की रिपोर्ट के अनुसार भारत में दुनिया के किसी भी देश की तुलना में सड़क दुर्घटनाओं में होने वाली मौतों की संख्या सर्वाधिक है और विश्व की 11 प्रतिशत सड़क दुर्घटनाएं भारत में ही होती हैं। सड़क एवं परिवहन सुविधाओं के विकास से अर्थव्यवस्था को गति मिली है, यात्रा समय में कमी तथा वाहनों के रखरखाव पर खर्च भी कम हुआ है, लेकिन सुरक्षित सफर आज एक यक्ष प्रश्न बन चुका है।

सरकार की ओर से सड़क दुर्घटनाओं को कम करने के लिए विशेष अभियान, कार्यक्रम एवं योजनाएं संचालित की जा रही हैं, लेकिन दुर्घटनाओं के आंकड़े इन प्रयासों को बौना सिद्ध कर रहे हैं। वाहनों की गति मापने के लिए संबंधित यंत्र लगाए गए हैं, लेकिन उचित निगरानी और समयबद्ध सुधारों के अभाव के कारण अपेक्षित परिणाम प्राप्त नहीं हो रहे हैं। इस दिशा में सरकार को ठोस और ईमानदार प्रयास करने की आवश्यकता है, क्योंकि जीवन की सुरक्षा ही सर्वोपरि सुरक्षा है।

(लेखक स्वतंत्र टिप्पणीकार हैं)

ऊर्जा आत्मनिर्भरता आवश्यक

'खाड़ी पर ऊर्जा निर्भरता के खतरे' शीर्षक से प्रकाशित शिवकांत शर्मा का आलेख 21वीं सदी के बदलते वैश्विक परिदृश्य में भारत की रणनीतिक एवं आर्थिक सुरक्षा पर एक गंभीर विश्लेषण प्रस्तुत करता है। पश्चिम एशिया में बढ़ते तनाव और होर्मुज जलमार्ग पर मंडराते संशय के बादलों के बीच यह आलेख हमें स्मरण कराता है कि वैश्विक हलचलों की एक चिंगारी भी वैश्विक अर्थव्यवस्था को सीधे प्रभावित करने की क्षमता रखती है, जिससे भारत भी अछूता नहीं रह सकता। लेखक का यह दृष्टिकोण सर्वथा व्यावहारिक है कि जब तक भारत अपनी ऊर्जा आवश्यकताओं के लिए खाड़ी के देशों पर निर्भर रहेगा, तब तक हमारी विकास दर और घरेलू बाजार अंतरराष्ट्रीय संकटों के प्रति संवेदनशील बने रहेंगे। वर्तमान संदर्भ में यदि कच्चे तेल की कीमतों में उछाल आता है तो उसका सीधा प्रभाव देश के आयात बिल, मुद्रास्फीति और आम नागरिक के दैनिक बजट पर पड़ना अवश्यंभावी है। हालांकि संकट की इस घड़ी में भारत सरकार द्वारा रणनीतिक पेट्रोलियम भंडार का निर्माण करना, गैर-खाड़ी राष्ट्रों से तेल आयात का विविधीकरण करना तथा ओमान-गुजरात जैसे वैकल्पिक गलियारों की खोज करना दूरदर्शी पहल है, किंतु इसका स्थायी समाधान दीर्घकालिक लक्ष्यों में ही निहित है। 2030 तक 500 गीगावाट नवीकरणीय ऊर्जा का लक्ष्य, राष्ट्रीय ग्रीन हाइड्रोजन मिशन, एथनाल ब्लेंडिंग तथा ई-व्हीकल क्रांति को युद्ध स्तर पर आगे बढ़ाकर ही हम 'ऊर्जा आत्मनिर्भरता' लक्ष्य प्राप्त कर सकते हैं।

मनोज वशिष्ठ, रेवाड़ी (हरियाणा)

मेलबाक्स

नदियों के अस्तित्व पर खतरा

'साधना, सेवा और समरसता की यात्रा' शीर्षक आलेख के तहत तेजस्वी सूर्य ने महाश्रावण के पवित्र महीने में होने वाली कांवड़ यात्रा के महत्व का वर्णन किया और यह बताया है कि इस यात्रा में हमें देश की सभ्यता और संस्कृति की तस्वीर देखने को मिलती है। हमारे देश की सभ्यता, संस्कृति और पर्व-त्योहारों का धार्मिक महत्व तो है ही, साथ ही ये हमें प्रकृति से भी जोड़ते हैं और प्रकृति की चीजों को संभालने के लिए प्रेरित करते हैं। गंगा मात्र एक नदी नहीं, बल्कि भारतीय संस्कृति की एक अनोखी पहचान भी है, लेकिन इसके साथ हमें अपने मन को भी गंगा जैसा पावन करना चाहिए। मात्र गंगाजल से स्नान करके ही अपने आपको पवित्र नहीं मान लेना चाहिए, बल्कि अपने मन को भी शुद्ध विचारों और नेक कामों से पवित्र करना चाहिए। अपने मन के मैल को भी धोना चाहिए। इसके लिए अपने मन से अहंकार, लोभ और लालच को निकालना चाहिए तथा नकारात्मक विचारों से दूर रहना चाहिए। जिस तरह गंगा बिना किसी जात-पात, धर्म या अमीर-गरीब का भेदभाव किए हमें पवित्र करती है, उसी तरह हमें भी अपने जीवन में किसी के साथ भेदभाव नहीं करना चाहिए। अगर हमें अपनी भावी पीढ़ी को भी गंगा के अमृत की सौगात देनी है तो हमें गंगा की साफ-सफाई का भी विशेष ध्यान रखना होगा।

राजेश कुमार चौहान, जालंधर

इंटरनेट मीडिया की जवाबदेही

भारत सरकार द्वारा मेटा प्लेटफार्म को भारतीय कानूनों के पालन और उसके एल्गोरिदम को लेकर जवाबदेह बनाने की पहल स्वागतयोग्य है। इंटरनेट मीडिया सिर्फ संवाद का माध्यम नहीं है, बल्कि लोगों के सोच, सामाजिक माहौल और कई बार राजनीतिक विमर्श को प्रभावित करने की क्षमता रखता है। इसलिए इसकी बढ़ती शक्ति के साथ जवाबदेही भी आवश्यक है। इंटरनेट मीडिया प्लेटफार्म अपने एल्गोरिदम के माध्यम से यह तय करने की स्थिति में हैं कि उपयोगकर्ता क्या देखेगा और क्या नहीं। इससे विचारों को प्रभावित करने, भ्रामक सूचनाओं को बढ़ावा देने और समाज में ध्रुवीकरण पैदा करने का खतरा रहता है। सरकार को इंटरनेट मीडिया कंपनियों के लिए नियम, पारदर्शी एल्गोरिदम, प्रभावी शिकायत निवारण और उल्लंघन पर कठोर आर्थिक दंड की व्यवस्था करनी चाहिए।

हिमांशु शेखर, केसपा, गयाजी, बिहार।

इस स्तंभ में किसी भी विषय पर राय व्यक्त करने अथवा दैनिक जागरण के राष्ट्रीय संस्करण पर प्रतिक्रिया व्यक्त करने के लिए पाठकगण सादर आमंत्रित हैं। आप हमें पत्र भेजने के साथ ई-मेल भी कर सकते हैं।

अपने पत्र इस पते पर भेजें:
दैनिक जागरण, राष्ट्रीय संस्करण,
डी-210-211, सेक्टर-63, नोएडा
ई-मेल: response@jagran.com

संस्थापक-स्व. पूर्णचन्द्र गुप्त. पूर्व प्रधान संपादक-स्व. नरेन्द्र मोहन. नॉन एग्जीक्यूटिव चेयरमैन-महेन्द्र मोहन गुप्त. प्रधान संपादक-संजय गुप्त, जागरण प्रकाशन लि. के लिए: नीतेन्द्र श्रीवास्तव द्वारा 501, आई.एन.एस. बिल्डिंग, रफी मार्ग, नई दिल्ली-110001 से प्रकाशित और उन्हीं के द्वारा डी-210, 211, सेक्टर-63 नोएडा-201309 से मुद्रित, संपादक (राष्ट्रीय संस्करण)-विष्णु प्रकाश त्रिपाठी*
दूरभाषः नई दिल्ली कार्यालय : 011-43166300, नोएडा कार्यालय : 0120-4615800, E-mail: delhi@nda.jagran.com, R.N.I. No. DELHIN/2017/74721 * इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं संपादन हेतु पी.आर.बी. एक्ट के अंतर्गत उत्तरदायी। समस्त विवाद दिल्ली न्यायालय के अधीन ही होंगे। हवाई/रेल शुल्क ₹-2 अतिरिक्त।

36 हजार से अधिक टुकड़ों के रूप में पृथ्वी की निचली कक्षाओं से लेकर अंतरिक्ष के खाली विस्तार तक 13,486 टन मलबा तैर रहा है। इसमें निष्क्रिय उपग्रह और राकेट के टुकड़े आदि शामिल हैं।

आजकल

दलों की सांगठनिक प्रक्रिया में परिवर्तन

कुंवर प्रांजल सिंह
असिस्टेंट प्रोफेसर, दिल्ली विश्वविद्यालय

भारतीय राजनीति वर्तमान में सत्ता के बदलते समीकरणों के साथ ही उसके अर्थ और उसकी सामाजिक संरचना के पुनर्परिभाषित होने के नए दौर से गुजर रही है। हाल के वर्षों में उभरे युवा एवं छात्र आंदोलनों ने इस बदलाव को अधिक स्पष्ट किया है। इन आंदोलनों को केवल किसी सरकार, किसी राजनीतिक दल या किसी नेता के विरोध के रूप में देखना शायद इनके व्यापक राजनीतिक अर्थ को सीमित कर देना होगा। वस्तुत: यह राजनीतिक संस्थाओं की कार्यप्रणाली से जुड़ी असहमति का विषय भी है

कोई भी व्यवस्था जब जवाबदेही से भागने लगती है तो उससे जुड़ा राजनीतिक भरोसा भी प्रभावित होता है। फाइल

आजकल सरकार से जुड़ी संस्थाओं की जवाबदेही, अवसरों की समानता, शिक्षा, रोजगार और राजनीतिक प्रतिनिधित्व जैसे सवालों के जवाब तलाशे जा रहे हैं। युवा एवं छात्रों में, जिन्हें जेन-जी कहा जा रहा है, उस व्यवस्था के प्रति असंतोष भी है, जिसमें नागरिक और संस्थाएं धीरे-धीरे अपने मूल लोकतांत्रिक दायित्वों से दूर होते दिखाई देते हैं। दिलचस्प यह है कि इन आंदोलनों की भाषा अब भी संविधान, अधिकार और संस्थागत प्रक्रिया की भाषा है। यानी असहमति व्यवस्था से बाहर निकलने की नहीं, बल्कि व्यवस्था को उसके घोषित लोकतांत्रिक मूल्यों के अनुरूप संचालित करने की मांग कर रही है। यही भारतीय राजनीति के मौजूदा संक्रमण की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता है।

उदारीकरण के बाद भारतीय राजनीति में एक महत्वपूर्ण परिवर्तन भी दिखाई देता है। जन आंदोलनों और सामूहिक राजनीतिक लामबंदी की जगह धीरे-धीरे नीतिगत हस्तक्षेप, विशेषज्ञता, संस्थागत पहुंच और सत्ता के भीतर मौजूदगी को परिवर्तन का माध्यम माना जाने लगा। राजनीति का यह बदलता चरित्र राजनीतिक दलों की सांगठनिक संरचनाओं पर भी असर डालता है। कार्यकर्ता, जो कभी राजनीतिक दलों और समाज के बीच सबसे महत्वपूर्ण कड़ी हुआ करते थे, उनकी भूमिका धीरे-धीरे चुनावी प्रबंधन और राजनीतिक लामबंदी तक सीमित होती गई। नेतृत्व अधिक केंद्रीकृत हुआ और संगठन की सामूहिक प्रक्रिया के मुकाबले नेतृत्व की लोकप्रियता तथा चुनावी सफलता राजनीतिक प्रभाव का प्रमुख पैमाना बनने लगी। सवाल केवल यह नहीं है कि कौन-सी पार्टी सत्ता में है, बड़ा सवाल यह है कि दलों के भीतर विश्वास, संवाद व सांगठनिक भागीदारी की प्रकृति किस तरह बदल रही है।

यही वह बिंदु है जहां भारतीय राजनीति में संगठन और सत्ता के बीच संबंध को नए सिरे से देखने की आवश्यकता पैदा होती है। किसी भी राजनीतिक दल की स्थायी शक्ति केवल उसके पास मौजूद संसाधनों, चुनावी रणनीति या लोकप्रिय नेतृत्व से नहीं बनती। उसकी वास्तविक ताकत उस संगठनात्मक संस्कृति में होती है, जो कार्यकर्ता को केवल सत्ता हासिल करने का साधन नहीं, बल्कि राजनीतिक प्रक्रिया का सहभागी बनाती है। इसलिए आज की राजनीति का केंद्रीय प्रश्न यह भी है कि क्या राजनीतिक दल अपनी सांगठनिक जड़ों, कार्यकर्ता-केंद्रित संस्कृति और आंतरिक राजनीतिक विश्वास को फिर से महत्व दे सकते हैं। बदलते परिवेश में यह सवाल किसी एक दल तक सीमित नहीं है।

राजनीतिक विश्वास : राजनीतिक विश्वास का प्रश्न आज के भारतीय लोकतंत्र के सामने सबसे महत्वपूर्ण प्रश्नों में से एक है। इसे केवल सत्ता पक्ष के विरोध, किसी मंत्री के इस्तीफे या किसी सरकार के खिलाफ उठी आवाज तक सीमित करके नहीं देखा जा सकता। दरअसल, यह एक पीढ़ीगत प्रश्न है- राज्य, समाज और संस्थाओं पर भरोसे का प्रश्न। समस्या यह है कि जिस व्यक्तिगत रास्ते को पिछली पीढ़ी ने सुरक्षित और सम्मानजनक जीवन की सबसे व्यावहारिक राह माना था, उसकी न्यूनतम सामाजिक और संस्थागत परिस्थितियां ही अगली पीढ़ी के लिए सुरक्षित नहीं रह सकीं।

एक दौर में यह विश्वास मजबूत था कि राजनीतिक टकराव और आंदोलनों से दूर रहकर अपनी मेहनत, योग्यता और पेशेवर क्षमता के सहारे व्यवस्था के भीतर आगे बढ़ा जा सकता है। व्यक्तिगत सफलता को सामाजिक स्थिरता और सम्मानजनक जीवन का सबसे भरोसेमंद रास्ता माना गया। लेकिन इस सोच की सबसे बड़ी विडंबना यही रही कि जिन संस्थाओं और व्यवस्थाओं पर यह भरोसा टिका था, उनकी विश्वसनीयता धीरे-धीरे कमजोर होती गई। जब संस्थाएं निष्पक्ष अवसर, सामाजिक सुरक्षा और योग्यता के अनुरूप आगे बढ़ने की न्यूनतम गारंटी देने में असमर्थ होने लगें, तो व्यक्तिगत सफलता का रास्ता भी अपनी विश्वसनीयता खोने लगता है।

यही कारण है कि आज का युवा जब सरकार, संस्थाओं या व्यापक व्यवस्था के विरुद्ध आवाज उठाता है, तो उसका आक्रोश केवल वर्तमान सत्ता के प्रति नहीं होता। वह कहीं न कहीं उस पूरी नैतिक विरासत से भी सवाल कर रहा होता है, जिसने उसे यह भरोसा दिलाया था कि राजनीति से दूरी, व्यक्तिगत मेहनत और पेशेवर सफलता के सहारे वह एक सुरक्षित और सम्मानजनक जीवन बना सकेगा। उसके सामने अब सवाल यह है कि यदि संस्थाएं ही निष्पक्ष नहीं रहेंगी, यदि अवसरों तक पहुंच समान नहीं होगी और यदि पेशेवर योग्यता भी भविष्य की कोई सुनिश्चित गारंटी नहीं देगी, तो केवल व्यक्तिगत सफलता का रास्ता आखिर कितनी दूर तक ले जा सकता है?

इस अर्थ में आज के युवा आंदोलनों को केवल सत्ता-विरोधी प्रदर्शन के रूप में देखना उनके वास्तविक राजनीतिक अर्थ को छोटा कर देना होगा। प्रदर्शनकारी अपनी पिछली पीढ़ी से मानो यह पूछ रहे हैं कि जिस व्यवस्था पर भरोसा करके आपने हमें व्यक्तिगत सफलता का रास्ता दिखाया था, क्या वह व्यवस्था आज भी हमारे लिए वही अवसर, सम्मान और सुरक्षा उपलब्ध कराती है? इस प्रश्न में आक्रोश अवश्य है, लेकिन उसके भीतर एक गहरी निराशा भी है, उस सामाजिक वादे के टूटने की निराशा, जिसके आधार पर एक भरोसे का रिश्ता बनाया गया था।

यह उन सामाजिक और संस्थागत मानकों की पुनर्स्थापना की मांग भी है, जिन पर किसी लोकतांत्रिक समाज का भरोसा टिका होता है। राजनीतिक विश्वास का अर्थ अंततः यही है कि नागरिक को यह भरोसा हो कि संस्थाएं उसके साथ निष्पक्ष व्यवहार करेंगी, नियम सबके लिए समान होंगे और उसकी मेहनत का मूल्य केवल उसकी राजनीतिक या सामाजिक पहुंच से तय नहीं होगा। जब यह विश्वास टूटता है, तो असंतोष केवल चुनावी असहमति नहीं रहता, वह समाज और उसकी संस्थाओं के बीच संबंधों का संकट बन जाता है। शायद आज की भारतीय राजनीति को समझने की सबसे जरूरी कुंजी भी यही है, सत्ता के प्रति असहमति से अधिक महत्वपूर्ण वह क्षण है, जब नागरिक संस्थाओं पर अपना विश्वास खोने लगता है।

राजनीतिक संस्थाओं के प्रति जनता की असहमति

लोकतंत्र में असहमति का कोई पक्ष या विपक्ष नहीं होता। असहमति अपने आप में लोकतंत्र की एक अनिवार्य राजनीतिक अभिव्यक्ति है। वह केवल सत्ता के पक्ष में या उसके विरोध में खड़ी कोई तात्कालिक राजनीतिक प्रतिक्रिया नहीं होती। असहमति कई बार उन गहरे अनुभवों से पैदा होती है, जिनमें नागरिक धीरे-धीरे राजनीतिक संस्थाओं, प्रक्रियाओं और स्थापित राजनीतिक विश्वासों से अपना भरोसा खोने लगता है। इसलिए किसी असहमति को केवल सत्ता-विरोधी भावना के रूप में पढ़ना उसके व्यापक सामाजिक और राजनीतिक अर्थ को सीमित कर देना है।

कोलकाता में सत्ता का समीकरण बदलना हो, चेन्नई में लंबे समय से चले आ रहे राजनीतिक संबंधों में दरार हो, केरल में लगातार दिखाई देने वाली सत्ता-विरोधी प्रवृत्ति हो या असम में भाजपा की पकड़ का कायम रहना, इन सभी घटनाओं को केवल तत्कालीन चुनावी रणनीति के चश्मे से देखना पर्याप्त नहीं है। इनके पीछे समाज में बदलते राजनीतिक विश्वास, आकांक्षाएं और संस्थाओं के प्रति बदलता रवैया भी काम करता है। बिहार का बांकीपुर उपचुनाव इस बदलते राजनीतिक विश्वास का एक अलग और दिलचस्प उदाहरण सामने रखता है। इसमें कोई दो राय नहीं कि भाजपा की राष्ट्रीय चुनावी शक्ति का विस्तार एक असाधारण राजनीतिक घटना है। अभी भी संगठन की व्यापक पहुंच और चुनावी रणनीति की प्रभावशीलता ने भारतीय राजनीति के पुराने समीकरणों को गहराई से प्रभावित किया है। बंगाल इसका उल्लेखनीय उदाहरण है। अपनी विशिष्ट राजनीतिक और सांस्कृतिक पहचान पर गर्व करने वाले इस प्रदेश में भाजपा ने जिस तरह अपने लिए राजनीतिक स्थान बनाया, उसने लंबे समय से स्थापित राजनीतिक धारणाओं और चुनावी गणित को चुनौती दी। यह विस्तार केवल चुनावी प्रबंधन की सफलता नहीं, दीर्घकालिक राजनीतिक इच्छाशक्ति, संगठनात्मक विस्तार और नए सामाजिक समूहों तक पहुंच बनाने की क्षमता का भी परिणाम था।

इसलिए असहमति को केवल इस आधार पर नहीं समझा जाना चाहिए कि वह किसके विरुद्ध है। अधिक महत्वपूर्ण यह देखना है कि वह किस राजनीतिक अनुभव से पैदा हुई है। कभी असहमति सत्ता के विरुद्ध होती है, कभी विपक्ष के विरुद्ध और कभी पूरे राजनीतिक वर्ग के विरुद्ध। बांकीपुर जैसे परिणाम बताते हैं कि मतदाता कभी-कभी स्थापित राजनीतिक विकल्पों के भीतर बदलाव तलाशने के बजाय नए राजनीतिक विकल्प को अवसर देता है। यही वह बिंदु है जहां असहमति चुनावी प्रतिक्रिया से आगे राजनीतिक विश्वास के पुनर्गठन की प्रक्रिया बन जाती है। आज का सबसे महत्वपूर्ण प्रश्न यह नहीं है कि कौन-सा दल चुनाव जीत रहा है और कौन हार रहा है। जनमत किस पर और क्यों विश्वास कर रहा है और किस पर से उसका विश्वास क्यों उठ रहा है? यही सवाल भारतीय राजनीति में उभर रही नई असहमति को समझने की कुंजी है। लोकतंत्र में सत्ता बदलना सामान्य राजनीतिक प्रक्रिया है, लेकिन राजनीतिक विश्वास का बदलना कहीं अधिक सामाजिक व पीढ़ीगत प्रक्रिया है। संभवतः अब भारतीय राजनीति इसी बदलते राजनीतिक विश्वास की दिशा से तय होगी।

(प्रो. कुंवर प्रांजल सिंह)

खरी-खरी

गालियों का सौंदर्यशास्त्र

मुकेश राठौर

मानव सभ्यता में गालियों का इतिहास उतना ही पुराना है जितना भाषा का। मानव ने जबसे विचारों की अभिव्यक्ति के लिए भाषा का प्रयोग शुरू किया, तभी से वह गालियों का प्रयोग करने लगा। आप कहेंगे भाषा में गालियों का क्या काम? दरअसल मानव मन की कुंठा और क्रोध प्रकटीकरण के लिए गाली से श्रेष्ठ तरीका नहीं। यह निर्बल का बल है। लड़ाई का अहिंसक हथियार है। हमारे सब्र के बांध का सेफ्टी वाल्व है। दिल की गहराई से निकला मोती है।

इन दिनों देश में सड़क से संसद तक गालियों पर चर्चा हो रही है। बात शुरू तो पेपर लीक से हुई थी, मगर जेन-जी की गालियों पर आकर ठहर गई। कानून बनने के बाद संभव है पेपर लीक रुक भी जाए, लेकिन गालियां नहीं रुकेंगी।

देखा जाए तो देश के विभिन्न क्षेत्रों में विवाह मंडप में गारी गीत का रिवाज है। जब वर पक्ष पर वधू पक्ष की महिलाओं द्वारा विविध गाली गीतों के माध्यम से चारित्रिक आरोप लगाए जाते हैं, तो कोई आपत्ति नहीं करता। बताते हैं गाली देने से रिश्ता मजबूत होता है। होली के मौके पर भी फाग की मस्ती में रंगों के साथ गालियों की भी बौछार की जाती है। घूंघट छूने पर नायिका एक ओर जहां पलट के गाली देने हेतु सावधान करती है तो नायक उसकी गाली को भी मीठी समझ कर गपकने की हामी भरता है।

आप भोजन करने बैठे बिजली चली जाए, नहाते बैठे नल से जल आना बंद जाए, अर्जेंट काल पर मोबाइल नेटवर्क चला जाए, चोट लगने पर मुंह से मां ही निकलें जरूरी नहीं, गाली भी निकलती है। यह बात और है कि गाली में भी मां होती है। बड़े-बड़े साहित्यकार तक अपनी रचनाओं में पात्रों के माध्यम से गालियां देकर सुख पाते हैं।

बहरहाल, गाली ऐसी चीज है जिसमें देकर भी कुछ नहीं देना पड़ता। कई बार किसी को मन ही मन गाली देकर मन प्रसन्न हुआ जाता है तो कभी किसी को सार्वजनिक रूप से बेइज्जत करने के बाद बढ़िया लगता है। कहा जा सकता है कि गाली मन में जमे मैल को उड़ेलकर खुद को शुद्ध कर लेना है। यह एक तरह की थैरेपी, मेडिटेशन, विरेचन है।

पोस्ट

रांची में विरोध-प्रदर्शन में जुटे छात्रों का साफ कहना है कि जब तक सीबीआइ जांच नहीं होगी, तब तक उनका आंदोलन जारी रहेगा। जबकि राज्य सरकार का दावा है कि छात्रों की 98 प्रतिशत मांगें मान ली गई हैं। तो फिर सवाल वही है कि भरोसे का यह संकट खत्म कैसे होगा?

रमेश भट्ट@Rameshbhimtal

छात्रों के प्रदर्शन के दौरान लाठीचार्ज बहुत ही पीड़ादायक घटनाक्रम है। अपनी मांगों को लेकर सड़क पर उतरे युवाओं के साथ ऐसा माहौल बनना चिंता की बात है। सवाल यही है कि क्या छात्र हित की बात राजनीति से ऊपर उठकर होगी? युवाओं के मुद्दे पर हर राजनीतिक दल को बिना भेदभाव के आवाज उठानी चाहिए।

कुमार@kumarupdate9

श्रीलंका के विरुद्ध टेस्ट से पहले अब बहुत ज्यादा समय नहीं बचा है, इसलिए सरफराज खान को अपनी बल्लेबाजी के अभ्यास में कोई कोताही नहीं करनी चाहिए। यह उनके पास अच्छा अवसर है कि वे शानदार प्रदर्शन के दम पर टीम में अपना स्थान मजबूत करें।

मकरंद वेंगणकर@wmakarand

जागरण जनमत — कल का परिणाम

मानसून सत्र में सरकार अपना विधायी एजेंडा बढ़ाने में सफल होती दिख रही है?

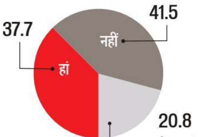

सभी आंकड़े प्रतिशत में

आज का सवाल

क्या चोटिल साई सुदर्शन की जगह टेस्ट टीम में सरफराज खान के चयन का फैसला सही है?

परिणाम जागरण इंटरनेट संस्करण के पाठकों का मत है

जनपथ

जेन-जी पर हेमंत जी बरसाते हैं लट्ठ,
सीएम साहब से जबर दिखता उनका हठ।
दिखता उनका हठ कहां हैं राहुल भाई,
यहां न दिखते छात्र न उनकी कठिन लड़ाई।
समझ सकें न ब्रह्म आज के नेता का मन जी,
इनकी खातिर सिर्फ सगा दिल्ली का जेन-जी!

-ओम प्रकाश तिवारी

जयकृष्ण वाजपेयी
राज्य ब्यूरो प्रमुख, बंगाल

बंगाल डायरी

नाम वही, पहचान की नई लड़ाई

नाम में क्या रखा है? विलियम शेक्सपीयर का यह सवाल साहित्य में जितना खूबसूरत लगता है, राजनीति में उतना ही अधूरा। खासकर बंगाल में तो नाम ही कभी इतिहास बन जाता है, कभी पहचान, कभी अस्मिता और कभी सत्ता का सबसे चमकदार राजनीतिक औजार। पिछले डेढ़ दशक में पश्चिम बंगाल की राजनीति ने इसका सबसे दिलचस्प अध्याय देखा है।

ममता बनर्जी ने वर्ष 2011 में सत्ता संभालने के कुछ ही समय बाद राज्य के नाम से 'पश्चिम' हटाने की कोशिश शुरू की थी। वर्ष 2011 में 'डब्ल्यू' से (वेस्ट) नहीं 'पी' से (पश्चिम) 'पश्चिम बंग' का प्रस्ताव आया, वर्ष 2016 में 'बांग्ला' समेत अलग-अलग भाषाओं में अलग नाम का सुझाव गया और अंततः 2018 में विधानसभा ने सर्वसम्मति से राज्य का नाम 'बांग्ला' करने का प्रस्ताव पारित कर केंद्र को भेजा। लेकिन केंद्र की मंजूरी नहीं मिली। विदेश मंत्रालय ने 'बांग्ला' नाम की 'बांग्लादेश' से समानता को लेकर आपत्ति भी जताई थी।

मगर कहानी यहीं खत्म नहीं हुई। नाम बदलने की वह कोशिश दरअसल एक बड़े राजनीतिक आख्यान का हिस्सा थी। ममता बनर्जी के लिए 'बांग्ला' केवल एक शब्द नहीं था। वह बंगाली पहचान को अपनी राजनीतिक पहचान के साथ जोड़ने की परियोजना थी। सत्ता में आने के बाद उन्होंने बंगाल की सांस्कृतिक और प्रशासनिक पहचान को अपने तरीके से गढ़ने की कोशिश की। 'बिश्व बांग्ला' को सरकारी पहचान का हिस्सा बनाया गया। वर्ष 2018 में राज्य सरकार का आधिकारिक प्रतीक भी सामने आया, जिसमें 'बिश्व बांग्ला' की पहचान को जगह मिली। फिर रंग आया। सरकारी स्कूलों में बच्चों की यूनिफार्म तक नीला-सफेद हो गई। सरकार का तर्क था कि यह सरकारी यूनिफार्म की पहचान है,

शुभेंदु अधिकारी और ममता बनर्जी। फाइल

लेकिन राजनीति में प्रतीकों का अपना जीवन होता है। रंग केवल रंग नहीं रहता, लोगो केवल लोगो नहीं रहता और सरकारी नारा केवल सरकारी नारा नहीं रह जाता।

यहीं से कहानी में एक दिलचस्प मोड़ आता है। इस बार 15 वर्षों की तृणमूल की सत्ता समाप्त हुई और पहली बार भाजपा की सरकार बनी। शुभेंदु अधिकारी मुख्यमंत्री बने। सत्ता बदलते ही सरकार की भाषा बदलने लगी। नीला-सफेद की जगह भगवा रंग सरकारी दृश्य-पटल पर दिखाई देने लगा। 'बिश्व बांग्ला' का सरकारी वेबसाइटों से हटना और राष्ट्रीय प्रतीक अशोक स्तंभ की वापसी इस बदलाव का स्पष्ट संकेत बना। सरकार ने 'बांग्लार बाड़ी' जैसी योजना का नाम बदलकर 'पश्चिम बंगाल आवास' कर दिया। तर्क दिया गया कि यह नाम पश्चिम बंगाल के गठन और उसके इतिहास की स्मृति से जुड़ा है।

अब राज्य के मूल नाम का प्रश्न फिर सामने है। विडंबना देखिए- जिस 'पश्चिम' को हटाने के लिए ममता बनर्जी की सरकार ने डेढ़ दशक तक राजनीतिक इच्छाशक्ति दिखाई, वही 'पश्चिम' अब नई सरकार के लिए इतिहास का एक जरूरी हिस्सा बन गया है। 'बांग्ला' की जगह 'पश्चिम बंगाल' केवल प्रशासनिक नाम नहीं, विभाजन और राज्य के गठन की स्मृति का प्रतीक बताया जा रहा है। यानी एक सरकार जिस नाम को अतीत का बोझ मानकर हटाना चाहती थी, वहीं दूसरी सरकार उसी नाम को इतिहास की विरासत बताकर बचाना चाहती है। यहां असली सवाल नाम का नहीं, नाम पर अधिकार का है।

बंगाल की राजनीति में लंबे समय से यह मुकाबला चलता रहा है कि बंगाली अस्मिता की असली आवाज कौन है। ममता बनर्जी ने इसे क्षेत्रीय स्वाभिमान और बंगाली संस्कृति के प्रश्न से जोड़ा। भाजपा ने अब उसी मैदान में प्रवेश करते हुए अपनी व्याख्या रखी है- बंगाली अस्मिता का मतलब केवल 'बांग्ला' कहना नहीं, बल्कि पश्चिम बंगाल के गठन, विभाजन, विस्थापन और राष्ट्रीय एकीकरण के इतिहास को भी याद रखना है। यही कारण है कि आज बंगाल में नाम बदलने की राजनीति को केवल नाम बदलने की राजनीति समझना भूल होगी। यह दरअसल स्मृति बदलने, प्रतीक बदलने की कोशिश है। ममता के दौर में 'बांग्ला' के जरिये जिस राजनीतिक बंगाल की रचना की जा रही थी, भाजपा सरकार अब उसी बंगाल को 'पश्चिम बंगाल' की ऐतिहासिक पहचान में वापस स्थापित करना चाहती है। मगर इतिहास किसी सरकारी आदेश से मिटता नहीं और किसी नए नाम से बनता नहीं।

नाम बदलते हैं, लेकिन लोग अपने अनुभवों, आदतों और स्मृतियों में पुराने नामों को लंबे समय तक जीवित रखते हैं। बंगाल में भी यही होगा। ममता बनर्जी ने यदि 'बांग्ला' में बंगाल की आत्मा देखने की कोशिश की थी तो शुभेंदु अधिकारी 'पश्चिम बंगाल' में उसके इतिहास को देखने की कोशिश कर रहे हैं। दोनों के बीच फर्क इतना है कि एक ने पहचान को वर्तमान की राजनीतिक परियोजना बनाया, दूसरा उसी पहचान को अतीत की ऐतिहासिक स्मृति से जोड़ रहा है।

इसलिए शेक्सपीयर का सवाल आज भी प्रासंगिक है- नाम में क्या रखा है? बंगाल शायद इसका जवाब कुछ यूं देगा- नाम में बहुत कुछ रखा है, बशर्ते उसके पीछे सत्ता हो। सत्ता बदली तो नाम का अर्थ भी बदल गया। फिलहाल कहानी का सबसे बड़ा व्यंग्य यही है- जिस 'बांग्ला' को एक दौर में बंगाल की अस्मिता का भविष्य बताया गया था, वही आज सत्ता परिवर्तन के बाद उसकी स्मृति के खिलाफ खड़ी एक राजनीतिक विरासत बन गई है। बंगाल का नाम अभी वही है- पश्चिम बंगाल। बदला है तो केवल उस नाम को देखने वाला सत्ता का चश्मा।

मंथन

श्री राम शा
shriramshaw@nda.jagran.com

अंतरिक्ष से जुड़े मलबे का संकट

बड़ी संख्या में निष्क्रिय उपग्रहों और राकेटों के अवशेषों के कारण अंतरिक्ष में व्यापक कचरा जमा हो गया है। एक हालिया घटना ने इस गंभीर संकट को फिर से उजागर किया है

प्रतीकात्मक

मनुष्य ने जब पहली बार अंतरिक्ष की ओर कदम बढ़ाया था, तब पृथ्वी की परिक्रमा करता एकमात्र प्राकृतिक उपग्रह केवल चंद्रमा था। लेकिन आज समय बदल चुका है। अंतरिक्ष की यह असीम दुनिया अब मानव निर्मित मलबे, निष्क्रिय उपग्रहों और राकेटों के अवशेषों का एक विशाल कचराघर बनती जा रही है। हाल ही में स्पेसएक्स का एक अनियंत्रित राकेट बूस्टर तेज गति से चंद्रमा की सतह से जा टकराया, जिस कारण यह विषय एक बार फिर सुर्खियों में है। यह दुर्घटना केवल एक अकेली घटना नहीं है, बल्कि यह इस बात की चेतावनी है कि अंतरिक्ष में हमारा बढ़ता हस्तक्षेप अब केवल पृथ्वी की कक्षाओं तक सीमित नहीं रहा, बल्कि यह हमारे अंतरिक्षीय पड़ोस यानी चांद तक अपनी पहुंच बना चुका है।

पृथ्वी की निचली कक्षाओं से लेकर अंतरिक्ष के खाली विस्तार तक आज हजारों टन मलबा तैर रहा है। यदि आंकड़ों पर नजर डालें, तो पृथ्वी की परिक्रमा कर रहे इस कचरे का वजन लगभग 13,486 टन आंका गया है। इस मलबे में निष्क्रिय उपग्रह, राकेट के छोड़े गए हिस्से और नैनो-कण से लेकर 10 सेंटीमीटर से बड़े 36 हजार से अधिक टुकड़े शामिल हैं। यह मलबा अंतरिक्ष में लगभग सात किमी प्रति सेकंड की अकल्पनीय रफ्तार से घूम रहा है। इतनी अधिक गति पर जरा सा टकराव किसी भी कार्यशील उपग्रह को मलबे के ढेर में बदल सकता है।

स्पेसएक्स के फाल्कन 9 राकेट का चार टन वजनी दूसरा चरण, जो पिछले साल से अंतरिक्ष में भटक रहा था, लगभग 8,690 किलोमीटर प्रति घंटे की रफ्तार से चंद्रमा के आइंस्टीन क्रेटर के पास टकराया। हालांकि इस टक्कर से पृथ्वी पर किसी को कोई सीधा खतरा नहीं था, लेकिन इसने इस बात को उजागर कर दिया कि पुरानी अंतरिक्ष तकनीकों और अंतरिक्ष हार्डवेयर के निपटान में किस हद तक लापरवाही बरती जा रही है। अंतरिक्ष के इस कचरे का सबसे डरावना पहलू 'केसलर सिंड्रोम' की परिकल्पना है। यह एक ऐसी श्रृंखला प्रतिक्रिया है जिसमें अंतरिक्ष का एक मलबा दूसरे से टकराकर और अधिक मलबे पैदा करता है। यदि यह सिलसिला थमा नहीं, तो आने वाले समय में पृथ्वी की कक्षाएं पूरी तरह से उपयोग के अयोग्य हो जाएंगी और मानवता अंतरिक्ष से पूरी तरह कट सकती है।

इस मलबे से निपटने का पारंपरिक तरीका यह रहा है कि इसे पृथ्वी के वायुमंडल में खींचकर जला दिया जाए। स्पेसएक्स का स्टारलिंक उपग्रह कार्यक्रम हर दिन अंतरिक्ष से ऐसे मलबे को वायुमंडल में जला रहा है। वायुमंडल में इन उपग्रहों के जलने से निकलने वाले कालिख और एलुमिना कण हमारी जीवनरक्षक ओजोन परत को गंभीर नुकसान पहुंचा रहे हैं, जो हमें सूर्य की हानिकारक पराबैंगनी किरणों से बचाती है। इसके अलावा, चंद्रमा की सतह पर भविष्य में नासा के 'आर्टेमिस' कार्यक्रम के तहत इंसानी बस्तियां बसाने की योजनाएं हैं। ऐसे में वहां अनियंत्रित राकेटों का गिरना अंतरिक्ष यात्रियों और भावी चंद्र आधारों के लिए एक बड़ा खतरा बन सकता है। इस विकराल समस्या से पार पाने के लिए हमें तीन मोर्चों पर एक साथ काम करने की आवश्यकता है- तकनीक, नीति और हमारी दार्शनिक सोच।

सक्रिय मलबा निष्कासन तकनीक : विज्ञानियों को सक्रिय रूप से पुराने अंतरिक्ष मलबे को हटाने वाली तकनीकों पर काम करना होगा। इसमें जाल, चुंबक, टेथर, सेलर, और हार्पून जैसी तकनीकों का उपयोग करके पुराने अंतरिक्ष यान को या तो वायुमंडल में गिराना होगा या सुरक्षित 'ग्रेवयार्ड आर्बिट' में पहुंचाना होगा। जापान जैसी अंतरिक्ष एजेंसियां पर्यावरण के अनुकूल सामग्री से अंतरिक्ष यान बनाने के प्रयोग भी कर रही हैं।

कड़े नीतिगत नियम : उपग्रहों के जीवनकाल और उनके निपटान को लेकर वैश्विक स्तर पर नीतियों को सख्त करना होगा। पहले अंतरिक्ष यान को मिशन के बाद 25 साल तक कक्षा में छोड़ने की अनुमति थी, जिसे अब घटाकर पांच साल कर दिया गया है। यूरोपीय अंतरिक्ष एजेंसी (ईएसए) द्वारा 'जीरो डिब्रिस' नीति का समर्थन करना एक सराहनीय कदम है, लेकिन अंतरिक्ष यातायात प्रबंधन (स्पेस ट्रैफिक मैनेजमेंट) के लिए एक सार्वभौमिक वैश्विक प्रणाली का होना अभी भी बाकी है।

दृष्टिकोण में बदलाव : सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि हमें अंतरिक्ष को केवल एक अजीवित संसाधन या प्रतिष्ठा की दौड़ का मैदान समझना बंद करना होगा। अंतरिक्ष और पृथ्वी अलग-थलग दायरे नहीं हैं, बल्कि यह समुद्र की गहराइयों से लेकर वायुमंडल और चंद्रमा की सतह तक एक जुड़ा हुआ पारिस्थितिक तंत्र है। अंतरिक्ष आधुनिक अर्थव्यवस्था और सुरक्षा की रीढ़ बन चुका है। यदि हमने समय रहते इस मलबे को हटाने और अंतरिक्ष के प्रति जिम्मेदार नैतिक दृष्टिकोण नहीं अपनाया, तो वह दिन दूर नहीं जब हम अपने ही बनाए कचरे के कैदी बनकर रह जाएंगे। आसमान की ओर देखने का हमारा जो सुकून भरा अनुभव है, उसे बचाने के लिए आज पूरी दुनिया को एकजुट होकर कड़े कदम उठाने होंगे।

तेल व गैस की खोज के लिए ओएनजीसी-शेल में समझौता

नई दिल्ली: सार्वजनिक क्षेत्र की कंपनी आयल एंड नेचुरल गैस कारपोरेशन (ओएनजीसी) ने सोमवार को कहा कि उसने शेल एनर्जी इंडिया प्राइवेट लिमिटेड के साथ एक गैर-बाध्यकारी समझौता किया है। इस समझौते के तहत दोनों कंपनियां गहरे पानी में तेल व गैस की खोज करेंगी। ओएनजीसी ने एक एक्स पोस्ट में बताया कि इस समझौते में भारत के ऊर्जा क्षेत्र में संभावित सहयोग शामिल है। (प्रेट्र)

जीडीपी वृद्धि के अनुमानों में हालिया बदलाव और थोक व खुदरा कीमतों में बीच बढ़ते अंतर के बावजूद भारत की बुनियादी ग्रोथ की कहानी संरचनात्मक रूप से मजबूत बनी हुई है।
– हरीश कृष्णन, मुख्य निवेश अधिकारी, आदित्य बिड़ला सन लाइफ एएमसी

सेंसेक्स	78,542.44	▲ 43.27
निफ्टी	24,583.80	▲ 13.15
सोना प्रति दस ग्राम	₹ 1,56,000	▲ ₹ 2,000
चांदी प्रति किलो ग्राम	₹ 2,40,000	▲ ₹ 5,200
डालर	₹ 95.30	▲ ₹ 0.13
क्रूड प्रति बैरल	$ 84.47	

एक नजर में

लगातार पांचवें दिन बढ़ा सोना, चांदी में भी उछाल

नई दिल्ली: रुपये में गिरावट के चलते सोना और चांदी में सोमवार को तेजी दर्ज की गई। आल इंडिया सराफा एसोसिएशन के अनुसार, दिल्ली में सोना लगातार पांचवें दिन दो हजार रुपये बढ़कर 1.56 लाख रुपये प्रति दस ग्राम पर पहुंच गया। इसी तरह, चांदी की कीमत में 5,200 रुपये की बढ़ोतरी दर्ज की गई। अब चांदी का मूल्य 2.40 लाख रुपये प्रति किलोग्राम हो गया है। कारोबारियों का कहना है कि रुपये में गिरावट से घरेलू बाजार में आयाति सोना-चांदी महंगा हो गया, जबकि विदेशी बाजार में सोने में मामूली गिरावट ने बढ़त को सीमित कर दिया। (प्रेट्र)

डालर के मुकाबले रुपये में 13 पैसे की गिरावट

मुंबई: कच्चे तेल की कीमतों में तेजी के चलते सोमवार को रुपये में 13 पैसे की गिरावट दर्ज की गई और यह अमेरिकी डालर के मुकाबले 95.30 के स्तर पर बंद हुआ। विदेशी मुद्रा कारोबारियों ने कहा कि पश्चिम एशिया में बातचीत में किसी बड़ी सफलता के न मिलने से स्थानीय मुद्रा पर और दबाव पड़ा, जबकि विदेशी संस्थागत निवेश से कुछ सहारा मिला। अंतर-बैंक विदेशी मुद्रा विनिमय बाजार रुपये 95.18 पर खुला और दिनभर 95.18–95.31 के दायरे में कारोबार किया। (प्रेट्र)

वोडाफोन आइडिया को 3,754 करोड़ का घाटा

नई दिल्ली: कर्ज में डूबी दूरसंचार कंपनी वोडाफोन आइडिया ने बताया कि चालू वित्त वर्ष की पहली तिमाही (अप्रैल-जून 2026) में उसका घाटा कम होकर 3,754 करोड़ रुपये रह गया है। इसकी मुख्य वजह सरकार की ओर से बकाया राशि पर दी गई राहत और प्रमोटर ग्रुप की ओर से कंपनी के लिए तय किए गए शेयरों की कीमत में हुई काल्पनिक बढ़ोतरी है। अप्रैल-जून 2025 में कंपनी को 6,611 करोड़ रुपये का शुद्ध घाटा हुआ था। 30 जून 2026 को समाप्त तिमाही में कंपनी पर शुद्ध देयता 1.56 लाख करोड़ रुपये थी। (प्रेट्र)

सात साल के उच्चतम स्तर पर चीनी के दाम

निर्यात पर रोक के बावजूद गन्ने का रकबा घटने और एथनाल नीति से कम उत्पादन ने बदला बाजार

अजीत चौधरी • जागरण

- सीमित स्टाक के कारण भी चीनी की कीमतों में हो रही बढ़ोतरी
- गन्ने की कम पैदावार और कोल्हू को अधिक बिक्री भी प्रमुख कारण

4,400 रुपये प्रति क्विंटल पर पहुंचा मिलों से बिकने वाली चीनी का भाव

5,000 रुपये प्रति क्विंटल तक पहुंच सकता है मूल्य उत्पादन नहीं बढ़ने पर

बिजनौर : कोरोना काल के बाद स्थिर चल रहे चीनी के दामों में अब वृद्धि देखी जा रही है। जुलाई में मिलों से थोक में बिकने वाली चीनी का भाव लगभग 4,400 रुपये प्रति क्विंटल तक पहुंच गया है, जो कि पिछले सात वर्षों का उच्चतम स्तर है। इससे पहले, चीनी का एक्स फैक्ट्री मूल्य 3,900 से 4,100 रुपये प्रति क्विंटल के बीच बना हुआ था। यह तब है जब केंद्र ने चीनी निर्यात पर रोक लगा रखी है। इस मूल्य वृद्धि ने गन्ना अर्थव्यवस्था को एक बार फिर से केंद्र में ला खड़ा किया है। चुनावी साल के चलते प्रदेश के किसानों में अगले वर्ष गन्ने के दाम में बढ़ोतरी की उम्मीद जगी है।

कोरोना काल के दौरान गन्ने का रकबा और उत्पादन दोनों बढ़े थे, जिससे चीनी का स्टाक बढ़ा और दाम में गिरावट हुई थी। अब कम उत्पादन, सीमित स्टाक और एथनाल डायवर्जन ने मिलकर कीमतों को ऊपर धकेल दिया है। गन्ने का रकबा घटने का सीधा असर चीनी के उत्पादन पर पड़ा है। सामान्यतः निर्यात बंद होने से घरेलू बाजार में आपूर्ति बढ़ती है, लेकिन उत्पादन में कमी और घटते स्टाक ने उल्टा असर डाला है। पिछले कुछ वर्षों में चीनी मिलों ने अतिरिक्त स्टाक से निपटने के लिए एथनाल उत्पादन पर जोर दिया था, लेकिन अब यही रणनीति बाजार के समीकरण बदल रही है।

विशेषज्ञों का मानना है कि यदि उत्पादन में उल्लेखनीय वृद्धि नहीं हुई और एथनाल की मांग बनी रही, तो आने वाले महीनों में चीनी के एक्स-फैक्ट्री दाम 5,000 रुपये प्रति क्विंटल तक पहुंच सकते हैं। पैदावार में कमी के साथ-साथ किसानों ने कोल्हुओं को भी अपेक्षाकृत अधिक गन्ना बेचा, जिससे मिलों में पेराई घटी और चीनी उत्पादन कम हुआ। यह स्थिति प्रदेश के अन्य जिलों में भी देखी जा रही है।

फुटकर बाजार में भी दिख रहा बढ़ोतरी का असर

थोक बाजार की तेजी का असर खुदरा बाजार पर भी पड़ा है। चीनी 52 रुपये प्रति किलोग्राम या उससे अधिक के भाव पर बिक रही है। मेरठ मंडी में थोक चीनी का बाजार भाव लगभग 4700 से 4800 रुपये प्रति क्विंटल के आसपास है। हालांकि, कुल खपत में आम उपभोक्ताओं की हिस्सेदारी छह प्रतिशत से भी कम होने के कारण इसका व्यापक असर सीमित रहने की संभावना है।

किसानों को गन्ने का मूल्य बढ़ने की उम्मीद

उत्तर प्रदेश के चुनावी साल में चीनी के दामों में आई तेजी ने किसानों की उम्मीदें भी बढ़ा दी हैं। भाकियू (अराजनैतिक) के युवा प्रदेश अध्यक्ष दिगंबर सिंह का कहना है कि यदि चीनी के दाम अच्छे हैं तो मिलें मुनाफे में हैं। सरकार को गन्ने का मूल्य ऐसा तय करना चाहिए कि किसान उत्साह के साथ खेती करे। बिजनौर चीनी मिल यूनिट हेड रविंद्र शुक्ला का मानना है कि लागत के मुकाबले अभी और सुधार की गुंजाइश है।

बिजनेस से जुड़ी खबरों और अपडेट के लिए स्कैन करें या विजिट करें jagran.com

पीएफ खाते पर सेवानिवृत्ति के बाद तीन वर्ष तक मिलता है ब्याज

निजी क्षेत्र के कर्मचारियों के भविष्य को सुरक्षित रखने के उद्देश्य से प्रोविडेंट फंड (पीएफ) खाता खोलने का प्रविधान है। इस खाते में कर्मचारी के कुल वेतन का 12 प्रतिशत हिस्सा और इतना ही हिस्सा नियोक्ता की ओर से जमा किया जाता है। नियोक्ता की ओर से जमा किए जाने वाले 12 प्रतिशत हिस्से में से 8.33 प्रतिशत राशि कर्मचारी पेंशन योजना में जाती है। पीएफ खाते में जमा राशि पर कर्मचारी भविष्य निधि संगठन (ईपीएफओ) की ओर से सालाना आधार पर ब्याज भी दिया जाता है। इस ब्याज की बदौलत कर्मचारी की सेवानिवृत्ति के समय पीएफ खाते में एक बड़ा फंड तैयार हो जाता है। कर्मचारी की सेवानिवृत्ति के बाद पीएफ खाते पर मिलने वाले ब्याज पर पढ़िए **मनोज कुमार** की रिपोर्ट...

कब तक मिलता है ब्याज

ईपीएफओ की वेबसाइट के अनुसार, जब कोई कर्मचारी तय समय (58 वर्ष) पर सेवानिवृत्त हो जाता है तो उसके पीएफ खाते पर अगले तीन वर्ष तक ब्याज मिलता रहेगा। उदाहरण के लिए- यदि कोई कर्मचारी अपनी तय उम्र सीमा 58 वर्ष पर सेवानिवृत्त होता है तो इसके तीन वर्ष बाद तक पीएफ खाते में जमा राशि पर ब्याज मिलता रहेगा। जब कर्मचारी अपने पीएफ खाते से पैसा निकालेगा तो उसे यह ब्याज भी मिल जाएगा। कर्मचारी 58 वर्ष की आयु पूरी होने के बाद कभी भी पीएफ खाते से निकासी के लिए स्वतंत्र है।

58 वर्ष आयु होने तक मिलता है ब्याज

ईपीएफओ के अनुसार, यदि कर्मचारी तय समय से पहले स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति ले लेता है तो पीएफ खाते में जमा राशि पर 58 वर्ष पूरे होने तक ब्याज मिलता रहेगा। यह नियम केवल 55 वर्ष से कम उम्र के कर्मचारियों के स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति लेने वालों पर लागू होगा। उदाहरण के लिए, यदि कोई कर्मचारी 50 वर्ष की उम्र में स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति लेता है तो उसके पीएफ खाते पर कर्मचारी के 58 वर्ष पूरा होने तक ब्याज मिलता रहेगा।

कब निष्क्रिय होता है पीएफ खाता

ईपीएफओ के नियमों के अनुसार, जब किसी पीएफ खाते में तीन वर्ष या 36 महीने तक कोई अंशदान या पैसा जमा नहीं होता है तो उसे निष्क्रिय मान लिया जाता है। हालांकि, इस अवधि के लिए पीएफ खाते में जमा राशि पर ब्याज मिलता रहता है। एक बार पीएफ खाता निष्क्रिय होने के बाद उस पर ब्याज नहीं मिलता है। ईपीएफओ समय-समय पर पीएफ खाते को लेकर एडवाइजरी जारी करता है। ईपीएफ खाता नौकरी खत्म होने के बाद हमेशा ब्याज कमाने के लिए नहीं बना है। सेवानिवृत्ति की उम्र और तीन साल का नियम यह तय करते हैं कि ब्याज कितने समय तक मिल सकता है।

ईपीएफ सदस्य क्या करें

- अपने यूएएन के जरिये ईपीएफ बैलेंस और सर्विस हिस्ट्री की जांच करते रहें।
- आधार, बैंक खाता और दूसरी केवाईसी (अपना ग्राहक जानो) जानकारी को अपडेट रखें।
- सेवानिवृत्ति के बाद पीएफ खाते को ऐसे ही न छोड़ें, बल्कि पैसे निकालने का सही समय और नियम देखें।
- ईपीएफ बैलेंस, मिले हुए ब्याज और पैसे निकालने के दावों का रिकार्ड रखें।

जागरण इन्फो

रूस से लगातार दूसरे महीने रिकार्ड कच्चे तेल का आयात

नई दिल्ली, प्रेट्र: भारत ने जुलाई में लगातार दूसरे महीने रिकार्ड कच्चे तेल का आयात किया है। यह इस बात को दर्शाता है कि भारत ने पश्चिमी प्रतिबंधों के बावजूद सस्ते रूसी तेल पर अपनी निर्भरता बनाए रखी है।

सेंटर फार रिसर्च आन एनर्जी एंड क्लीन एयर (सीआरईए) के डाटा के अनुसार, भारत ने पिछले महीने 5.5 अरब यूरो मूल्य का रूसी कच्चा तेल आयात किया, जो जून की तुलना में 2.1 प्रतिशत अधिक है। जुलाई में रूस से कुल जीवाश्म ईंधन खरीद में कच्चे तेल की 87 प्रतिशत हिस्सेदारी रही है। जून 2026 में भारत ने 4.5 अरब यूरो मूल्य का रूसी कच्चा तेल खरीदा था। भारत की रूसी कच्चे तेल पर निर्भरता फरवरी 2022 में रूस के यूक्रेन पर आक्रमण के बाद बढ़ गई, जब पश्चिमी प्रतिबंधों और यूरोपीय खरीदारों के पलायन के कारण मास्को ने एशियाई रिफाइनर्स को बड़ी छूट की पेशकश की। 2021 में, रूस ने भारत को प्रतिदिन एक लाख बैरल से कम कच्चा तेल प्रदान किया। यह मात्रा 2022 में लगभग 7,40,000 बैरल प्रति दिन और 2023 में लगभग 18 लाख बैरल प्रति दिन तक बढ़ गई। जुलाई में भारतीय रिफाइनर्स ने रिकार्ड 28 लाख बैरल प्रति दिन रूसी कच्चा तेल आयात किया, जो तेल के आयात का 55.5 प्रतिशत है।

भारत ने पिछले महीने रूस से 5.5 अरब यूरो मूल्य के कच्चे तेल का आयात किया, जो इसी वर्ष जून में 4.5 अरब यूरो था

1601 सीरीज का इस्तेमाल करें यूटिलिटी व लाजिस्टिक्स फर्में

नई दिल्ली, प्रेट्र: दूरसंचार नियामक टेलीकाम रेगुलेटरी अथारिटी आफ इंडिया (ट्राई) ने सोमवार को बैंकिंग, वित्तीय सेवाओं और बीमा (बीएफएसआइ) के अलावा अन्य क्षेत्रों में लेनदेन और सेवा काल के लिए 1601 नंबर वाली सीरीज का इस्तेमाल करने का निर्देश दिया। पहले चरण में यूटिलिटी, कोरियर और लाजिस्टिक्स क्षेत्र की कंपनियों को काल करने के लिए 1601 नंबर वाली सीरीज का इस्तेमाल करने के लिए कहा गया है।

ट्राई ने स्पष्ट किया है कि इस नंबर सीरीज का इस्तेमाल प्रचार वाली वायस काल के लिए नहीं किया जाना चाहिए। अभी बीएफएसआइ क्षेत्र और सरकारी संस्थाओं के लिए 1600 नंबर वाली सीरीज आवंटित की गई है। ट्राई ने कहा कि बीएफएसआइ क्षेत्र की संवेदनशीलता को देखते हुए अन्य क्षेत्रों के लिए 1601 नंबर की अलग सीरीज जारी की गई है।

डीआइआइ का तीसरे वर्ष भी पांच लाख करोड़ से ज्यादा निवेश

- घरेलू निवेशकों ने 2026 में सात अगस्त तक 5.13 लाख करोड़ रुपये का निवेश किया
- वर्ष 2025 में कुल 7.88 लाख करोड़ रुपये का शुद्ध निवेश किया था डीआइआइ ने

नई दिल्ली, आइएएनएस: घरेलू संस्थागत निवेशकों (डीआइआइ) ने तीसरे लगातार कैलेंडर वर्ष में शुद्ध इक्विटी निवेश में पांच लाख करोड़ रुपये का आंकड़ा पार कर लिया है। यह विदेशी पूंजी प्रवाह में उतार-चढ़ाव के बीच भारतीय बाजारों को समर्थन देने में उनकी बढ़ती भूमिका को दर्शाता है।

स्टाक एक्सचेंज के आंकड़ों के अनुसार, सात अगस्त तक डीआइआइ इक्विटीज यानी शेयरों में 5.13 लाख करोड़ रुपये का शुद्ध निवेश कर चुके हैं। 2025 में समान अवधि में डीआइआइ ने 4.48 लाख करोड़ रुपये और पूरे कैलेंडर वर्ष 2025 में 7.88 लाख करोड़ रुपये का शुद्ध निवेश किया। कैलेंडर वर्ष 2024 में यह आंकड़ा 5.26 लाख करोड़ रुपये था। आंकड़ों के अनुसार, पिछले 36 महीनों में डीआइआइ ने भारतीय इक्विटीज में 19.21 लाख करोड़ रुपये का निवेश किया है, जबकि विदेशी पोर्टफोलियो निवेशकों (एफपीआइ) ने इस अवधि में लगभग 10 लाख करोड़ रुपये की निकासी की है। डीआइआइ में बैंक, घरेलू वित्तीय संस्थान, बीमा कंपनियां, पेंशन फंड्स व म्यूचुअल फंड शामिल हैं।

बाजार विशेषज्ञों का मानना है कि घरेलू प्रवाह भारतीय अर्थव्यवस्था की मजबूती और म्यूचुअल फंड के माध्यम से खुदरा निवेशकों की भागीदारी का परिणाम है। डीआइआइ ने उपभोक्ता शेयरों, सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों, ऊर्जा, दूरसंचार, धातुओं और प्रौद्योगिकी कंपनियों में अधिक निवेश किया है।

राष्ट्रीय फलक

एथनाल और ईवी को विकल्प नहीं, पूरक के तौर पर देखें: आइएफजीई

- ईं10 के मुकाबले ई20 से ईंधन दक्षता में 2-6 प्रतिशत तक कमी का अनुमान

नई दिल्ली, एएनआइ: ई20 पेट्रोल से वाहनों के माइलेज और अनुकूलता को लेकर जारी बहस के बीच इंडियन फेडरेशन आफ ग्रीन एनर्जी (आइएफजीई) ने कहा है कि भारत को एथनाल और इलेक्ट्रिक वाहनों को एक-दूसरे के विकल्प के तौर पर नहीं, बल्कि पूरक के रूप में देखना चाहिए। संगठन के मुताबिक, देश को एथनाल, ईवी, हाइब्रिड, सीएनजी और हाइड्रोजन जैसी तकनीकों को साथ लेकर चलने वाली विविध ऊर्जा रणनीति की जरूरत है।

आइएफजीई के क्षेत्रीय निदेशक दिलीप पाटिल ने कहा कि भारत में करीब 30 करोड़ इंटरनल कंबशन इंजन (आइसीई) वाहन पहले से सड़कों पर हैं। ऐसे में एथनाल पेट्रोल पर निर्भरता और कच्चे तेल के आयात को कम करने में मदद कर सकता है, जबकि ईवी और हाइब्रिड जैसी तकनीकें धीरे-धीरे बढ़ रही हैं। संगठन ने एआरएआइ, इंडियन आयल और सियाम के अध्ययनों का हवाला देते हुए कहा कि ई10 की तुलना में ई20 से ईंधन दक्षता में करीब 2-6 प्रतिशत की कमी आ सकती है। हालांकि, परीक्षणों में इंजन को बड़े पैमाने पर नुकसान पहुंचने की बात सामने नहीं आई है। नई गाड़ियों में एथनाल-अनुकूल सामग्री के इस्तेमाल पर भी जोर बढ़ रहा है। सरकार का एक तर्क ये है कि ई20 पेट्रोल को बढ़ावा देने से विदेशी मुद्रा की बचत होगी। 2014-15 के बाद से 1.97 लाख करोड़ रुपये से ज्यादा की विदेशी मुद्रा की बचत हुई है और लगभग 316 लाख मीट्रिक टन कच्चे तेल की जगह एथनाल का इस्तेमाल हुआ है।

वहीं डीजल में एथनाल मिलाने का प्रयोग अभी सफल नहीं हो पाया है। प्रेट्र के अनुसार, पेट्रोलियम एवं प्राकृतिक गैस राज्यमंत्री सुरेश गोपी ने संसद में बताया कि एथनाल मिलाने से डीजल का फ्लैश प्वाइंट काफी कम हो गया और मिश्रित ईंधन सुरक्षा मानकों पर खरा नहीं उतरा।

खेती की मुश्किलों का तकनीकी समाधान खोज रहे युवा इनोवेटर

भारत में युवा इनोवेटर अब पारंपरिक क्षेत्रों से आगे बढ़कर कृषि और अंतरिक्ष जैसे महत्वपूर्ण क्षेत्रों की चुनौतियों के स्वदेशी समाधान तैयार कर रहे हैं। कृषि क्षेत्र में जहां इलेक्ट्रिक मशीनों और प्लांट बायोटेक्नोलाजी के जरिये लागत घटाने, श्रम की कमी दूर करने और उत्पादन बढ़ाने पर काम हो रहा है, वहीं स्टार्टअप और डीप-टेक कंपनियां अंतरिक्ष अभियानों को सस्ता और सुरक्षित बनाने के साथ कक्षीय कचरे की समस्या से निपटने की कोशिश कर रही हैं। इन पहलों में तकनीक के साथ आत्मनिर्भरता और टिकाऊ विकास पर भी जोर दिखाई दे रहा है।

- इलेक्ट्रिक गन्ना हार्वेस्टर से श्रम की कमी और बढ़ती कटाई लागत घटाने की कोशिश

पुणे, एएनआइ : भारत का कृषि क्षेत्र तकनीकी बदलाव के दौर से गुजर रहा है। युवा इनोवेटर मजदूरों की कमी, बढ़ती लागत और टिकाऊ उत्पादन जैसी चुनौतियों के समाधान के लिए खेती की इलेक्ट्रिक मशीनों से लेकर उन्नत प्लांट बायोटेक्नोलाजी तक पर काम कर रहे हैं। इन पहलों में छोटे और मझौले किसानों की जरूरतों को ध्यान में रखते हुए कम लागत और स्थानीय परिस्थितियों के अनुकूल तकनीक विकसित करने पर जोर है।

पुणे की डीप-टेक स्टार्टअप शास्त्रत्व टेक्नोलाजीज 'सक्षम ई1एस' नाम का पूरी तरह इलेक्ट्रिक गन्ना कटाई प्लेटफार्म विकसित कर रही है। भारत में लाखों किसान गन्ने की खेती पर निर्भर हैं, लेकिन मजदूरों की कमी और कटाई की बढ़ती लागत बड़ी चुनौती है।

कंपनी के सह-संस्थापक अथर्व महेंद्र पाटकी के मुताबिक मौजूदा कई गन्ना हार्वेस्टर ट्रैक्टर से जुड़े होते हैं, जबकि सक्षम ई1एस को पूरी तरह इलेक्ट्रिक और खुद चलने वाला बनाया जा रहा है। इसका वजन और कीमत भी कम रखने की कोशिश है, ताकि छोटे और मंझोले किसान इसका इस्तेमाल कर सकें।

पुणे की डीप-टेक स्टार्टअप शास्त्रत्व टेक्नोलाजीज द्वारा विकिसित 'सक्षम ई1एस' हार्वेस्टर। सौ. शास्त्रत्व डाट इन

कृषि नवाचार का दायरा मशीनों तक सीमित नहीं है। पुणे की राइस 'एन शाइन बायोटेक दो दशक से अधिक समय से प्लांट बायोटेक्नोलाजी के क्षेत्र में काम कर रही है। कंपनी टिश्यू कल्चर और आधुनिक रिसर्च तकनीकों से फल, फूल और बागवानी फसलों के लिए रोपण सामग्री तैयार करती है। कंपनी अपने उत्पाद 42 देशों में निर्यात करती है और करीब 1,500 महिलाओं को रोजगार देती है।

अंतरिक्ष की चुनौतियों को टक्कर दे रहे युवा स्टार्टअप

- रीयूजेबल लांच सिस्टम से सस्ता बनाने की कोशिश, इन-हाउस विकसित हो रही राकेट तकनीक, अंतरिक्ष कचरे की निगरानी और रोबोटिक आर्म से सफाई की तैयारी

हैदराबाद, एएनआइ: भारत का अंतरिक्ष क्षेत्र अब केवल सरकारी संस्थाओं तक सीमित नहीं है। इसरो के साथ युवा स्टार्टअप भी नई तकनीकों के जरिये अंतरिक्ष अभियानों को किफायती बनाने और कक्षीय कचरे की चुनौती से निपटने में जुटे हैं। हैदराबाद में विकसित टी-वर्क्स जैसे इनोवेशन हब युवा इंजीनियरों और स्टार्टअप को प्रोटोटाइप तैयार करने, उनका परीक्षण करने और तकनीक को बाजार के लिए तैयार उत्पाद में बदलने की सुविधाएं उपलब्ध करा रहे हैं।

टी-वर्क्स के स्टार्टअप वर्टिकल के प्रमुख सहज के अनुसार, यहां कंपनियों को उन्नत मशीनरी, प्रोटोटाइपिंग सुविधाओं और टेस्टिंग लैब का लाभ मिल रहा है। इसी ईकोसिस्टम में काम कर रही स्पैंट्रिक कंपनी रीयूजेबल लांच सिस्टम विकसित कर रही है। इसका उद्देश्य उपग्रहों को अंतरिक्ष में पहुंचाने की लागत कम करना है। कंपनी राकेट इंजन, फ्लाइट कंप्यूटर, एवियोनिक्स और गाइडेंस सिस्टम जैसी तकनीक खुद विकसित करने पर काम कर रही है।

दूसरी ओर, कास्मोसर्व अंतरिक्ष कचरे की समस्या का समाधान तलाश रही है। निष्क्रिय उपग्रह और राकेट के हिस्से कक्षाओं में सक्रिय मिशनों के लिए खतरा बन सकते हैं। कंपनी ऐसा स्वचालित उपग्रह सिस्टम विकसित कर रही है, जो कचरे की निगरानी कर रोबोटिक आर्म की मदद से उसे पकड़ सके।

टीम के अनुसार, आर्म को अलग-अलग वस्तुओं के आकार और स्थिति के मुताबिक अपनी पकड़ बदलने में सक्षम बनाया जा रहा है।

ई20 से पर्यावरण, खेती व खाद्य सुरक्षा पर असर की आशंका: विशेषज्ञ

नई दिल्ली, प्रेट्र: एथनाल मिश्रित ईंधन को बढ़ावा देने की नीति पर विशेषज्ञों ने पर्यावरण, खेती के स्वरूप, खाद्य सुरक्षा, भूजल और किसानों की आय पर संभावित असर को लेकर चिंता जताई है। दिल्ली साइंस फोरम के विज्ञानी एवं कार्यकर्ता डी. रघुनंदन, कृषि एवं खाद्य प्रसंस्करण मंत्रालय के पूर्व सचिव सिराज हुसैन और नीति आयोग के पूर्व सदस्य रमेश चंद ने कहा कि एथनाल नीति के असर का व्यापक आकलन जरूरी है।

रघुनंदन ने कहा कि एथनाल उत्पादन में मक्के के बढ़ते इस्तेमाल से भारत की स्थिति बदल रही है। पहले देश मक्का का निर्यात करता था, लेकिन अब घरेलू मांग पूरी करने के लिए आयात करना पड़ रहा है। उनके मुताबिक एथनाल नीति ने कृषि को खाद्य जरूरतों से ईंधन उत्पादन की ओर मोड़ने का जोखिम बढ़ाया है। इससे पानी के इस्तेमाल और खेती के पैटर्न पर भी असर पड़ सकता है। रमेश चंद ने कहा कि सरकार ने हाल के वर्षों में अतिरिक्त चावल और चीनी के इस्तेमाल के लिए एथनाल को बढ़ावा दिया। उन्होंने चावल का रकबा घटाकर मक्के की खेती बढ़ाने की जरूरत बताई, क्योंकि धान में अधिक पानी लगता है और इससे मीथेन जैसी ग्रीनहाउस गैस का उत्सर्जन भी अधिक होता है। रघुनंदन ने सरकार से ई20 के बजाय ई10 पर लौटने की सिफारिश की।

ब्राजील से भारत की तुलना नहीं हो सकती : सिराज हुसैन ने भारत की तुलना ब्राजील से करने को उचित नहीं बताया। कहा कि ब्राजील के पास बड़ा कृषि क्षेत्र और चीनी का भारी अधिशेष है, जबकि जलवायु परिवर्तन से भारत का कृषि उत्पादन प्रभावित हो सकता है। उन्होंने कहा कि ब्राजील में 4.5 करोड़ टन चीनी का उत्पादन होता है और 3.6 करोड़ टन का निर्यात किया जाता है। ब्राजील की आबादी कम है और उत्पादन के लिए बहुत बड़ी ज़मीन है।

जेट एयरवेज के फाउंडर नरेश गोयल ने मनी लांड्रिंग केस से बरी करने की अपील की

मुंबई, प्रेट्र : बंद हो चुकी जेट एयरवेज के फाउंडर नरेश गोयल ने सोमवार को मुंबई के एक स्पेशल कोर्ट में अर्जी दाखिल कर मनी लांड्रिंग मामले से बरी करने की अपील की है। यह मामला 538.62 करोड़ रुपये की बैंक धोखाधड़ी से जुड़ा है।

कोर्ट गोयल की अर्जी पर सुनवाई के लिए इस शर्त पर सहमत हुआ कि सुनवाई के दौरान वह मामले को टालने (स्थगन) की मांग नहीं करेंगे। कोर्ट ने अगली सुनवाई 17 अगस्त तक टालने से पहले अभियोजन पक्ष को अपना जवाब दाखिल करने का निर्देश दिया। पिछली सुनवाई के दौरान कोर्ट ने 77 साल के व्यवसायी को मनी लांड्रिंग के मामले में आरोप तय करने के लिए 10 अगस्त को पेश होने का निर्देश दिया था। तब कोर्ट ने गोयल की उस अर्जी को ठुकरा दिया था, जिसमें उन्होंने आरोप से बरी करने की अर्जी दाखिल करने के आधार पर सुनवाई टालने की मांग की थी।

विदेशी पर्यटकों को भारत आने में होगी सुविधा, 11 नए जगहों पर ई-वीजा से मिलेगा प्रवेश

- इन 11 प्रवेश स्थलों में से नौ लैंडपोर्ट और दो एयरपोर्ट, अब 88 जगहों से भारत आ सकेंगे विदेशी पर्यटक

नई दिल्ली, एएनआइ : ई-वीजा वाले विदेशी पर्यटकों को भारत आने में और सहूलियत होगी। विदेशी पर्यटक अब 11 और जगहों से भारत में आ सकेंगे। केंद्र सरकार ने 11 नए इंटरनेशनल एंट्री पाइंट्स (पोर्ट्स) को मंजूरी दे दी है। इससे इंटरनेशनल पोर्टों की संख्या 88 हो गई है। यानी विदेशी अब 88 जगहों से भारत आ सकेंगे। जिनमें 37 एयरपोर्ट, 38 सीपोर्ट (समुद्री मार्ग से प्रवेश) और 13 लैंड पोर्ट शामिल हैं। इस कदम से देश के पर्यटन और व्यापार क्षेत्रों को बढ़ावा मिलने की उम्मीद है।

नौ लैंड पोर्ट यानी जमीन के रास्ते प्रवेश स्थल और दो हवाईअड्डे- भोपाल और तिरुपति हैं। इन लैंड पोर्टों में भारत-पाकिस्तान सीमा पर स्थित अटारी के साथ ही अगरतला, दरंगा, गेडे, घोजाडांगा, हरिदासपुर, जयगांव, डावकी, मोरेह शामिल हैं। सरकारी वेबसाइट के अनुसार, पाकिस्तानी पासपोर्ट रखने वाले या पाकिस्तानी मूल के अंतरराष्ट्रीय यात्रियों को भारतीय मिशन में रेगुलर वीजा के लिए आवेदन करना होगा, क्योंकि उनके लिए ई-वीजा की सुविधा उपलब्ध नहीं है।

गृह मंत्रालय ने कहा कि इन 11 इंटरनेशनल पोर्टों के जुड़ने से इलेक्ट्रानिक वीजा और भी आकर्षक और उपयोगी हो गए हैं। भारत में लगभग 95% ई-वीजा आवेदन 72 घंटे से भी कम समय में प्रोसेस कर दिए जाते हैं। मंत्रालय के अनुसार, पिछले कुछ वर्षों में वीजा व्यवस्था को आसान, सुव्यवस्थित और सरल बनाने के लिए महत्वपूर्ण कदम उठाए गए हैं, ताकि वैध विदेशी यात्रियों को सुविधा मिल सके और साथ ही आंतरिक सुरक्षा को मजबूत करने के लिए तकनीकी बुनियादी ढांचे को भी बेहतर बनाया जा सके। भारतीय वीजा व्यवस्था, खासकर टूरिस्ट वीजा को आसान और सरल बनाने के लिए उठाए गए अहम कदमों में से एक ई-वीजा सुविधा की शुरुआत है।

17 श्रेणियों में ई-वीज़ा जारी करता है भारत

भारत 17 श्रेणियों में ई-वीज़ा जारी करता है, जिनमें टूरिस्ट, पर्वतारोहण, बिजनेस वीजा की छह उपश्रेणी (बी-1 से बी-6), मेडिकल वीजा की चार उपश्रेणी (एम-1 से एम-4), स्टूडेंट वीजा की दो उपश्रेणी (एस-1 और एस-2), ट्रांज़िट, एक्स-1 (अन्य) और ग्रुप विज़िटर वीज़ा (क्रूज) शामिल हैं। भारत अब लगभग 78 प्रतिशत वीज़ा इलेक्ट्रानिक वीज़ा के तौर पर जारी करता है।

उठाए गए मुद्दों पर कार्रवाई की समीक्षा के लिए मेटा टीम व सरकार की होगी बैठक

नई दिल्ली, प्रेट्र : आइटी मंत्रालय के अधिकारी इस हफ्ते के आखिर में मेटा की टीम से मिलेंगे। वे इस बात का जायजा लेंगे कि इंटरनेट मीडिया कंपनी ने किन मुद्दों पर क्या प्रगति की है। इन मुद्दों में फेक और नुकसानदेह कंटेंट को हटाने के बाद भी उसके दोबारा सामने आने और बच्चों के यौन शोषण से जुड़े कंटेंट से निपटने जैसे मामले शामिल हैं, जिन पर कई दौर की बातचीत हो चुकी है। पिछले हफ्ते मेटा और सरकार के बीच लगातार तीन दिन बैठकें हुईं, जिनमें आइटी मंत्री अश्विनी वैष्णव ने कंपनी की वैश्विक टीम से कड़े सवाल-जवाब किए। शुक्रवार को बातचीत का एक टेक्निकल दौर हुआ, जिसमें इंटरनेट मीडिया कंपनी ने बताया कि वह अपने प्लेटफार्म पर डीपफेक, बच्चों के यौन शोषण से जुड़े कंटेंट और बिना लेबल वाले सिंथेटिक रूप से बनाए गए कंटेंट को लेकर सरकार की चिंताओं को कैसे दूर करने की योजना बना रही है।

चिंतन

युवाओं के सब्र का इम्तिहान न लें सरकारें

नीट के बाद अब झारखंड की जेपीएससी-जेएसएससी परीक्षा में सामने आ रहे विवादों ने देश की भर्ती व्यवस्था पर गंभीर सवाल खड़े कर दिए हैं। रांची में सोमवार को जो हुआ, वह केवल छात्रों और पुलिस के बीच टकराव की घटना नहीं है, बल्कि उस बढ़ते आक्रोश का संकेत है जो देश के युवाओं के भीतर लगातार जमा हो रहा है। झारखंड में हजारों छात्र पिछले 17 दिनों से परीक्षा में कथित धांधली के खिलाफ आंदोलन कर रहे थे। जब उनकी आवाज नहीं सुनी गई तो सोमवार को वे विधानसभा घेराव के लिए पहुंच गए। बैरिकेडिंग टूटी, छात्र विधानसभा गेट तक पहुंचे, पुलिस ने लाठीचार्ज किया, आंसू गैस छोड़ी और वाटर कैनन का इस्तेमाल किया। लोकतांत्रिक व्यवस्था में ऐसी स्थिति किसी के लिए भी संतोषजनक नहीं हो सकती। सबसे बड़ा सवाल यह है कि आखिर युवा सड़क पर उतरने को मजबूर क्यों हो रहे हैं? प्रतियोगी परीक्षाएं उनके लिए महज एक परीक्षा नहीं होतीं। इनके पीछे वर्षों की मेहनत, परिवार की उम्मीदें, आर्थिक संघर्ष और बेहतर भविष्य का सपना जुड़ा होता है। जब परीक्षा में पेपर लीक, नकल, फर्जीवाड़े या धांधली के आरोप लगते हैं तो चोट केवल एक परीक्षा पर नहीं होती, बल्कि पूरी व्यवस्था पर युवाओं का भरोसा टूटता है। हर बार परीक्षा में धांधली के पीछे दो गंभीर आशंकाएं सामने आती हैं। पहली पैसे या प्रभाव के जरिए पेपर पास करवाना और नौकरी पाना। दूसरी, पैसे के दम पर परीक्षा से पहले प्रश्नपत्र या गोपनीय सामग्री तक पहुंच बनाने का खेल। इनमें सरकार के नुमाइंदों और जो एजेंसी पेपर करवा रही है, उसके अफसरों की मिलीभगत सामने आती है। कुल मिलाकर अफसर चंद रुपयों के लालच में युवाओं के भविष्य का सौदा कर बैठते हैं और छात्र आंदोलन को मजबूर होते हैं। यदि इन आशंकाओं में सच्चाई है तो यह केवल भ्रष्टाचार नहीं, बल्कि युवाओं के भविष्य के साथ संगठित खिलवाड़ है। इसमें किसी भी स्तर पर अधिकारी, कर्मचारी, परीक्षा एजेंसी या बाहरी गिरोह की संलिप्तता सामने आती है तो उसके खिलाफ ऐसी कार्रवाई होनी चाहिए जो भविष्य के लिए स्पष्ट संदेश बने। यदि छात्रों को परीक्षा में गड़बड़ी का संदेह है तो सरकार को उनके सामने जांच की प्रक्रिया, तथ्य और रिपोर्ट रखनी चाहिए। अगर आरोप गलत हैं तो प्रमाण के साथ स्थिति स्पष्ट की जानी चाहिए और अगर गड़बड़ी हुई है तो जिम्मेदार लोगों के नाम सामने आने चाहिए। सरकारों को भर्ती परीक्षाओं के लिए ऐसी पारदर्शी और सुरक्षित व्यवस्था बनानी होगी जिसमें प्रश्नपत्र तैयार करने से लेकर परीक्षा कराने, उत्तर पुस्तिकाओं के मूल्यांकन और परिणाम जारी करने तक हर स्तर पर जवाबदेही तय हो। संवेदनशील प्रक्रिया में शामिल अधिकारियों और एजेंसियों की जिम्मेदारी स्पष्ट हो। सबसे जरूरी है कि छात्रों की शिकायतों को सुनने के लिए स्थायी संवाद तंत्र बनाया जाए। आंदोलन शुरू होने और विधानसभा घेराव की नौबत आने का इंतजार क्यों किया जाए? सरकारें समय रहते छात्रों के प्रतिनिधियों से बात करें और उनकी शिकायतों पर समयबद्ध कार्रवाई करें। सरकारों को युवाओं के सब्र का इम्तिहान लेने के बजाय उनके भरोसे की परीक्षा पास करनी होगी। परीक्षा व्यवस्था में पारदर्शिता, दोषियों पर कठोर कार्रवाई और अधिकारियों की जवाबदेही ही वह रास्ता है, जिससे सड़कों पर उतरते युवाओं को फिर से किताबों और अपने भविष्य की ओर लौटाया जा सकता है।

चीन को भारत का करारा जवाब

सीमा विवाद
ओमकार चौधरी

भारत-चीन सीमा विवाद अब केवल जमीन और सीमा रेखा का सवाल नहीं रह गया है, बल्कि यह नक्शों, नामों और ऐतिहासिक दावों की लड़ाई में बदल चुका है। चीन अरुणाचल प्रदेश के गांवों, पहाड़ों, नदियों और दर्रों के नाम बदलकर उन्हें अपने नक्शों में शामिल करता रहा है। वहीं, भारत ने हर बार चीन के इन प्रयासों को खारिज किया है। अब भारतीय सर्वेक्षण विभाग ने अरुणाचल प्रदेश के 27 महत्वपूर्ण स्थानों और भौगोलिक विशेषताओं के मानक नाम आधिकारिक भारतीय मानचित्र में शामिल किए हैं। यह कदम केवल प्रशासनिक औपचारिकता नहीं, बल्कि चीन की नामकरण रणनीति का संस्थागत जवाब है। संदेश स्पष्ट है:- अरुणाचल प्रदेश भारत का अभिन्न हिस्सा है और रहेगा।

भारत-चीन सीमा विवाद दशकों पुराना है, लेकिन हाल के वर्षों में इसने एक नया आयाम ले लिया है। मानचित्रों और नामों की लड़ाई। चीन बार-बार अरुणाचल प्रदेश के गांवों, पहाड़ों, नदियों और दर्रों के नाम बदलकर अपने नक्शों में शामिल करता रहा है, ताकि इस क्षेत्र पर अपने दावे को अंतरराष्ट्रीय स्तर पर मजबूत किया जा सके। भारत ने हर बार इसे सिरे से नकारा है और अब भारतीय सर्वेक्षण विभाग ने राज्य के 27 स्थानों के नाम आधिकारिक भारतीय मानचित्र में शामिल कर एक ठोस और संस्थागत जवाब दिया है। भारत-चीन सीमा विवाद की जड़ें अंग्रेजों के जमाने में जाती हैं। सन 1914 में शिमला सम्मेलन में ब्रिटिश भारत और तिब्बत के प्रतिनिधियों के बीच एक सीमा रेखा तय की गई थी, जिसे मैकमोहन रेखा कहा जाता है। यह रेखा भारत के पूर्वोत्तर क्षेत्र और तिब्बत के बीच की सीमा को परिभाषित करती है। भारत इस रेखा को अंतरराष्ट्रीय सीमा मानता है, जबकि चीन इसे कभी मान्यता नहीं देता । उसका तर्क है कि तिब्बत के पास उस समय स्वतंत्र रूप से समझौते करने का अधिकार नहीं था।

इसी असहमति के चलते 1962 में भारत और चीन के बीच युद्ध हुआ, जिसमें चीनी सेना ने अरुणाचल प्रदेश (तब नेफा यानी नॉर्थ ईस्ट फ्रंटियर एजेंसी) के कई हिस्सों में घुसपैठ की। थाग ला दर्रा इस युद्ध के शुरुआती संघर्ष स्थलों में से एक था, जबकि लोंग जू क्षेत्र में 1959 में ही, यानी युद्ध से तीन साल पहले, चीनी सैनिकों और भारतीय सुरक्षा बलों के बीच पहली बड़ी झड़प हुई थी। युद्ध के बाद चीन ने कुछ इलाकों से पीछे हटने की घोषणा तो की, लेकिन सीमा विवाद कभी सुलझा नहीं। 1972 में नेफा को केंद्र शासित प्रदेश और फिर 1987 में पूर्ण राज्य का दर्जा देकर अरुणाचल प्रदेश बनाया गया, जो आज भारत के पूर्वोत्तर का एक अभिन्न राज्य है। चीन अरुणाचल प्रदेश को अपनी भाषा में 'जांगनान' यानी 'दक्षिण तिब्बत' कहता है और इसे तिब्बत का हिस्सा मानते हुए अपना दावा जताता है। चीन लंबे समय से अरुणाचल प्रदेश को दक्षिणी तिब्बत का हिस्सा बताकर अपना दावा साबित करने की कोशिश करता रहा है, जिसे भारत दृढ़ता से खारिज करता रहा है। यही सोच नामकरण की रणनीति के पीछे भी काम करती है । जगहों को चीनी या तिब्बती नाम देकर यह दिखाने की कोशिश की जाती है कि इन क्षेत्रों पर चीन का प्रभाव रहा है। चीन ने पहली बार 2017 में अरुणाचल प्रदेश के छह स्थानों के नाम बदले थे, और इसे तब दलाई लामा की अरुणाचल यात्रा के विरोध के तौर पर देखा गया था। इसके बाद यह सिलसिला थमा नहीं। 2021 में चीन ने 15 स्थानों की एक और सूची जारी की, और 2023 में 11 और स्थानों के नाम बदले गए। इन नामकरणों में गांव, नदियां, पहाड़ और यहां तक कि आवासीय क्षेत्र तक शामिल किए गए हैं। हर बार जब यह सूचियां सामने आई, भारत के विदेश मंत्रालय ने कड़ा एतराज जताया। इस साल भी जब चीन ने एक बार फिर कुछ स्थानों के नाम बदलने की कोशिश की, तो भारत ने तुरंत जवाब दिया। विदेश मंत्रालय ने स्पष्ट कहा कि अरुणाचल प्रदेश भारत का अभिन्न हिस्सा था, है और हमेशा रहेगा। भारत ने इसे एक शरारतपूर्ण प्रयास करार दिया और दोहराया कि इस तरह की कार्रवाइयां न तो जमीनी हकीकत बदल सकती हैं, न ही भारत की संप्रभुता पर कोई असर डाल सकती हैं। विश्लेषक इस पूरी प्रक्रिया को मानचित्रण संबंधी आक्रामकता यानी कार्टोग्राफिक अग्रेशन कहते हैं। यह कोई नई रणनीति नहीं है। चीन 2017 से समय-समय पर

अरुणाचल प्रदेश के स्थानों के लिए मानकीकृत नामों की सूचियां जारी करता रहा है। इसका मकसद सिर्फ नाम बदलना नहीं, बल्कि दस्तावेजों और मानचित्रों के जरिए धीरे-धीरे यह स्थापित करना है कि इन क्षेत्रों पर चीन का ऐतिहासिक और सांस्कृतिक अधिकार रहा है। इसी पृष्ठभूमि में भारत का हाल का कदम बेहद महत्वपूर्ण माना जा रहा है। भारतीय सर्वेक्षण विभाग ने अरुणाचल प्रदेश के 27 स्थानों और उनकी भौगोलिक विशेषताओं के मानक नामों को आधिकारिक भारतीय मानचित्र में औपचारिक रूप से शामिल किया है। इस सूची में शामिल स्थानों में सामरिक और ऐतिहासिक महत्व साफ झलकता है ।

लोंग जू : यह वही क्षेत्र है जहां 1959 में भारत-चीन सैनिकों के बीच पहली बड़ी झड़प हुई थी, और जो आज भी वास्तविक नियंत्रण रेखा (एलएसी) के करीब स्थित है। थाग ला दर्रा :1962 के युद्ध के शुरुआती संघर्षों का गवाह व सामरिक रूप से बेहद ऊंचाई पर स्थित महत्वपूर्ण दर्रा।

जयरामपुर : चांगलांग जिले में स्थित यह रसद केंद्र पूर्वी सीमा क्षेत्र का प्रवेश द्वार माना जाता है और म्यांमा सीमा की ओर सुरक्षा बलों की आवाजाही में अहम भूमिका निभाता है।

जसवंतगढ़ : तवांग रोड पर स्थित यह स्थान भारतीय शहीद जसवंत सिंह रावत के स्मारक के लिए जाना जाता है, जिन्होंने 1962 के युद्ध में वीरता दिखाई थी।

शेर-ए-थापा स्मारक : 1962 के युद्ध के नायक त्रिलोक सिंह थापा की स्मृति में बनाया गया यह स्मारक भी इस सूची का हिस्सा है। इनके अलावा शंभू सरोवर, बड़ा और छोटा कुंडुन, धन बाड़ी, प्रीतनगर, तेरितनगर, रामनगर, सागर, पद्मा, ज्योतिनगर, बैसाखी, छोटा और बड़ा रोपुक, शिवाजी नगर, सुनपुरा, कमलांग नगर और बुद्ध मंदिर जैसे स्थान भी इस सूची में शामिल हैं। यह चुनाव आकस्मिक नहीं लगता। इनमें से अधिकांश स्थान सामरिक दृष्टि से संवेदनशील क्षेत्रों में हैं या 1959-1962 के संघर्षों से सीधा ऐतिहासिक संबंध रखते हैं। भारत का यह कदम कई मायनों में महत्वपूर्ण है ।

कानूनी व प्रशासनिक स्पष्टता : आधिकारिक मानचित्र में स्थानों को औपचारिक रूप से शामिल करने से सटीक भौगोलिक पहचान सुनिश्चित होती है, जिससे प्रशासनिक कामकाज व सुरक्षा तैनाती में स्पष्टता आती है।

कूटनीतिक जवाब : यह चीन की नामकरण रणनीति के जवाब में भारत का दस्तावेजी आधार तैयार करने जैसा है, ताकि अंतरराष्ट्रीय मंचों पर भारत का पक्ष उतनी ही मजबूती से उठे, जितनी मजबूती से चीन दावा करता है।

जन-जागरूकता : इन स्थानों को आधिकारिक तौर पर चिह्नित करने से आम नागरिकों में इनकी अहमियत व भारत की संप्रभुता के प्रति जागरूकता बढ़ती है, खासकर उन स्थानों के मामले में जो 1962 और 1959 के संघर्षों से जुड़े हैं और शहीदों की स्मृति को संजोए हैं।

ऐतिहासिक स्मृति को संरक्षित करना: जसवंतगढ़ और शेर-ए-थापा स्मारक जैसे स्थानों को शामिल करना यह सुनिश्चित करता है कि 1962 के युद्ध में शहीद हुए सैनिकों की वीरता की कहानियां आने वाली पीढ़ियों तक पहुंचे। अरुणाचल प्रदेश को लेकर भारत-चीन विवाद केवल सीमा रेखा का मसला नहीं रह गया है। यह अब मानचित्रों, नामों और दस्तावेजों की एक लंबी लड़ाई बन चुका है। चीन जहां बार-बार नामकरण के जरिए अपने दावे को स्थापित करने की कोशिश करता रहा है, वहीं भारत ने भी अब यह स्पष्ट कर दिया है कि वह इस मोर्चे पर पीछे नहीं हटेगा। 27 स्थानों का यह औपचारिक नामकरण केवल एक प्रशासनिक कदम नहीं, बल्कि एक ठोस संदेश है कि अरुणाचल प्रदेश भारत का अभिन्न हिस्सा पहले भी था, आज भी है, और भविष्य में भी रहेगा।

(लेखक वरिष्ठ पत्रकार हैं, ये उनके अपने विचार हैं।)

लेख पर अपनी प्रतिक्रिया haribhoomi@gmail.com पर दे सकते हैं।

विशेष
अनुभव शर्मा

भगवान महादेव का प्रिय है विदेशी धतूरा

धतूरैः पूजनं शंभोः सर्वकामफलप्रदम्।
विषनाशकरं चैव सर्वसौभाग्यवर्धनम्॥

(अर्थातः भगवान शिव का धतूरे के फूलों या फलों से पूजन करना सभी मनोकामनाओं को पूरा करने वाला, विष यानी नकारात्मकता और कष्टों का नाश करने वाला तथा समस्त सौभाग्य को बढ़ाने वाला होता है।)

भगवान शिव को धतूरा अर्पित करने का महात्म्य दर्शाने वाला यह प्राचीन श्लोक है। परंतु यह आश्चर्यजनक है कि महादेव का प्रिय धतूरा मूलतः भारतीय ही नहीं है, बल्कि यह प्रशांत महासागर के उस पार स्थित अमेरिका महाद्वीप के मैक्सिको की मूल प्रजाति है, जिसका वैज्ञानिक नाम डातुरा स्ट्रामोनियम है। पशुपति नाथ की सेंधव मुहरों से लेकर ऋग्वेद के रुद्र शिव तक भारत में शैव पूजा का हजारों वर्ष प्राचीन इतिहास है इसी कारण शिव आदिदेव भी कहे जाते है परन्तु धतूरे को वनस्पति शास्त्री मूलतः मेक्सिको का पौधा बताते हैं जो बाद में भारत पहुंचा, परन्तु प्रश्न है कब और कैसे। लगभग दो हजार वर्षों पहले इसका उल्लेख चरक संहिता में 'उन्मत्त' या 'धत्तूर' के रूप में मिलता है, जो इसे भ्रम पैदा करने वाली औषधि बताते हैं। वहीं, महर्षि सुश्रुत इसे कुत्तों के काटने से होने वाले रोग 'रेबीज' के उपचार में उपयोगी मानते हैं। वात्स्यायन के कामसूत्र के अनुसार, नागरक या शहरी लोग धतूरे को तांबूल (पान) के साथ मिलाकर एक सुगंधित लेप तैयार करते थे। महाकवि बाणभट्ट अपनी रचना 'हर्षचरित' में विंध्यांचल के वनों की आटविक (जंगली) जातियों द्वारा तंत्र में प्रयुक्त औषधि के रूप में इसका उल्लेख इस प्रकार करते हैं।

उद्गत-धत्तूर-प्रोह-संकुलैः, प्रगुणीकृत-शबर-पल्लव-कुटीरैः...

(भावार्थः वह विंध्य के जंगल का क्षेत्र था, जो बाहर निकले हुए धतूरे के पौधों के अंकुरों से घिरे हुए थे और जहां शबरों जंगली जातियों की पत्तों से बनी कुटियाएं थीं।) चोल काल के प्रसिद्ध ऐरावतेश्वर मंदिर में भगवान शिव की कंकाल मूर्ति की जटाओं और आभूषणों में धतूरे के फूल का अंकन मिलता है। इन साक्ष्यों से यह ज़ाहिर है कि धतूरा ईस्वी सन के आस-पास ही भारत भूमि में आ चुका था, जबकि इसके पहले वेदों, उपनिषदों या फिर सैन्धव सभ्यता में यह पूर्णतः अनुपस्थित मिलता है। प्रश्न यह है कि फिर यह आदिदेव शिव का प्रिय फूल कैसे हुआ? कोलम्बस की अमेरिका की खोज (1492 ईस्वी सन) के बाद ही 'नई दुनिया' की वनस्पतियां एशिया और यूरोप के संपर्क में आईं, जिसमें आलू, टमाटर, मिर्च, कद्दू से लेकर तंबाकू जैसी आज की प्रचलित किस्में शामिल हैं। फिर धतूरा ईस्वी सन की शुरुआत में भारत तक कैसे पहुंचा? क्या प्री-कोलम्बस काल में भी अमेरिकी महाद्वीप से भारतीय संपर्क हुआ था? यह इतिहास की अबूझ पहेली है। मैक्स प्लांक इंस्टीट्यूट के नवीन अनुसंधानों में यह साबित हुआ है कि ऑस्ट्रेलिया के मूल नेटिव आदिवासियों में लगभग 4000 साल पहले भारतीय डीएनए पाए गए हैं, जो द्रविड़ एवं तटीय भारतीय व्यापारिक संबंधों की पुष्टि करते हैं, परंतु मैक्सिको के संदर्भ में ऐसे किसी भी आदान-प्रदान के साक्ष्य कोलम्बस से पहले नहीं मिलते। हालांकि, ऐसी विकास अवधारणाओं को 'अभिसारी विकास' के रूप में भी देखा जाता है। जब अलग-अलग भौगोलिक क्षेत्रों में रहने वाले जीवों या पौधों को पर्यावरण, जलवायु या जीवनशैली की लगभग एक जैसी चुनौतियां मिलती हैं, तो प्रकृति उन्हें जीवित रहने के लिए समान शारीरिक या जैविक रूप ढालने पर मजबूर कर देती है। पौराणिक कथाओं में समुद्र मंथन से निकले विष पान के कारण भगवान शिव को 'नीलकंठ' कहा गया है। कालकूट विष की उष्णता इतनी अधिक थी कि देवताओं और ऋषियों ने शिवजी की इस महापीड़ा को शांत करने के लिए उन्हें ठंडी प्रकृति वाली और विष का प्रभाव काटने वाली औषधियां अर्पित कीं। कालकूट विष के प्रचंड ताप से पीड़ित शिवजी की पीड़ा को शांत करने में धतूरे ने अपनी मुख्य भूमिका निभाई, इसलिए भगवान शिव को धतूरा अतिप्रिय माना गया है। हैरत की बात यह है कि धतूरे की तरह ही पीला कनेर का फूल भी मैक्सिको से पुर्तगालियों द्वारा पंद्रहवीं सदी में ही आया था (हालांकि सफेद कनेर भारत में पहले से होता था) और यह पीला कनेर भी शिव पूजन में अत्यधिक लोकप्रिय है। किसी जीव द्वारा या समुद्र में बह कर आने के विषय पर शोध आवश्यक है। इसलिए मध्य काल के कवि बिहारीदास के शब्दों में

कनक कनक ते सौ गुनी मादकता अधिकाय,
वा खाए बौराय जग, इहि पाए बौराय।

इसी 'कनक' (धतूरे) की मादकता का भारत में विशेष धार्मिक व सांस्कृतिक प्रभाव आज भी स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है।

(लेखक अवर सचिव, लोक भवन, रायपुर हैं, ये उनके अपने विचार हैं।)

माता-पिता के अपमान को भगवान भी माफ नहीं करते

संकलित
दर्शन

चाणक्य ने अपनी नीतियों में एक ऐसे काम का जिक्र किया है जिसे महापाप की श्रेष्ठ में रखा गया है और इस कार्य को करने वालों को भगवान कभी भी माफ नहीं करते हैं। चाणक्य नीति अनुसार व्यक्ति के शब्द बहुत महत्वपूर्ण होते हैं शब्द ही ऐसी चीज है जो बिना हथियार के ही दूसरों को घायल कर सकते है। इसलिए चाणक्य कहते हैं जो लोग ईश्वर स्वरूप माता पिता को अपशब्द बोलकर उनका अपमान करते हैं ऐसे लोगों को भगवान कभी माफ नहीं करते है यह ऐसी गलती है जो महापाप की श्रेष्ठी में आती है। माता पिता को अपशब्द कहने वाले लोगों को हर ओर से कष्ट उठाना पड़ता है ऐसे लोगों को माता पिता भले ही माफ कर दें लेकिन ईश्वर इन्हें कभी माफ नहीं करता है। माता पिता को अपशब्द कहना ही जीवन में सबसे बड़ा महापाप है। चाणक्य की मानें तो जो लोग माता पिता का दुख तोड़ते हैं उन्हें भला बुरा कहते हैं ऐसे लोगों को ईश्वर कभी क्षमा नहीं करता है बल्कि इन्हें कष्ट उठाना पड़ता है। इसलिए कहा जाता है कि माता पिता को हमेशा खुश रखना चाहिए। ऐसा कोई भी काम नहीं करना चाहिए जिससे उनके दिल को ठेस पहुंचे। इस संसार में माता-पिता का ऋण कोई भी नहीं चुका सकता।

गुरु के बिना जीवन में वास्तविक प्रगति संभव नहीं

संकलित
प्रेरणा

एक बल्ब के भीतर तंतु (फिलामेंट) पहले से ही विद्यमान होता है। उसे केवल विद्युत प्रवाह की आवश्यकता होती है और वह प्रकाशमान हो उठता है। ठीक उसी प्रकार गुरु की उपस्थिति ही मनुष्य को अपने इस वास्तविक स्वरूप का बोध कराती है। यदि जीवन में उच्चतर चेतना, उत्कृष्टता और आत्मोन्नति प्राप्त करनी है, तो गुरु का होना अनिवार्य है। गुरु के बिना वास्तविक प्रगति संभव नहीं। जीवन में जो बातें प्रत्यक्ष दिखाई देती हैं, उनके लिए भी हम मार्गदर्शक की आवश्यकता सहज स्वीकार करते हैं। वाहन चलाना सीखने के लिए प्रशिक्षक चाहिए, किसी विषय में दुर्बलता हो तो शिक्षक या कोच की आवश्यकता पड़ती है। जब दृश्य जगत की छोटी-छोटी बातों के लिए भी मार्गदर्शक आवश्यक है, तब उस अदृश्य, सूक्ष्म और अव्यक्त सत्य की अनुभूति के लिए गुरु का महत्त्व कितना अधिक होगा। गुरु के बिना आत्मसाक्षात्कार अत्यंत कठिन प्रतीत होता है और गुरु के बिना ध्यान की गहराइयों तक पहुंचना भी सहज नहीं होता। क्या आप जानते हैं कि स्वयं भगवान श्रीकृष्ण ने अपनी शिक्षा के लिए महर्षि सांदीपनि का आश्रय ग्रहण किया था? भगवान श्रीराम ने भी महर्षि वशिष्ठ से जीवन का गहन ज्ञान प्राप्त किया। जब स्वयं अवतार पुरुषों ने गुरु की शरण ग्रहण की, तब सामान्य मनुष्य के लिए गुरु की आवश्यकता कितनी स्वाभाविक है। गुरु-शिष्य परंपरा हमारी सनातन संस्कृति की अमूल्य धरोहर है। यदि मानव जाति को आगे बढना है, तो उसे इस प्राचीन ज्ञान-परंपरा को अपने साथ लेकर चलना होगा।

अंतर्मन

आज की पाती

लोगों में धन की भूख बढ़ी

आज भौतिकवादी और आधुनिक युग में कुछ लोगों को धन की इतनी भूख बढ़ रही है कि वो इसे पाने के लिए किसी भी हद तक गिर रहे हैं। स्वामी दयानंद सरस्वती जी ने कहा है कि, धन एक वस्तु है जो ईमानदारी और न्याय से कमाई जाती है, और इसके विपरीत है अधर्म का खजाना। लेकिन आज बहुत से लोग अमीर बनने के चक्कर में बेईमानी, हेराफेरी, अनैतिकता की राह पर चल पड़ते हैं। ऐसे लोग यह भूल जाते हैं कि गलत तरीकों से कमाई धन-दौलत ज्यादा दिन सुख नहीं दे सकती। कहते हैं कि जैसा खाओ अन्न वैसा हो मन। अगर हम बेईमानी कि कमाई से अन्न खरीद कर खाएंगे या अपने परिवार को खिलाएंगे तो क्या वो अन्न हमारे या हमारे परिवार के लिए उचित भोजन होगा? शायद नहीं। पाप की कमाई से अगर बच्चों का पालन-पोषण किया जाए तो इससे बच्चे पथभ्रष्ट ही होंगे। - *विजय कुमार, रायपुर*

X ट्रेंड f

कोई गोली नहीं चली

जंतर-मंतर पर कोई गोली नही चली। राहुल गांधी भ्रम फैला रहे हैं। गृहमंत्री हर बात का जवाब देने को तैयार। अमित शाह सदन में विस्तार से जवाब देंगे, लेकिन विपक्ष को भरोसा देना होगा कि वह बहस से भागेगा नहीं। -जेपी नड्डा, केंद्रीय मंत्री

विपक्ष की तीन मांगें

विपक्ष की तीन प्रमुख मांगे हैं। पहली- जंतर मंतर पर शांतिपूर्ण तरीके से आंदालन युवाओं पर गोली चलाने की जिम्मेदारी स्पष्ट हो। दूसरी-प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी इस घटना के लिए माफी मांगे और तीसरी- राम मंदिर में चोरी के मुद्दे पर संसद में चर्चा की जाए, सरकार दोषियों को न बचाए। -राहुल गांधी, नेता विपक्ष

संसद चले

अगर केंद्रीय गृह मंत्री जंतर-मंतर पर हुई घटना या वहां हुए विरोध-प्रदर्शन से निपटने के दौरान हुई घटनाओं के बारे मे सदन में सवालों का जवाब देते है और इससे संसद का कामकाज फिर से शुरू हो जाता है, तो यह अच्छी बात है। लोग चाहते है कि संसद चले। संसद चलाने में बहुत पैसा खर्च होता है। -उमर अब्दुल्ला, सीएम, जम्मू-कश्मीर

वीबी-जी रामजी में सुधार करें

एक जुलाई से मनरेगा (महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम) की जगह ले चुकी वीबी-जी रामजी योजना अपने पहले ही महीने में बुरी तरह फेल साबित हुई है। केंद्र सरकार योजना की खामियों को दूर करे व लोगों को राहत दे। -अशोक गहलोत, पूर्व सीएम, राजस्थान

अपने विचार
हरिभूमि कार्यालय
टिकरापारा, रायपुर में पत्र के माध्यम से या फैक्स : 0771-4242222, 23 पर या सीधे मेल से hbcgpati@gmail.com पर भेज सकते हैं।

करंट अफेयर

पाक में मिला अनोखा फंगस जो चटकर जाएगा प्लास्टिक को

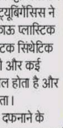

दुनिया भर में प्लास्टिक कचरे की बढ़ती समस्या के बीच पाकिस्तान के वैज्ञानिकों ने एक ऐसी खोज की है जो भविष्य में पर्यावरण संरक्षण की दिशा में महत्वपूर्ण साबित हो सकती है। राजधानी इस्लामाबाद के एक नगरपालिका कचरा निपटान स्थल की मिट्टी से अलग किए गए एक अनोखे फंगस एस्परगिलस ट्यूबिंगेंसिस ने पॉलिएस्टर पॉलीयुरेथेन नामक अत्यंत टिकाऊ प्लास्टिक को तोड़ने की क्षमता दिखाई है। यह प्लास्टिक सिंथेटिक लेदर, कोटिंग्स, कुशन, इन्सुलेशन सामग्री और कई औद्योगिक उत्पादों में बड़े पैमाने पर इस्तेमाल होता है और आम वातावरण में आसानी से नष्ट नहीं होता। शोधकर्ताओं ने लैब में कल्चर और मिट्टी में दफनाने के विस्तृत प्रयोगों के जरिए इस फंगस की क्षमता का गहन परीक्षण किया। अध्ययन में इसे एस्परगिलस ट्यूबिंगेंसिस की पॉलीयुरेथेन को खराब करने की क्षमता का पहला रिपोर्टेड मामला बताया गया था। हालांकि वैज्ञानिकों ने साफ चेतावनी दी है कि इन नतीजों को अतिरंजित नहीं समझना चाहिए। प्रयोग पूरी तरह नियंत्रित लैब परिस्थितियों में किए गए थे। इसका मतलब यह कतई नहीं है कि फेंका गया पॉलीयुरेथेन गद्दा, जूता या कोई अन्य उत्पाद दो महीने पर्यावरण में रहने के बाद गायब हो जाएगा।

ऑफ बीट

बुंदेलखंड की काशी कहे जाते हैं कुंडेश्वर धाम

बुंदेलखंड की काशी कहे जाने वाले शिव धाम कुंडेश्वर में भगवान भोलेनाथ का स्वयंभू शिवलिंग है। यह शिवलिंग करीब 5000 साल पुराना बताया जाता है। द्वापर युग में बाणासुर की पुत्री ऊषा ने यहां भगवान शिव की तपस्या की थी। वर्तमान में किंवदंती है कि ऊषा आज भी भगवान शिव को जल अर्पित करने आती है। मगर उन्हें कोई देख नहीं पाता है। कुंडेश्वर स्थित देवादिदेव महादेव आज भी शाश्वत और सत्य हैं, इसका जीता जागता प्रमाण स्वयं प्रतिवर्ष चावल के बराबर बढने वाला शिवलिंग है। क्यों कहा जाने लगा कुंडेश्वर- बताया जाता है कि कुंडेश्वर का इतिहास बहुत पुराना है, लेकिन इसके बारे में स्पष्ट जानकारी नहीं है। प्राचीनकाल में यहां एक छोटी सी बस्ती थी। एक महिला अपने घर में जमीन में बनी ओखली में धान कूट रही थी कि अचानक उसने हाथ से धान पलटते समय पाया कि ओखली के चावल रक्त रंजित हो गए हैं। वह घबराकर मिट्टी के कूड़े से ओखली ढक्कर लोगों को बुलाने भागी, लौटने पर सभी ने देखा कि स्वयं भू शिवलिंग कूड़े को सिर पर रखकर प्रकट हो गए। इसी दिन से वे कूड़ा देव कुंडेश्वर कहे जाने लगे। समूचे उत्तर भारत में भगवान कुंडेश्वर की विशेष मान्यता है। यहां प्रतिवर्ष लाखों की संख्या में श्रद्धालु भगवान के दर्शन करने के लिए आते हैं।

बढ़ते एयर ट्रैफिक के बीच हवाई सुरक्षा की चिंता

हवाई यात्रा के आम होते जाने के इस दौर में विमानों के आसमान में संतुलन खोने या हवाई पट्टी पर अचानक फिसलने के मामले बेहद चिंताजनक हैं. रविवार को पुणे के बारामती हवाई अड्डे पर एक ट्रेनिंग विमान तब हादसे का शिकार हो गया, जब अभ्यास के दौरान वह रनवे से फिसलकर आगे निकल गया. हादसे में किसी को चोट भले नहीं आयी, पर विमान को मामूली नुकसान हुआ. यह हादसा उसी एयरस्ट्रिप पर हुआ, जिस पर विगत जनवरी में महाराष्ट्र के उपमुख्यमंत्री अजित पवार का विमान हादसे का शिकार हुआ था. उस हादसे में अजित पवार समेत चार लोग मारे गये थे. रविवार की घटना ने विमान सुरक्षा को लेकर फिर सबका ध्यान खींचा है. जून, 2025 में अहमदाबाद में हुई विमान दुर्घटना की जांच रिपोर्ट अभी नहीं आयी है, जिसमें 260 लोग मारे गये थे. जबकि इस बीच उड़ान के दौरान विमानों के संतुलन खोने जैसे कई मामले सामने आये हैं. इसी महीने थाइलैंड के फुकेट से दिल्ली आ रही एयर इंडिया की एक फ्लाइट को उड़ान के दौरान कुछ समय के लिए हवा के झटकों का सामना करना पड़ा था, जिससे विमान कुछ पल के लिए करीब 300 फीट नीचे आ गया था. तब सीट तथा सामान से टक्कर लगने से कई यात्रियों को चोट लगी और कुछ लोग गंभीर रूप से घायल हुए थे. इससे पहले जुलाई में नयी दिल्ली से वडोदरा जा रही एयर इंडिया की फ्लाइट में तब अफरा-तफरी मच गयी थी, जब विंडो का अंदरूनी कवर निकल गया था. यह स्थिति उस देश के लिए ठीक नहीं है, जो दुनिया का पांचवां सबसे बड़ा विमानन बाजार है, और जहां घरेलू हवाई यात्रियों की संख्या लगातार बढ़ती जा रही है. डीजीसीए की घरेलू एयर ट्रैफिक रिपोर्ट के मुताबिक, इस साल जनवरी से जून तक कुल 8.64 करोड़ यात्रियों ने हवाई सफर किया, जो 2025 की इसी अवधि की तुलना में लगभग 1.4 प्रतिशत ज्यादा है. इस बीच हवाई अड्डों की संख्या में भी भारी वृद्धि हुई है. वर्ष 2017 में देश में चालू हवाई अड्डों की संख्या 94 थी. इस साल यह आंकड़ा बढ़कर 163 हो गया है, जो हवाई अड्डों की नयी परियोजनाओं, पहले से बंद पड़े हवाई अड्डों के पुनरुद्धार और उड़ान योजना के तहत क्षेत्रीय कनेक्टिविटी के विस्तार का मिला-जुला परिणाम है. विमानन क्षेत्र में मामूली असावधानी से होने वाली घटनाओं को भी बेहद गंभीरता से लेने की जरूरत है, क्योंकि यह लोगों की जिंदगी का सवाल है.

जो देश दुनिया का पांचवां सबसे बड़ा विमानन बाजार है और जहां घरेलू हवाई यात्रियों की संख्या लगातार बढ़ती जा रही है, वहां विमानन क्षेत्र में असावधानी की कोई भी घटना बेहद चिंताजनक है.

असली मुद्दा एनजीओ की पारदर्शिता का है

प्रभु चावला
एडिटोरियल डायरेक्टर
द न्यू इंडियन एक्सप्रेस
prabhuchawla@newindianexpress.com

मोदी सरकार एक ऐसे क्षेत्र को साफ-सुथरा करने के लिए दृढ़ है, जिसने समान स्तर की जवाबदेही की संस्कृति प्रदर्शित किये बिना धन और प्रभाव अर्जित किया है. सरकार को वास्तविक वित्तीय और राजनीतिक गठजोड़ को उजागर करना चाहिए, लेकिन वास्तविक धर्मार्थ संस्थाओं को कमजोर नहीं करना चाहिए. एनजीओ क्षेत्र को भी यह स्वीकार करना होगा कि नैतिक उद्देश्य किसी संस्था को जांच से छूट नहीं देता. राज्य नागरिक समाज का मालिक नहीं बन सकता. पर नागरिक समाज भी राज्य के भीतर एक अलग राज्य नहीं बन सकता. यही एफसीआरए की इस पूरी कवायद की वास्तविक परीक्षा है.

सत्ता हमेशा उस शक्ति को लेकर संदेहशील रही है, जिसे वह नियंत्रित नहीं कर सकती. सरकारें चुनावों से अपनी वैधता प्राप्त करती हैं, फिर भी वे उन संस्थाओं के साथ कभी पूरी तरह सहज नहीं रही हैं, जो समाज को प्रभावित करती हैं, लेकिन इसके लिए जनता का वोट नहीं मांगतीं. नागरिक समाज का निर्माण राज्य को सुधारने के लिए हुआ था, उसके साथ प्रतिस्पर्धा करने के लिए नहीं. उसका उद्देश्य समझाना है, दबाव बनाना नहीं. जब यह सीमा धुंधली होने लगती है, तब एक परोपकारी उद्देश्य भी अस्पष्ट और संदिग्ध राजनीतिक पहचान ग्रहण कर सकता है और खुद को शक्ति के समानांतर केंद्र में बदल सकता है. निर्वाचित सरकार और गैर-सरकारी संगठनों के एक विशाल समूह के बीच देश इसी असहज टकराव का सामना कर रहा है.

इस टकराव का तत्कालीन कारण केंद्र सरकार द्वारा एफसीआरए, यानी फॉरेन कंट्रीब्यूशन (रेगुलेशन) एक्ट में प्रस्तावित संशोधनों को लेकर है. भाजपा और संघ परिवार लंबे समय से एनजीओ के एक हिस्से को पश्चिमी सांस्कृतिक प्रभाव बनाये रखने और भारत के सभ्यतागत प्रतीकों को कमजोर करने के साधन के रूप में देखते रहे हैं. हाल के दिनों में भाजपा नेताओं ने यह भी आरोप लगाया है कि विदेशी धन प्राप्त करने वाले संगठनों ने युवाओं के विरोध प्रदर्शनों में भूमिका निभायी. इसलिए वर्तमान विधायी पहल को विदेशी धन का दुरुपयोग रोकने और अधिक पारदर्शिता सुनिश्चित करने के एक तंत्र के रूप में पेश किया जा रहा है. विपक्ष इसे सरकार की आलोचना करने वाली संस्थाओं का गला घोंटने के प्रयास के रूप में देखता है. अल्पसंख्यक समूह, खासकर ईसाई संगठन आशंकित हैं कि वैध स्कूल, अस्पताल और धर्मार्थ संस्थाएं कठोर होते नियामक ढांचे में फंस सकती हैं. भारत संभवतः दुनिया में एनजीओ के लिए सबसे बड़ा और सबसे अनुकूल माहौल रखने वाले देशों में से एक है. सरकार द्वारा कराये गये एक अध्ययन में 2009 में इनकी संख्या 33 लाख आंकी गयी थी. जाहिर है, यह आंकड़ा पुराना है. देश में विदेशी धन से संचालित एक आर्थिक रूप से प्रभावशाली नेटवर्क भी फल-फूल रहा है. आधिकारिक आंकड़ों के अनुसार, 2019 से 2022 के बीच 13,520 संगठनों को विदेशी योगदान के रूप में 55,741 करोड़ रुपये प्राप्त हुए. पंद्रह जुलाई तक एफसीआरए पोर्टल पर 14,449 सक्रिय प्रमाणपत्र दर्ज थे. पर इन संगठनों का संचालन व्यापक रूप से अलग-अलग सांस्कृतिक, धार्मिक, सामाजिक और वैचारिक संरचनाओं के माध्यम से होता है. इनके स्वामित्व, उद्देश्यों या काम करने के तरीकों में एकरूपता नहीं है. इसलिए पारदर्शिता की जरूरत महत्वपूर्ण हो जाती है.

इससे भी गंभीर सवाल इनके संगठनात्मक ढांचे के आसपास मौजूद गोपनीयता का है. सरकार द्वारा किसी एनजीओ को नियंत्रित करने का प्रयास करने से पहले उसे नियंत्रित कौन करता है? फाउंडेशन, धार्मिक संस्थाएं, परोपकारी संस्थान और अंतरराष्ट्रीय एजेंसियों के अपने-अपने उद्देश्य, प्राथमिकताएं और पसंद होती हैं. दानदाता यह तय करता है कि किस कार्य को समर्थन मिलना चाहिए, जबकि प्राप्तकर्ता तय करता है कि उस उद्देश्य को किस तरह आगे बढ़ाया जाये. जब सामाजिक और धर्मार्थ उद्देश्यों के नाम पर बड़ी मात्रा में संसाधन संदिग्ध तरीके से राष्ट्रीय सीमाओं के पार आते-जाते हों, तब इसे पूरी तरह खारिज नहीं किया जा सकता. सरकार अब उनके वित्त, नैतिक मानकों और काम करने के तरीकों की जांच चाहती है. भाजपा और संघ यह तर्क देते रहे हैं कि विदेशी धन प्राप्त करने वाले एनजीओ नेटवर्क के कुछ हिस्से भाजपा के सत्ता में आने को कभी स्वीकार नहीं कर पाये. उनका यह भी मानना है कि प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी को व्यक्तिगत रूप से लगातार निशाना बनाया गया है. मोदी सरकार ने धीरे-धीरे कई प्रमुख संगठनों के खिलाफ कार्रवाई की है. विपक्ष का इस विवाद में शामिल होना स्वाभाविक है, लेकिन राजनीतिक विरोध को निर्दोष होने का प्रमाण नहीं बनाया जा सकता, ठीक उसी तरह जैसे सरकारी संदेह को दोषी होने का प्रमाण नहीं माना जा सकता. नवीनतम विधेयक ने दांव और ऊंचे कर दिये हैं. इसमें एक नामित प्राधिकरण बनाने का प्रस्ताव है, जो किसी संगठन का एफसीआरए प्रमाणपत्र रद्द, समर्पित या समाप्त होने की स्थिति में उसके विदेशी योगदान और संपत्तियों की निगरानी, प्रबंधन और निपटान करेगा. प्रस्तावित व्यवस्था के तहत विदेशी योगदान से आंशिक या पूरी तरह से बनायी गयी संपत्तियां इस प्राधिकरण के अधीन जा सकती हैं. यही बात ईसाई संगठनों और विदेशों से सहायता प्राप्त स्कूल, अस्पताल और कल्याणकारी कार्यक्रम चलाने वाली अन्य धर्मार्थ संस्थाओं के बीच चिंता का कारण बन रही है. उनकी धार्मिक पहचान को न तो जांच से छूट का आधार होना चाहिए, न ही स्वतः संदेह का कारण. सरकार को वैध परोपकार और कानून का उल्लंघन करने वाली गतिविधियों के बीच अंतर करना होगा. इसके लिए सबूत आवश्यक हैं. हालांकि, सरकार अपने अधिकार का जरूरत से ज्यादा इस्तेमाल करने का जोखिम उठा रही है. ऐसे संगठन की वित्तीय गतिविधियों को रोकना उचित हो सकता है, जिसने कानून का उल्लंघन किया है. पर पूरे क्षेत्र की वित्तीय गतिविधियों को रोक देना आत्मघाती कदम साबित होगा. देश को अब भी ऐसे धर्मार्थ संगठनों की जरूरत है, जो बच्चों को शिक्षा देते हैं, अस्पताल चलाते हैं, आपदा राहत प्रदान करते हैं. एक आत्मविश्वासी सरकार को असहमति को नियंत्रित करने में सक्षम होना चाहिए, उससे डरना नहीं चाहिए.

इस मामले में एक अंतरराष्ट्रीय विडंबना भी है. डोनाल्ड ट्रंप के नेतृत्व वाले अमेरिका ने स्वयं विदेशी सहायता के क्षेत्र को बड़े स्तर पर पुनर्गठित किया है और यूएसएड को एक स्वतंत्र एजेंसी के रूप में समाप्त कर दिया है. इसलिए भारत को भी पूरी संप्रभुता के साथ यह सुनिश्चित करने का अधिकार है कि उसकी संस्थाओं में प्रवेश करने वाला विदेशी धन भारतीय कानूनों का पालन करे. मोदी सरकार एक ऐसे क्षेत्र को साफ-सुथरा करने के लिए दृढ़ है, जिसने समान स्तर की जवाबदेही की संस्कृति प्रदर्शित किये बिना धन और प्रभाव अर्जित किया है. सरकार को वास्तविक वित्तीय और राजनीतिक गठजोड़ को उजागर करना चाहिए, लेकिन वास्तविक धर्मार्थ संस्थाओं को कमजोर नहीं करना चाहिए. एनजीओ क्षेत्र को भी यह स्वीकार करना होगा कि नैतिक उद्देश्य किसी संस्था को जांच से छूट नहीं देता. राज्य नागरिक समाज का मालिक नहीं बन सकता. पर नागरिक समाज भी राज्य के भीतर एक अलग राज्य नहीं बन सकता. यही एफसीआरए की इस पूरी कवायद की वास्तविक परीक्षा है.

(ये लेखक के निजी विचार हैं.)

सोशल मीडिया के अनसोशल होने के खतरे

उमेश चतुर्वेदी
वरिष्ठ पत्रकार
uchaturvedi@gmail.com

सोशल मीडिया लोकतंत्र के लिए जितना जरूरी है, उससे कहीं ज्यादा अनसोशल, यानी असामाजिक भी है. समय आ गया है कि उनके नियमन के लिए कठोर कानून बनाये जायें. जिसके तहत उन्हें अभिव्यक्ति के अधिकार को बढ़ावा देने की व्यवस्था तो हो, पर उसकी आड़ में अराजकता फैलाने की छूट न मिले.

दिल्ली में बीस जुलाई को कॉकरोच जनता पार्टी के संसद मार्च के दौरान हुई हिंसा और 23 जुलाई को प्रधानमंत्री मोदी के जेन जी के संबोधन की वीडियो फेसबुक और इंस्टाग्राम से हटाये जाने के बाद सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म विमर्श के केंद्र में है. इसमें दो राय नहीं कि दुनियाभर में जो सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म ज्यादा प्रचलन में हैं, उनमें से ज्यादातर विदेशी हैं. जाहिर है कि वे उन जगहों के कानूनों और सांस्कृतिक परंपराओं से ज्यादा संचालित हैं, जहां उनके मुख्यालय हैं. इसलिए अपने व्यापक हितों के लिए अपने प्रचलन वाले देशों की परंपराओं और संस्कृतियों को सवालों के घेरे में लाने, उसका उपहास उड़ाने और उन्हें तार-तार करने वाला अल्गोरिदम उन्होंने विकसित कर रखा है, जिसका खामियाजा तीसरी दुनिया के देश और वहां की सांस्कृतिक परंपराएं उठा रही हैं.

सोशल मीडिया को लोकतंत्र के बड़े मंच के रूप में 17 दिसंबर, 2010 को ट्यूनीशिया के सिटी बौजिद शहर में फलों का ठेला लगाने वाले मोहम्मद बोआजीजी की आत्महत्या के बाद हुए उबाल के बाद देखा जाने लगा. म्युनिसिपल कर्मचारियों की सख्ती के चलते क्षुब्ध बोआजीजी ने खुद पर पेट्रोल डालकर आग लगा ली. उस घटना का वीडियो किसी ने सोशल मीडिया पर डाल दिया. सोशल मीडिया के तत्कालीन अल्गोरिदम ने इस घटना को इस रूप में प्रस्तुत किया कि समूचे अरब जगत में उबाल आ गया. नागरिक अधिकारों की स्थापना और लोकतंत्र की बहाली की मांग को लेकर अरब देशों की जनता सड़कों पर उतर आयी. इसका ही नतीजा मिस्र की राजधानी काहिरा के तहरीर चौक पर दिखा, जहां महीनों तक लोग जमे रहे और वहां के राष्ट्रपति को इस्तीफा देना पड़ा. यह आग सीरिया, यमन और लीबिया तक जा पहुंची. वहां के पारंपरिक शासकों के खिलाफ लोगों का दबा हुआ गुस्सा निकला और कई जगह सत्ताएं बदल गयीं. इसके कुछ महीनों बाद भारत में भी अन्ना हजारे को आगे रखकर एक आंदोलन छेड़ा गया, जिसकी परिणति आम आदमी पार्टी के रूप में हुई. इन घटनाओं को याद करना इसलिए जरूरी है कि इन सबके पीछे सोशल मीडिया के जरिये त्वरित गति से फैलायी गयी सूचनाओं का हाथ सबसे ज्यादा रहा. तब सोशल मीडिया को लोकतंत्र के लिए जरूरी बताया गया. इसे लोकतंत्र के वाजिब और जरूरी औजार के रूप में भी मान्यता मिली.

पर बीतते वक्त के साथ पता चल रहा है कि जिसे हम सोशल मीडिया कहते हैं, वह लोकतंत्र के लिए जितना जरूरी है, उससे कहीं ज्यादा अनसोशल, यानी असामाजिक भी है. यह ठीक है कि सोशल मीडिया के जरिये व्यवस्था की अंधी सुरंग में खो रही आवाजों को मौका मिलता है. पर यह उतना ही सच है कि इस माध्यम ने लोगों की नजरों का पानी उतार दिया है. लोग अब लिहाज करना भूल गये हैं. सोशल मीडिया पर यदि किसी की बात पसंद नहीं आती, तो उसे खुलेआम गालियां दी जा सकती हैं. उसका चरित्र हनन किया जा सकता है. सोशल मीडिया मंचों ने अपना अल्गोरिदम भी ऐसा ही विकसित किया है, जो अच्छी बातों, सामाजिक चिंतन और बेहतर कल की बातों को ज्यादा तवज्जो नहीं देता. पर जैसे ही किसी को कोई गाली देता है, किसी के चरित्र का बेवजह ही हनन करता है, किसी का घटिया कार्टून बनाता है, सोशल मीडिया का अल्गोरिदम उसे फैलाने में द्रुत गति से जुट जाता है. सोशल मीडिया ने अब तक पर्दे के पीछे रही नंगई को भी उजागर कर दिया है. आज रील्स के चक्कर में अधनंगे और कई बार करीब-करीब नग्न फोटोग्राफ और वीडियो तक जारी किये जा रहे हैं. इसका अल्गोरिदम अश्लीलता को बढ़ावा देता है, लेकिन शील और लज्जा की बात को वर्चुअल स्पेस के किसी अंधेरे कोने में गुम कर देता है. तीन वर्ष पहले प्यू रिसर्च सेंटर ने 19 विकसित अर्थव्यवस्थाओं वाले देशों में सोशल मीडिया को लेकर एक शोध किया था. इस शोध के अनुसार, आम नागरिकों की नजरों में सोशल मीडिया राजनीतिक जीवन के लिए रचनात्मक और विनाशकारी दोनों है. इस अध्ययन में शामिल देशों में, औसतन 57 प्रतिशत लोगों ने माना कि सोशल मीडिया लोकतंत्र के लिए अच्छा है, जबकि 35 प्रतिशत से ज्यादा लोगों का कहना था कि सोशल मीडिया विनाशकारी साबित हो रहा है.

सोशल मीडिया का अनसोशल चेहरा और मंच आर्थिक कमाई का जरिया भी है. नंगई, हिंसा और व्यभिचार-अतिचार की कहानियां, दृश्य, वीडियो और फोटो को वायरल करने में उसका कोई सानी नहीं है. इस तरह की सामग्री प्रसारित करने वालों को सोशल मीडिया मंच आर्थिक कमाई भी कराते हैं. और तो और, वे स्वयं भी ऐसी घटनाओं, दृश्यों को प्रसारित-प्रचारित और वायरल करने के लिए बड़ी रकम लेते हैं. संसदीय समिति के सामने फेसबुक और इंस्टाग्राम की संचालक कंपनी मेटा के अधिकारियों ने माना है कि उन्होंने काकरोच जनता पार्टी के प्रदर्शन के दौरान गाली, हिंसा आदि को बढ़ावा देने के लिए पैसे लिये थे. इन कोशिशों का उद्देश्य भारत में अराजकता फैलाना था. इस लिहाज से सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म राष्ट्रों के अंदरूनी मामलों में लोकतंत्र की रक्षा के मुखौटे के पीछे से दखल भी दे रहे हैं और राष्ट्रीय सुरक्षा को चुनौती भी. समय आ गया है कि उनके नियमन के लिए कठोर कानून बनाये जायें. जिसके तहत उन्हें अभिव्यक्ति के अधिकार को बढ़ावा देने की व्यवस्था तो हो, पर उसकी आड़ में अराजकता फैलाने की छूट न मिले.

(ये लेखक के निजी विचार हैं.)

देश दुनिया

प्रवासन में कमी से बांग्लादेश की आर्थिक स्थिति के प्रभावित होने की आशंका

पिछले चार दशकों से, बांग्लादेश एक आसान, पर असरदार आर्थिक समझौता चला रहा है : खाड़ी देशों में मजदूर भेजना और वहां से कमाई देश में लाना. अब यह समझौता कमजोर पड़ता दिख रहा है. सरकार के ताजा आंकड़ों से पता चलता है कि जून में समाप्त हुए वित्त वर्ष में 9.69 लाख से कुछ कम बांग्लादेशी विदेश में नौकरी के लिए गये. यह पिछले पांच वर्षों में सबसे कम संख्या है और बीते वर्ष की तुलना में पांच प्रतिशत की गिरावट है. हर महीने विदेश जाने वालों की संख्या, जो वर्षों से लगभग एक लाख थी, मार्च के बाद तेजी से कम हुई है. ऐसे में स्पष्ट है कि बांग्लादेश का एक क्षेत्र पर अत्यधिक निर्भर रहना जोखिम भरा है. वित्त वर्ष 2015 और 2025 के बीच काम के लिए विदेश जाने वाले 86 लाख से अधिक बांग्लादेशियों में से तीन-चौथाई पश्चिम एशिया गये थे. जब से इस क्षेत्र में स्थिरता खत्म हुई है, तब से यह निर्भरता खतरनाक हो गयी है. फिलहाल, रेमिटेंस के आंकड़े कुछ राहत देते हैं. कमजोर अर्थव्यवस्था के लिए रेमिटेंस भरोसेमंद सुरक्षा कवच रहा है, इसलिए सरकार इसकी अनदेखी नहीं कर सकती. अच्छी बात यह है कि दूसरी जगहों पर भी कुछ रास्ते खुल रहे हैं. प्रधानमंत्री तारिक रहमान के हालिया दौरे के बाद मलेशिया के श्रम बाजार के फिर से खुलने की उम्मीद है, भर्तीकर्ता दो से तीन लाख कामगारों की जरूरत बता रहे हैं. पर यह उस संख्या का बहुत छोटा-सा हिस्सा है, जिसे अकेले खाड़ी देश खपाते थे. इस घटना से मिलने वाली सीख स्पष्ट है. केवल एक क्षेत्र पर अत्यधिक निर्भर रहनेवाला श्रम निर्यात मॉडल आने वाले समय में भरोसेमंद रणनीति नहीं हो सकती. सरकार को गंतव्य बाजार में विविधता लानी चाहिए, वीजा और भर्ती की अड़चनों को कम करना चाहिए, और कौशल प्रशिक्षण में जरूरी निवेश करना चाहिए, ताकि बांग्लादेशी कामगार जोखिम भरी नौकरियों के बजाय अधिक वेतन और सुरक्षित नौकरियों के लिए मुकाबला कर सकें.

The Daily Star

बोधि वृक्ष

पड़ोसी धर्म को पहचानें

एक दौर था जब पूरा मोहल्ला एक बड़े परिवार जैसा होता था. आज की जीवनशैली ने हमें कंक्रीट के आलीशान फ्लैटों में तो बंद कर दिया है, पर हमारे दिल के दरवाजे छोटे कर दिये हैं. स्थिति यह है कि हम एक ही बिल्डिंग में सालों-साल रहते हैं, पर यह पता नहीं होता है कि हमारे ठीक सामने वाले दरवाजे के पीछे कौन रहता है. हमारा यह आत्म केंद्रित व्यवहार सामाजिक ताने-बाने को कमजोर कर रहा है. मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है. हम चाहे कितने भी समृद्ध क्यों न हो जायें, चाहे हमारे पास सुरक्षा के कितने ही आधुनिक उपकरण क्यों न हों, हम अकेले जीवित नहीं रह सकते. जब हम अपने पड़ोस से कट जाते हैं, तब अनजाने में अपने बच्चों को एक असुरक्षित माहौल दे रहे होते हैं. आज के समय में जब बुजुर्ग घरों में अकेले रह रहे हैं और कामकाजी माता-पिता के बच्चे आया के भरोसे पल रहे हैं, तब एक अच्छे और जीवंत पड़ोस की भूमिका और भी महत्वपूर्ण हो जाती है. सुख-दुख में अपनों से भी पहले जो दरवाजा खटखटाया जा सकता है, वह पड़ोसी का ही होता है. इस खोते हुए सामाजिक मूल्य को दोबारा जीवित करने के लिए हमें अपनी चारदीवारी से बाहर कदम निकालना होगा. इसके लिए संवाद की शुरुआत करें. जब भी सुबह या शाम अपने पड़ोसी से आमना-सामना हो, तो मुस्कान के साथ 'नमस्ते', करने या उनका हालचाल पूछने की आदत डालें.

त्योहारों और खुशियों के अवसर पर अपने घर में बनने वाले विशेष पकवान को पड़ोसियों के साथ साझा करें. त्योहारों के मौके पर उनके घर जायें और उन्हें अपने घर आमंत्रित करें. खुशियां साझा करने से ही संबंध गहरे होते हैं. संकट में मददगार बनें. आपका छोटा-सा प्रयास किसी के लिए बड़ा संबल बन सकता है. महीने या दो महीने में एक बार मोहल्ले या सोसाइटी के स्तर पर एक छोटी-सी बैठक, सफाई अभियान या सांस्कृतिक कार्यक्रम का आयोजन करें, जहां हर उम्र के लोग, विशेषकर बच्चे और बुजुर्ग, एक साथ बैठकर हंस-बोल सकें. आइए, इस सप्ताह एक नया संकल्प लें कि हम अपने 'पड़ोसी धर्म' को पहचानेंगे.

-मुनिश्री प्रमाण सागर जी महाराज

कुछ अलग

सॉफ्ट इ कचरा छोटी समस्या नहीं है

मुरली मनोहर श्रीवास्तव
टिप्पणीकार
writermurli@gmail.com

आज पुराना मोबाइल हटाना बड़ी समस्या है. यह समय मोबाइल को बेचने का नहीं, उसे खाली करने का है. फैक्ट्री रिसेट करने के बाद भी उसमें स्टोर डाटा रिकवर हो जाता है. ऐसे में हर घर में ढेरों पुराने मोबाइल पड़े मिल जायेंगे. ऐसे मोबाइल आप किसी को दे भी नहीं सकते, क्या पता कब इसका मिसयूज हो जाये और आइएमइआइ नंबर से कोई आप तक पहुंच जाये. यहां तक तो फिर भी ठीक है. पर जरा सोचिए, आज हमारे सोशल मीडिया पर कितने वीडियो और फोटो लोड हैं, हमारे मोबाइल, पेन ड्राइव और गूगल ड्राइव में कितने डाटा स्टोर हैं. कभी मेल देखिए तो पता चलेगा कि दसियों वर्ष पुरानी मेल पड़ी है, जिसका ओर-छोर पता ही नहीं चल रहा है. स्पैम मेल और प्रमोशन मेल अलग हैं.

हम किसी काम के लिए मोबाइल उठाते हैं और अपने आप हाथ इमेल और व्हाट्सएप पर चला जाता है- क्या अपडेट आया है, कौन सी नयी सूचना मेल दिखा रहा है, फिर दो मिनट भी नहीं होता और हम यूट्यूब पर जिज्ञासा भरी नजर डालने लगते हैं कि क्या पता कुछ बड़ा हुआ हो. फिर आइडी और पासवर्ड के लिए कभी डायरी, तो कभी कहीं सेव मेमोरी सर्च करते हैं. हमारे पास डाटा का इतना बड़ा भंडार हो गया है कि आज उसमें से कुछ भी जरूरी ढूंढना एक टेढ़ी खीर है. यह प्रवाह लगातार बढ़ता जा रहा है. सोशल मीडिया पर अफसोस तब होता है जब किसी मनुष्य के दुनिया छोड़ जाने के बाद भी उसकी फ्रेंड रिक्वेस्ट ऑटो में रीफ्रेश होती रहती है. किसे फुर्सत है कि किसी के होने और न होने को देखे या जांचे. खैर! मामला बहुत गंभीर है. हम अपने आपको और अपनों को यादों में बनाये रखने के लिए लगातार सॉफ्ट इ कचरा बढ़ा रहे हैं. जबकि हम यह भूल जाते हैं कि किसी को फुर्सत ही नहीं है स्वयं की दुनिया से बाहर देखने और झांकने की.

आप घरों में देखेंगे, तो पायेंगे कि न जाने कितनी पुश्तैनी चीजें रखी हैं और कुछ तो ऐसी मिलेंगी जिनके बारे में घर के किसी सदस्य तक को पता नहीं होगा. न जाने कितनी ब्लैक एंड व्हाइट तस्वीरें होंगी, जिनमें दादा-दादी के साथ कौन रिश्तेदार खड़ा है, यह पहचान पाना मुश्किल होगा. ऐसी ही स्थिति सॉफ्ट इ कचरे की हो चली है, हम अपनी पुरानी मेल, अनावश्यक फोटो और न जाने कितने अर्थहीन डॉक्यूमेंट हटाना ही नहीं चाहते, उम्मीद करते हैं कि कोई आयेगा जो इसमें से निरर्थक सामान छांटकर हटा देगा. जबकि ऐसा कभी नहीं होगा. यह इ कचरा एक दिन हमें ही बोझ लगने लगेगा. सो, बेहतर है कि सच्चाई को स्वीकारते हुए हम स्वयं ही अपने निरर्थक डाक्यूमेंट्स और मेमोरी को खाली करते रहें.

आपके पत्र

अपराध की आग में झुलसता समाज

देश के विभिन्न हिस्सों से लगातार चाकूबाजी और गोलीबारी की घटनाएं सामने आ रही हैं. मामूली विवाद या आपसी रंजिश सीधे जानलेवा हमले का रूप ले रही हैं. यह स्थिति समाज के लिए गंभीर चिंता का विषय है. केवल पुलिस के भरोसे अपराध पर अंकुश नहीं लगाया जा सकता. परिवारों को बच्चों में नैतिक संस्कार और धैर्य विकसित करना होगा. युवाओं को हिंसा के बजाय संवाद का रास्ता चुनना होगा. संदिग्ध गतिविधियों की सूचना देना और असामाजिक तत्वों का बहिष्कार करना आवश्यक है. सुरक्षित समाज का निर्माण जागरूक नागरिकों से ही संभव है.

ओम प्रकाश पंडित, (कातर)भोजपुर

विपक्ष की विश्वसनीयता और लोकतंत्र

लोकतंत्र की सबसे बड़ी शक्ति सशक्त विपक्ष है, लेकिन उसकी सबसे बड़ी कसौटी उसकी विश्वसनीयता है. जब यही विश्वसनीयता जनता की नजरों में संदेह के घेरे में आने लगे, तब खतरा केवल किसी राजनीतिक दल पर नहीं, बल्कि लोकतंत्र की आत्मा पर मंडराने लगता है. ऐसे समय में सत्ता और विपक्ष दोनों का दायित्व है कि वे दलगत हितों से ऊपर उठकर लोकतांत्रिक संस्थाओं की गरिमा की रक्षा करें. पूर्व प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी ने संसद में कहा था 'सरकारें आयेंगी-जायेंगी, पार्टियां बनेंगी-बिगड़ेंगी, लेकिन यह देश रहना चाहिए, इस लोकतंत्र का अमर रहना चाहिए.' यह केवल एक राजनीतिक वक्तव्य नहीं, बल्कि भारतीय संसदीय लोकतंत्र का मूल मंत्र है.

युगल किशोर राही, छपरा

पोस्ट करें : प्रभात खबर, प्लॉट संख्या डी-9-10, पाटलिपुत्र इंडस्ट्रियल एरिया, पटना (बिहार) - 800013 ■ मेल करें : patna@prabhatkhabar.in पर ■ ई-मेल संक्षिप्त व हिंदी में हो. लिपि रोमन भी हो सकती है.

हो सकता है मैं आपके विचारों से सहमत न हो पाऊं फिर भी विचार प्रकट करने के आपके अधिकारों की रक्षा करूंगा। –वाल्तेयर

राजस्थान पत्रिका
संस्थापक
कर्पूर चन्द्र कुलिश

भारत को आसान बाजार बने रहने की जरूरत नहीं

एक ही ब्रांड, एक ही उत्पाद, लेकिन देश बदलते ही मानक बदल जाते हैं। भारत में जिस सामग्री के साथ कोई उत्पाद बिक सकता है, उस पर दूसरे देश में रोक या कड़ी पाबंदी है। भारत में जिस पेय को केमिकल से चटक नारंगी रंग का बनाया जाता है, यूरोप में वही पेय असली नारंगी से बना पीले रंग का मिलता है, क्योंकि वहां केमिकल मिलाने की इजाजत नहीं है। हर देश के अपने वैज्ञानिक और नियामकीय मानक हैं, लेकिन सवाल गंभीर है कि क्या भारतीय उपभोक्ता को सुरक्षा का वही स्तर मिल रहा है, जो दुनिया के बेहतर नियमन वाले बाजारों में मिलता है?

मुद्दा सिर्फ खाने की थाली का नहीं है। यही सवाल मोबाइल स्क्रीन पर भी खड़ा है। सोशल मीडिया के करोड़ों भारतीय उपयोगकर्ता अपना डेटा, व्यवहार और कंटेंट वैश्विक कंपनियों को सौंपते हैं। 2024 में वॉट्सऐप की प्राइवेसी पॉलिसी को लेकर भारतीय प्रतिस्पर्धा आयोग ने मेटा पर 213 करोड़ रुपए से अधिक का जुर्माना लगाया। यानी यह मान लेना गलत होगा कि भारत में कंपनियां मनमानी करती रहेंगी और कोई पूछने वाला नहीं होगा। लेकिन सवाल यह है कि पूछने वाला कितनी देर में पूछता है और कितनी मजबूती से पूछता है? यहीं समस्या की जड़ है। कंपनियां अक्सर वही करती हैं, जिसकी 'गुंजाइश' बाजार और नियमन देते हैं। जहां नियम स्पष्ट हों, निगरानी लगातार हो और उल्लंघन पर कार्रवाई निश्चित हो, वहां अनुपालन कारोबारी संस्कृति बन जाता है। जहां कार्रवाई धीमी या अनिश्चित हो, वहां नियम सिर्फ जोखिम की कीमत बनकर रह जाते हैं। दुनिया के कई देशों ने इस फर्क को समझा है। ऑस्ट्रेलिया में आयातित और स्थानीय खाद्य पदार्थों के लिए समान खाद्य मानक हैं। अमरीका में खाद्य सुरक्षा के लिए मजबूत नियामकीय निगरानी है। यूरोप ने डिजिटल प्लेटफॉर्मों के लिए पारदर्शिता, जोखिम आकलन और जवाबदेही को अनिवार्य किया है। वहां के बाजार के अनुसार नियामक की पकड़ भी बड़ी है। भारत में कानूनों की कमी नहीं है। खाद्य सुरक्षा के नियम हैं, डेटा संरक्षण कानून है, डिजिटल प्लेटफॉर्मों के लिए नियम लगातार सख्त हो रहे हैं, लेकिन कमी है तो कानून और उसके अमल के बीच की दूरी में।

भारत को दुनिया की कंपनियां चाहिए, निवेश चाहिए, तकनीक चाहिए, रोजगार चाहिए, लेकिन इसके लिए भारतीय उपभोक्ता को कमजोर मानक देने की कोई मजबूरी समझ में नहीं आती। विदेशी कंपनी हो या घरेलू, नियम सबके लिए एक होने चाहिए। क्योंकि मजबूत नियमन विकास का विरोधी नहीं, भरोसेमंद बाजार की बुनियाद है। खाने से लेकर डेटा तक, सोशल मीडिया से लेकर एआइ तक, एक बात तय होनी चाहिए, भारतीय होने के कारण किसी नागरिक की सुरक्षा, निजता या उपभोक्ता अधिकारों का पैमाना छोटा नहीं हो सकता। भारत को अब आसान बाजार बने रहने की जरूरत नहीं। सबको स्पष्ट होना चाहिए- भारत बाजार है, प्रयोगशाला नहीं।

संवाद की गरिमा: जैसे दूषित विचार भाषा को प्रभावित करते हैं, वैसे ही दूषित भाषा हमारी सोच को प्रभावित करने लगती है

अमर्यादित भाषा: सामाजिक संवेदनशीलता पर चोट

डॉ. ऋतु सारस्वत
समाजशास्त्री एवं स्तंभकार
@patrika.com

स्टैंड-अप कॉमेडी, सोशल मीडिया रील्स, डिजिटल मंचों, सामाजिक विमर्श और राजनीतिक मंचों पर अभद्र, आपत्तिजनक और अमर्यादित भाषा का प्रयोग लगातार बढ़ा है। यह अब कई मंचों पर लोकप्रियता हासिल करने का माध्यम बन गया है।

दिल्ली के जंतर-मंतर पर हुए आंदोलन ने ऐसी चर्चा को सामने लाकर खड़ा कर दिया, जिस पर शायद बहुत पहले बात हो जानी चाहिए थी। बात 'भाषा' की है। आंदोलन में कई बार भाषा का नियंत्रण टूटता हुआ नजर आया। बीते कुछ वर्षों में विभिन्न सार्वजनिक मंचों पर भी अमर्यादित भाषा का प्रयोग लगातार बढ़ा है। इस 'असामान्य प्रवृत्ति' को हमने सामान्य मान लिया है। चिंता का विषय यह है कि अभद्र, अश्लील और अमर्यादित भाषा का प्रयोग करने वाले व्यक्ति को निर्भीक, प्रभावशाली और प्रभुत्वशाली समझा जाने लगा है। किंतु मूल प्रश्न यह है कि क्या किसी विचार की शक्ति उसकी भाषा में प्रयुक्त अभद्रता और अश्लीलता से तय होती है, या उसके तर्क की दृढ़ता से?

पिछले कुछ दशकों में हमारे संवाद का स्वरूप तेजी से बदला है। स्टैंड-अप कॉमेडी, सोशल मीडिया रील्स, डिजिटल मंचों, सामाजिक विमर्श और राजनीतिक मंचों पर अभद्र, आपत्तिजनक और अमर्यादित भाषा का प्रयोग लगातार बढ़ा है। यह अब कई मंचों पर लोकप्रियता हासिल करने का माध्यम बन गया है। भाषा केवल शब्दों का समूह नहीं, बल्कि सामाजिक मूल्यों और मानसिकता का प्रतिबिंब होती है। जब अमर्यादित भाषा सामान्य व्यवहार का हिस्सा बनने लगे, तो यह समाज के बदलते मानदंडों और सांस्कृतिक प्रवृत्तियों का संकेत भी देती है। किसी व्यक्ति की भाषा उसके व्यक्तित्व, उसकी सोच और उसके सामाजिक व्यवहार का परिचय देती है। पितृसत्तात्मक व्यवस्था में अभद्र, अश्लील और आक्रामक भाषा को लंबे समय तक पुरुषत्व और पुरुष वर्चस्व के साथ जोड़कर देखा जाता रहा। समय के साथ यह मिथक भी स्थापित होता गया कि अभद्र और आक्रामक भाषा किसी व्यक्ति को अधिक प्रभुत्वशाली बना देती है। इस मिथक के बीच एक और तथ्य है जो विचार करने योग्य है और वह यह हर समाज अपनी सांस्कृतिक मर्यादाओं के अनुरूप व्यक्ति के अंतरंग जीवन और उसकी गरिमा से जुड़े विषयों तथा शब्दों को अपनी सार्वजनिक शब्दावली से अलग रखता है परंतु बीते दशकों में यही विषय और उनसे जुड़े शब्द सामान्य बोलचाल का अभिन्न हिस्सा गए।

चिंतन का विषय यह है कि अभद्र और अश्लील भाषा का एक बड़ा हिस्सा अंततः स्त्री की देह और अंतरंग संबंधों पर ही जाकर केंद्रित हो जाता है। निश्चित रूप से विश्व की लगभग सभी भाषाओं में प्रचलित बड़ी संख्या में अभद्र और अश्लील गालियां अंततः स्त्री की देह, उसकी यौनिकता अथवा उससे जुड़े संबंधों पर जाकर केंद्रित हो जाती हैं। सबसे बड़ा विरोधाभास यह है कि अनेक अवसरों पर इस प्रकार की भाषा का प्रयोग वे लोग भी करते दिखाई देते हैं, जो सार्वजनिक रूप से लैंगिक समानता और स्त्री गरिमा की पुरजोर वकालत करते हैं। परिणामस्वरूप भाषा की मर्यादा बनाए रखने वाला व्यक्ति अनेक बार अनावश्यक रूप से कम प्रभावी समझ लिया जाता है। यह स्थिति इसलिए और भी चिंताजनक है क्योंकि छद्म लोकप्रियता और सामाजिक स्वीकृति के बदलते पैमाने का सबसे अधिक प्रभाव युवा पीढ़ी पर पड़ रहा है। क्षणिक आकर्षण को वास्तविक लोकप्रियता समझ लेने की यह प्रवृत्ति स्वस्थ सामाजिक व्यवहार के लिए भी गंभीर चुनौती बनती जा रही है। जिस प्रकार सम्मानजनक भाषा सामाजिक विश्वास को मजबूत करती है, उसी प्रकार उपहास, अपमान और अभद्र भाषा धीरे-धीरे सामाजिक संवेदनशीलता को भी क्षीण करती है। ब्रिटिश लेखक जॉर्ज ऑरवेल ने अपने निबंध 'पॉलिटिक्स एंड द इंग्लिश लैंग्वेज' में चेताया था कि जिस प्रकार दूषित विचार भाषा को प्रभावित करते हैं, उसी प्रकार दूषित भाषा भी हमारी सोच को प्रभावित करने लगती है।

भाषा केवल हमारे विचारों को व्यक्त नहीं करती, बल्कि उन्हें गढ़ती भी है। हम जिस भाषा का निरंतर प्रयोग करते हैं, वही हमारी संवेदनाओं, सामाजिक व्यवहार और दूसरों के प्रति दृष्टिकोण को भी प्रभावित करने लगती है। यदि अश्लील और अपमानजनक भाषा को सामान्य व्यवहार के रूप में स्वीकार किया जाए तो उसका प्रभाव केवल संवाद तक सीमित नहीं रहता, बल्कि सामाजिक चेतना और आने वाली पीढ़ियों की सोच पर भी पड़ता है। यक्ष प्रश्न यह है कि जब विश्वभर में संवेदनशील वर्ग इस बात पर बल दे रहा है कि स्त्री-समानता का प्रथम अध्याय उसकी गरिमा और उसकी देह के प्रति सम्मान से प्रारंभ होता है, तब दूसरी ओर एक ऐसी प्रवृत्ति भी विकसित होती दिखाई दे रही है, जिसमें अभद्र और अश्लील भाषा को निर्भीकता, स्पष्टवादिता और प्रभाव का प्रतीक मान लिया गया है। इसका प्रभाव यह हुआ है कि कुछ महिलाएं भी यह मानने लगी हैं कि इसी भाषा का प्रयोग उन्हें पुरुषों के समान प्रभुत्व स्थापित करने में सहायक होगा। किंतु क्या समानता का अर्थ उसी भाषाई संरचना को स्वीकार कर लेना है, जिसने सदियों से स्त्री की देह को अपमान का माध्यम बनाया है?

भाषा किसी भी सभ्यता की आत्मा होती है। वह केवल संवाद का माध्यम नहीं, बल्कि उस समाज की संवेदनशीलता, उसकी संस्कृति और उसके भविष्य की दिशा भी निर्धारित करती है। अभद्र, अश्लील और अमर्यादित भाषा को सामान्य व्यवहार, लोकप्रियता अथवा निर्भीकता का प्रतीक मान लेना किसी भी स्वस्थ समाज के लिए शुभ संकेत नहीं हो सकता। मतभेद लोकतंत्र की शक्ति हैं, परंतु भाषा की मर्यादा किसी भी सभ्य समाज की पहचान होती है। यदि आने वाली पीढ़ियों को हम सम्मान, संवेदनशीलता और सार्थक संवाद की संस्कृति देना चाहते हैं, तो हमें अपनी सार्वजनिक भाषा पर पुनर्विचार करना ही होगा। प्रश्न केवल शब्दों का नहीं है। शब्द विचारों को जन्म देते हैं, विचार व्यवहार को दिशा देते हैं और वही व्यवहार किसी भी समाज के चरित्र का निर्माण करता है।

saraswatsamantritu@gmail.com

प्रसंगवश

सीएनजी वाहन बढ़े तो व्यवस्था क्यों नहीं?

स्टेशनों की कमी, ईंधन भरवाने के लिए करना पड़ता है इंतजार

वाहनों की बढ़ती संख्या विकास की तस्वीर हो सकती है, लेकिन सुविधा के लिए कतार में खड़ा होना व्यवस्था की तस्वीर बन जाती है। जयपुर में 50 हजार से अधिक सीएनजी वाहन हैं और स्टेशन केवल 38 ही हैं। नतीजा, ईंधन भरवाने के लिए 30 से 50 मिनट तक इंतजार करना पड़ता है। दूसरी ओर पूरे राजस्थान में करीब चार लाख वाहनों में वीएलटीडी लगाई जानी है, लेकिन प्रभावी रूप से काम करने वाली कंपनियां 23 ही हैं। यानी वाहनों की संख्या देखते हुए सुविधा सीमित है। दोनों मामले अलग-अलग विभागों के हैं, मगर बीमारी एक ही है। वाहन और नियम बढ़ाने की रफ्तार तेज लेकिन सुविधा का ढांचा बढ़ाने की रफ्तार बेहद सुस्त। सरकार को यह सवाल खुद से पूछना चाहिए कि जब वाहनों की संख्या बढ़ रही थी तो सीएनजी स्टेशन और उनकी क्षमता क्यों नहीं बढ़ाई गई? जब वीएलटीडी अनिवार्य की जा रही थी तो पर्याप्त कंपनियां और इंस्टॉलेशन क्षमता पहले क्यों नहीं तैयार की गई?

सरकारी व्यवस्था की पुरानी बीमारी है, पहले नियम लागू होता है फिर विभाग मांग और क्षमता का हिसाब लगाता है। सीएनजी पंप पर खड़े वाहन चालक का आधा घंटा भी नुकसान है। वीएलटीडी के लिए भटकता वाहन मालिक भी समय, ईंधन और कामकाज गंवा रहा है। यह नुकसान नागरिक भुगतता है। सरकार को अब सुविधाओं की संख्या नहीं, सुविधा मिलने में लगने वाला समय सफलता का पैमाना बनाना चाहिए। जहां कतार लंबी हो, वहां अतिरिक्त डिस्पेंसर, नए स्टेशन बढ़ें। वीएलटीडी में गुणवत्ता से समझौता किए बिना सक्षम कंपनियों के लिए अनुमोदन प्रक्रिया तेज हो। वाहनों की संख्या बढ़ने का पूर्वानुमान लगाना कठिन नहीं है। फिर भी मांग और उपलब्धता के बीच अंतर क्यों बना रहा, इसका जवाब सरकार को देना चाहिए। हर नई नीति के साथ क्षमता का आकलन हो। नागरिक नियम मानने को तैयार हैं। सरकार भी अपनी जिम्मेदारी निभाए। वाहन सड़क पर चलने के लिए हैं, सुविधा की कतार में खड़े रहने के लिए नहीं।

■ महेंद्र सिंह शेखावत
mahendra.shekhawat@in.patrika.com

बुक इनसाइट

हैलो ब्यूटीफुल: रिश्तों का जुड़ाव

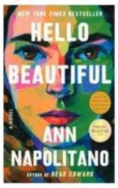

कुछ परिवार रिश्तों से बनते हैं और कुछ अपनी मजबूत भावनात्मक जुड़ाव से। ऐन नेपोलिटानो की किताब 'हैलो ब्यूटीफुल' ऐसी ही एक कहानी है, जिसमें परिवार के प्यार, टूटते रिश्तों, पुराने दुख और दोबारा जुड़ने की उम्मीद को बेहद संवेदनशील ढंग से सामने रखा गया है। वर्ष 2023 में प्रकाशित यह उपन्यास चार बहनों और उनके जीवन में आने वाले एक युवक की कहानी के जरिये परिवार की जटिलताओं को समझने की कोशिश करता है। यह किताब 'लिटिल वुमन' से प्रेरित है। चारों बहनों में उसके किरदारों की झलक दिखाई देती है, लेकिन कहानी को आधुनिक समय और अलग पारिवारिक परिस्थितियों में आगे बढ़ाया गया है। कहानी आगे बढ़ने के साथ प्यार के साथ-साथ गलतफहमियां, मानसिक संघर्ष, त्याग और परिवार के भीतर छिपे दर्द सामने आते हैं। रिश्तों में आई दरारें कई सालों तक असर डालती हैं, लेकिन किताब यह भी बताती है कि प्यार और समझदारी से टूटे रिश्तों को फिर से जुड़ सकते हैं। भावनात्मक और पारिवारिक कहानियां पसंद करने वालों को यह पसंद आएगी।

फैक्ट फ्रंट

फिडलर क्रैब: अनोखा बड़ा पंजा

दुनिया में कई ऐसे जीव हैं, जो अपनी अनोखी बनावट और आदतों के कारण सभी का ध्यान खींचते हैं। फिडलर क्रैब भी ऐसा ही केकड़ा है। समुद्र के किनारे और कीचड़ वाले इलाकों में पाया जाने वाला यह छोटा-सा केकड़ा अपने बड़े पंजे के लिए जाना जाता है। इसका एक पंजा दूसरे पंजे की तुलना में कई गुना बड़ा होता है। यह बड़ा पंजा नर फिडलर क्रैब की पहचान है। लेकिन इसका इस्तेमाल खाना खाने के लिए नहीं होता। भोजन उठाने और मुंह तक पहुंचाने का काम इसका छोटा पंजा करता है। बड़ा पंजा मुख्य रूप से साथी को आकर्षित करने और दूसरे नर केकड़ों से मुकाबला करने में काम आता है। दूर से देखने पर ऐसा लगता है, जैसे वह किसी को हाथ हिलाकर बुला रहा हो। जिस नर का पंजा बड़ा और आकर्षक होता है, वह मादा का ध्यान खींचने में अधिक सफल हो सकता है। बड़ा पंजा फिडलर क्रैब के लिए इलाके की लड़ाई में भी काम आता है। जब दो नर एक ही जगह पर कब्जा करना चाहते हैं, तो वे अपने बड़े पंजों का प्रदर्शन करते हैं। जरूरत पड़ने पर दोनों पंजों से एक-दूसरे को पीछे हटाने की कोशिश करते हैं।

अमरीका में साख वेलफेयर पर हमारी निर्भरता कम

भारतीयों की पहचान: न्यूनतम सहायता, अधिकतम योगदान

डी.पी. शर्मा
यूनाइटेड नेशन से जुड़े डिजिटल डिप्लोमेट
@patrika.com

वैश्विक प्रवासन (इमिग्रेशन) की बहस में अक्सर भावनाएं तथ्यों पर भारी पड़ जाती हैं। लेकिन अमरीका के राष्ट्रपति डॉनल्ड ट्रंप द्वारा 'ट्रुथ सोशल' पर साझा किए गए आंकड़ों ने इस बहस को एक नया, तथ्यात्मक आधार दे दिया है। यह सूची 'इमिग्रेंट वेलफेयर रिसिपिएंट रेट्स बाय कंट्री ऑफ ओरिजिन' लगभग 120 देशों के प्रवासियों द्वारा अमरीकी सरकारी सहायता के उपयोग की दर को दर्शाती है। इसको सीधा यूं कह सकते हैं कि इन सभी देश के लोग मुफ्त भोगी हैं। इस संदर्भ में भारत की स्थिति न केवल अलग है, बल्कि वैश्विक स्तर पर प्रेरणादायक भी है।

विश्लेषकों की मानें तो इसका अर्थ है, 'अमरीका में भारतीय मूल के नागरिकों की वेलफेयर (आश्रित मुफ्त भोगी) पर निर्भरता सबसे कम वालों में है, जो सामान्यतः 25 प्रतिशत की सीमा से भी काफी नीचे मानी जाती है। इनमें अधिकांश वे लोग हैं जो या तो बीमार हैं या वृद्ध।' यह केवल आंकड़ा नहीं, बल्कि भारतीय सामाजिक-सांस्कृतिक पूंजी का प्रमाण है, जहां स्वाभिमान, शिक्षा, कौशल, परिश्रम और उद्यमशीलता भारतीयों के जीवन-मूल्य हैं। भारतीय नागरिक शिक्षा, अंतरिक्ष क्षेत्रों, हेल्थकेयर, आइटी, स्टार्टअप्स और छोटे व्यवसायों के माध्यम से टोटल टैक्स में बहुत बड़ा योगदानकर्ता बनते हैं, न कि बोझ बनते हैं। डॉनल्ड ट्रंप की 2025 के बाद नवीन अमरीकी नीति में 'एड नहीं, ट्रेड' का स्पष्ट रुझान दिखता है। भारत अब 'विदेशी सहायता लेने वाला देश नहीं', बल्कि इससे काफी आगे निकल कर रणनीतिक, तकनीकी और आर्थिक साझेदार बन चुका है। यह बदलाव भारत की आंतरिक शक्ति और नागरिकों की वैश्विक साख को दर्शाता है जो उन्हें स्वाभिमानी बनता है, न कि मुफ्त भोगी। भारतीय नागरिक अमरीका में 'न्यूनतम सहायता लेकर अधिकतम योगदान' करते हैं।

यह तथ्य और सत्य भारत के मस्तक को विश्व पटल पर चौड़ा कर देते हैं कि गौरवशाली देश के वैल्यू क्रिएटर स्वाभिमानी भारतीय हैं ना कि 'अमरीका के मुफ्त भोगी वेलफेयर उपभोक्ता'। यही कारण है कि भारतीय प्रवासी समुदाय को अमरीका की नीति, टेक्नोलॉजी और अकादमिक दुनियां में सम्मान और प्रभाव की दृष्टि से देखा जाता है। जब दुनिया विदेशी लोगों के प्रवासन को संकट के रूप में देख रही है, तब भारतीय नागरिक समाधान और मूल्यवान मानव संसाधन के रूप में उभरते हैं। चीन, रूस और यूरोप के विकसित देशों के नागरिकों की तुलना में भी भारतीयों की आत्मनिर्भरता यह सिद्ध करती है कि 'भारत की असली शक्ति उसकी सरकारों और उनके तंत्रों से नहीं, उसके नागरिकों से आती है।' यही सत्य के स्तंभ पर चमकते तथ्य भारत को 21वीं सदी की वैश्विक राजनीति और अर्थव्यवस्था में एक विश्वसनीय, आत्मनिर्भर और सम्मानित, शक्ति संपन्न देश बनाते हैं।

dp.shiv08@gmail.com

मोंट सेंट-मिशेल: समुद्र के बीच जादुई संसार

फ्रांस के उत्तरी तट पर स्थित मोंट सेंट-मिशेल अपनी प्राकृतिक सुंदरता, ऐतिहासिक महत्व और अद्भुत वास्तुकला के लिए दुनिया भर में प्रसिद्ध है। समुद्र की ज्वारीय खाड़ी के बीच ऊंची चट्टान पर बना यह द्वीप पहली नजर में ही आकर्षित करता है। इसके शिखर पर स्थित प्राचीन एबे और आसपास की मध्ययुगीन इमारतें इसकी खूबसूरती बढ़ाती हैं। ज्वार आने पर यह चारों ओर पानी से घिरकर किसी जादुई नगर जैसा दिखाई देता है। यह फ्रांस के प्रमुख पर्यटन स्थलों में शामिल होने के साथ यूनेस्को विश्व धरोहर स्थल भी है।

दृष्टिकोण सहायक स्वास्थ्य पेशेवरों की भूमिका महत्वपूर्ण

स्वास्थ्य प्रणाली केवल डॉक्टरों और नर्सों तक सीमित नहीं

हिमांगिनी राठौड़ हूजा, शिक्षाविद्
@patrika.com

भारत में स्वास्थ्य सेवाओं के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण परिवर्तन हो रहा है और इस परिवर्तन के केंद्र में 'सहायक स्वास्थ्य विज्ञान' उभर कर सामने आ रहे हैं। राष्ट्रीय सहायक एवं स्वास्थ्य व्यवसाय आयोग अधिनियम 2021 'एनसीएएचपी एक्ट' ने इस क्षेत्र को सुदृढ़ नियामक ढांचा प्रदान किया है, जिससे शिक्षा, प्रशिक्षण और रोजगार के नए अवसर विकसित हो रहे हैं। आज की स्वास्थ्य प्रणाली केवल डॉक्टर और नर्सों तक सीमित नहीं है। आधुनिक चिकित्सा सेवाएं डायग्नोस्टिक्स, पुनर्वास निवारक स्वास्थ्य, डिजिटल स्वास्थ्य और विशेष क्लिनिकल सहायता पर आधारित हैं। इन सभी क्षेत्रों में प्रशिक्षित सहायक स्वास्थ्य पेशेवरों की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है।

वर्ष 2021 में लागू एनसीएएचपी अधिनियम ने सहायक स्वास्थ्य पेशों को औपचारिक मान्यता प्रदान की है। अधिनियम की सबसे बड़ी उपलब्धि यह है कि इसने उन कई स्वास्थ्य व्यवसायों को वैधानिक पहचान दी है, जो पहले असंगठित रूप से कार्य कर रहे थे। यह बदलाव अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भी महत्वपूर्ण है। अमरीका, कनाडा, ऑस्ट्रेलिया और यूनाइटेड किंगडम जैसे देशों में सहायक स्वास्थ्य पेशे पूरी तरह विनियमित हैं। वहां कार्य करने के लिए मान्यता प्राप्त डिग्री, प्रशिक्षण और पंजीकरण आवश्यक होता है। भारत का यह कदम भविष्य में अपने प्रशिक्षित पेशेवरों के लिए वैश्विक अवसरों के द्वार खोल सकता है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार, वैश्विक स्तर पर स्वास्थ्यकर्मियों की भारी कमी है। भारत में भी यही स्थिति है। सरकार स्वास्थ्य अवसंरचना के विस्तार और कुशल मानव संसाधन तैयार करने पर ध्यान दे रही है। कुछ प्रमुख पाठ्यक्रमों जैसे मेडिकल लैबोरेटरी टेक्नोलॉजी, फिजियोथेरेपी और ऑक्यूपेशनल थेरेपी, ऑप्टोमेट्री, न्यूट्रिशन एवं डायटेटिक्स, हेल्थ इंफॉर्मेशन मैनेजमेंट, फिजिशियन एसोसिएट आदि की मांग तेजी से बढ़ रही है साथ ही, व्यवहारिक स्वास्थ्य और सामुदायिक मानसिक स्वास्थ्य जैसे क्षेत्र भी तेजी से उभर रहे हैं।

सहायक स्वास्थ्य स्वास्थ्य सेवाओं की गुणवत्ता सुधारने, लागत कम करने और ग्रामीण एवं दूरदराज क्षेत्रों तक सेवाएं पहुंचाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। यह योगदान 'सार्वभौमिक स्वास्थ्य कवरेज' के लक्ष्य को प्राप्त करने में भी सहायक है। अतः सहायक स्वास्थ्य विज्ञान अब 'वैकल्पिक' या 'दूसरे दर्जे' के कॅरियर नहीं रहे। ये आधुनिक स्वास्थ्य व्यवस्था का हिस्सा हैं और युवाओं के लिए सुरक्षित और वैश्विक अवसर प्रदान करने वाले कॅरियर विकल्प बन चुके हैं। एनसीएएचपी अधिनियम ने इस दिशा में मजबूत आधार तैयार किया है। अब आवश्यकता है जागरूकता और स्वीकार्यता की। जिससे सहायक स्वास्थ्य विज्ञान देश के युवाओं के लिए रोजगार का स्रोत बन सकता है।

himangini.rathore@gmail.com

आपकी बात

शिक्षा हो स्किल आधारित

स्किल आधारित शिक्षा रोजगार की दिशा में उपयोगी कदम है, लेकिन यह बेरोजगारी का समाधान नहीं है। कई कुशल युवा रोजगार की तलाश में हैं। वर्षों से रिक्त सरकारी पदों पर भर्ती न होना भी चिंता का विषय है। नए रोजगार के लिए शासकीय संयंत्रों और उद्योगों की स्थापना की गति बढ़ानी होगी। - **डॉ. मुकेश भटनागर**, भिलाई

पशुओं के प्रति संवेदना जरूरी

सड़कों पर घूमने वाले पशु प्लास्टिक और कचरा खाने को मजबूर हैं, जिससे उनकी असमय मौत हो रही है। स्थानीय निकायों को पशुओं के लिए उचित व्यवस्था करने के साथ सड़कों पर कचरा फैलने से रोकने के लिए भी कदम उठाने चाहिए। - **कुमार जितेंद्र जीत**, मोकलसर

समसामयिक विषयों पर पाठकों के विचार आमंत्रित हैं। चुनिंदा विचार प्रकाशित किए जाएंगे।
ईमेल करें: edit@epatrika.com

स्वास्थ्य सेवाएं भारत का चिकित्सा तकनीक क्षेत्र एशिया का चौथा सबसे बड़ा बाजार है और दुनिया के शीर्ष 20 बाजारों में शामिल है

आत्मनिर्भर चिकित्सा तकनीक: विकसित भारत की मजबूत नींव

जगत प्रकाश नड्डा
केंद्रीय स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्री
@patrika.com

भारत ने पिछले एक दशक में स्वास्थ्य सुविधाओं के क्षेत्र में अभूतपूर्व विस्तार किया है। सरकारी और निजी क्षेत्र में अस्पतालों, प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्रों, जांच केंद्रों और मेडिकल कॉलेजों की संख्या तेजी से बढ़ी है। शहरों के साथ ग्रामीण क्षेत्रों में भी स्वास्थ्य सुविधाओं का विस्तार हुआ है।

यह सरकार की ऐसी नीतियों को दर्शाता है, जिनका केंद्र आम नागरिक की स्वास्थ्य सुरक्षा है। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के नेतृत्व में सरकार ने गुणवत्तापूर्ण स्वास्थ्य सेवाओं को हर नागरिक तक पहुंचाने के लिए काम किया है। इन प्रयासों का परिणाम है कि देश में लोगों द्वारा अपनी जेब से स्वास्थ्य सेवाओं पर किए जाने वाले खर्च में कमी आई है। 65 प्रतिशत से घटकर यह खर्च 43 प्रतिशत रह गया है। प्रधानमंत्री आयुष्मान भारत स्वास्थ्य अवसंरचना मिशन के तहत सरकार ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रों की सार्वजनिक स्वास्थ्य व्यवस्था को मजबूत कर रही है। जैसे-जैसे भारत 2047 तक विकसित भारत बनने की दिशा में आगे बढ़ रहा है, जोर आत्मनिर्भर चिकित्सा तकनीक क्षेत्र तैयार करने पर है। इसका उद्देश्य स्वास्थ्य सेवाओं को और सस्ता, आसानी से उपलब्ध और किसी भी संकट के समय मजबूत बनाना है।

पहले, भारत कई आधुनिक और जटिल चिकित्सा उपकरणों के लिए काफी हद तक दूसरे देशों से होने वाले आयात पर निर्भर था। जिसे देखते हुए राष्ट्रीय चिकित्सा उपकरण नीति, 2023 में देश में ही आधुनिक चिकित्सा उपकरण बनाने की क्षमता बढ़ाने पर जोर दिया गया। उत्पादन से जुड़ी प्रोत्साहन योजना के तहत 50 से अधिक आधुनिक चिकित्सा उपकरणों का देश में उत्पादन शुरू हो चुका है। साथ ही, इस क्षेत्र में विदेशी निवेश लगातार बढ़ रहा है। ये उपलब्धियां बताती हैं कि भारत धीरे-धीरे दुनिया के चिकित्सा तकनीक क्षेत्र में भरोसेमंद भागीदार के रूप में उभर रहा है। भारत तेजी से आधुनिक चिकित्सा तकनीकों को अपना भी रहा है, ताकि लोगों का जीवन बेहतर बनाया जा सके।

भारत का विश्व स्तर पर पहचान बना चुका दवा उद्योग, मजबूत इंजीनियरिंग क्षमता, तेजी से फैलता डिजिटल ढांचा, तेजी से बढ़ता नए उद्यमों का क्षेत्र और कुशल मानव संसाधन अगली पीढ़ी की चिकित्सा तकनीक विकसित करने के लिए मजबूत आधार प्रदान करते हैं। एआइ, चिकित्सा उपकरण के रूप में इस्तेमाल होने वाले सॉफ्टवेयर, इंटरनेट से जुड़े चिकित्सा उपकरण, रोबोट आधारित तकनीक और दूर से जांच जैसी नई तकनीकों में भारत के पास देश और दुनिया की स्वास्थ्य जरूरतों के लिए नए समाधान विकसित करने के बड़े अवसर हैं। जैसे-जैसे भारतीय कंपनियां दुनिया के बाजार में विस्तार कर रही हैं, गुणवत्ता भी भारत में बने चिकित्सा उपकरणों की सबसे बड़ी पहचान बनती जा रही है। सरकार नियामक व्यवस्था को मजबूत करने, मान्यता प्राप्त जांच सुविधाओं का विस्तार करने, चिकित्सा उपकरणों की प्रभावशीलता से जुड़े वैज्ञानिक प्रमाण तैयार करने और अंतरराष्ट्रीय मानकों के अनुरूप व्यवस्था विकसित करने पर जोर दे रही है।

इससे मरीजों की सुरक्षा बढ़ेगी और वैश्विक बाजार में भारत की प्रतिस्पर्धा क्षमता भी मजबूत होगी। सरकार ऐसी स्थिर और पारदर्शी नीतियां बनाने के लिए प्रतिबद्ध है, जिनसे शोध, निवेश, तकनीकी साझेदारी और कारोबार करना आसान हो। भारत का चिकित्सा तकनीक क्षेत्र एशिया का चौथा सबसे बड़ा बाजार है और दुनिया के शीर्ष 20 बाजारों में शामिल है। फिलहाल इसका आकार 15 से 16 अरब डॉलर है और यह करीब 12 प्रतिशत की सालाना दर से बढ़ रहा है। इस वजह से यह देश के सबसे तेजी से बढ़ते विनिर्माण क्षेत्रों में से एक बन गया है। विकसित भारत का लक्ष्य गुणवत्ता, नए आविष्कार और सभी को साथ लेकर चलने के आधार पर दुनिया में नेतृत्व करने पर जोर देता है।

सरकार यह सुनिश्चित करने के लिए काम कर रही है कि नई चिकित्सा तकनीकें भारत की स्वास्थ्य जरूरतों को पूरा करें। प्रधानमंत्री के नेतृत्व में भारत आत्मनिर्भर चिकित्सा तकनीक व्यवस्था तैयार कर रहा है। इसका उद्देश्य देश की स्वास्थ्य सुरक्षा को मजबूत करना और बेहतर स्वास्थ्य के लिए भारत को दुनिया के भरोसेमंद साझेदार के रूप में स्थापित करना है।

हिन्दुस्तान
1936
सत्य • सार्थक • सदैव

झारखंड पर नजर

झारखंड में छात्र आंदोलन में आई तेजी चिंता जगाने के साथ ही विचार के लिए विवश करती है। कभी लगता है, समाधान निकलने ही वाला है, तो कभी समस्याएं बढ़ती नजर आने लगती हैं। वैसे, यह समस्या ऐसी नहीं है कि जिसका समाधान न हो और समाधान कभी भी निकल सकता है। सबकी निगाह झारखंड और वहां की सरकार पर टिकी है। सोमवार को छात्रों ने विधानसभा पहुंचने का प्रयास किया और पुलिस ने उन्हें रोकने की हर मुमकिन कोशिश की। पानी की बौछारों से छात्रों को रोकने की कोशिश हुई। लाठीचार्ज के भी आरोप लगे। हाथापाई के हालात बने। रांची के एक इलाके में आम जनजीवन अस्त-व्यस्त हो गया। काश ! झारखंड सरकार के साथ छात्रों की रविवार को हुई छठे दौर की बातचीत में संपूर्ण समाधान निकल आता और सड़क पर विरोध-प्रदर्शन की नौबत नहीं आती। खैर, बातचीत का क्रम टूटना नहीं चाहिए। एक तरफ, झारखंड सरकार का मानना है कि 98 प्रतिशत मांगें मान ली गई हैं, तो दूसरी ओर, छात्र नेता इससे इनकार कर रहे हैं। छात्रों ने अपनी मांगों को तीन श्रेणियों में बांटा है- परीक्षाएं रद्द करने संबंधी मांग, जांच संबंधी मांग और प्रक्रिया में सुधार संबंधी मांग। अब मामला परीक्षाओं को रद्द करने संबंधी मांग पर अटक रहा है।

दोराय नहीं कि परीक्षाओं को रद्द करने से कई तरह की समस्याएं उत्पन्न होंगी। राज्य सरकार के लिए कानूनी बाधाएं बहुत बढ़ जाएंगी, लेकिन सरकार को इसके लिए रास्ते निकालने पड़ेंगे। नियुक्तियों और परीक्षाओं की जांच चल रही है। परीक्षा या नियुक्ति में किसी गलती या अनियमितता को जस का तस छोड़ते हुए आगे बढ़ जाना अपराध से कम नहीं है। झारखंड में ही नहीं, अन्य राज्यों में भी कई अधिकारी चाहते हैं कि व्यवस्था की खामियों से मुंह चुराते हुए आगे बढ़ा जाए। हां, सरकार चाहे, तो छात्रों को विश्वास में लेकर आगे बढ़ सकती है, पर यह काम आसान नहीं होगा। आज छात्र बेरोजगारी से बहुत दुखी हैं। मेहनत करने के बावजूद सही ढंग से और समय पर रोजगार न मिलना युवाओं में निराशा लगातार बढ़ा रहा है। ऐसी निराशा केवल झारखंड में ही नहीं है, अन्य राज्यों में भी कमोबेश यही हाल है और इसे दूर करना सरकारों के लिए नामुमकिन नहीं है।

काश! झारखंड में रविवार को हुई छठे दौर की बातचीत में संपूर्ण समाधान निकल आता और सड़क पर विरोध-प्रदर्शन की नौबत नहीं आती।

छात्रों की समस्याओं पर व्यापकता में सोचने की जरूरत है। जहां शिक्षा तक सबकी पहुंच सुनिश्चित होनी चाहिए, वहीं किसी भी परीक्षा में चोरी की स्थिति नहीं बननी चाहिए। इसके बाद नौकरी या खाली पदों पर गौर करना होगा। बहुत से युवाओं का सपना सरकारी नौकरी होती है। देश में एक अनुमान के अनुसार, केंद्र और राज्य सरकारों के करीब 40 लाख पद खाली हैं। शिक्षा, पुलिस, सेना से लेकर प्रशासनिक सेवा तक लाखों युवाओं की भर्ती हो सकती है। भर्ती प्रक्रियाओं को तेज करना होगा। युवाओं में यह शिकायत आम हो रही है कि हम अपने देश में रोजगार-विहीन विकास को बढ़ावा दे रहे हैं। देश में युवाओं की तादाद ज्यादा है, तो यहां विकास भी चाहिए और रोजगार भी। केवल धन की वृद्धि या मुफ्त योजनाओं से निराशा दूर नहीं होगी। क्या देश के बड़े उद्यमी तेजी से अमीर हो रहे हैं, पर उसी गति से रोजगार नहीं दे रहे हैं? निजी क्षेत्र से युवा नौकरी नहीं मांग सकते, पर सरकारों से अधिकार के साथ मांग सकते हैं। उम्मीद करनी चाहिए कि झारखंड सरकार जल्द छात्रों को संतुष्ट करने में कामयाब होगी। यह उभरता हुआ राज्य परीक्षा और रोजगार के मोर्चे पर आदर्श बनकर सामने आए, तो यह छात्र आंदोलन और राज्य सरकार की सच्ची सफलता होगी।

हिन्दुस्तान | 75 साल पहले
11 अगस्त, 1951

बुद्धिमत्तापूर्ण निर्णय

कुछ समय से देश में रेल-हड़ताल की चर्चा चल रही थी। रेलवेमैन फेडरेशन से संबंधित यूनियनों द्वारा हड़ताल के सवाल पर मतसंग्रह हुआ, जिसका परिणाम हड़ताल के पक्ष में आया। रेलवेमैन फेडरेशन की जनरल कौंसिल ने रेलवे हड़ताल शुरू करने के लिए 27 अगस्त की तारीख भी नियत कर दी थी और 10 अगस्त को रेलवे-प्रबन्धकों को हड़ताल के नोटिस दिये जाने वाले थे। सरकार ने इस हड़ताल को रोकने की पूरी कोशिश की, किन्तु बह बेकार रही; फेडरेशन अपने निर्णय में कोई परिवर्तन करने के लिए तैयार नहीं हुआ। सरकार का खयाल है और वह बिल्कुल सही है कि इस अवसर पर रेल हड़ताल का होना देश के सर्वोत्तम हितों के विरुद्ध होगा। उसे एक विशेष अध्यादेश निकालकर आवश्यक-सेवा साधनों में हड़ताल गैर-कानूनी करार देनी पड़ी। इस अध्यादेश को अब नियमित कानून का रूप दिया जायेगा। सरकार के लिए हड़ताल का मुकाबला करने के लिए विशेष सत्ता प्राप्त करना अनिवार्य हो गया था। वह देश की सुरक्षा और अर्थव्यवस्था को अस्त-व्यस्त नहीं होने दे सकती थी।

यह संतोष का विषय है कि फिलहाल देश के सिर पर मंडरा रहा रेल हड़ताल का खतरा दूर हो गया है। रेलवेमैन फेडरेशन की कार्रवाई समिति ने देश की मौजूदा नाजुक स्थिति को अनुभव किया है और वर्ग हित की अपेक्षा राष्ट्रीय हितों को प्रधानता देने का निर्णय किया है। उसने प्रस्तावित रेलवे हड़ताल को दो महीने के लिए स्थगित कर दिया है। उसका यह निर्णय सचमुच बुद्धिमत्तापूर्ण है। भारत और पाकिस्तान के आपसी संबंधों में काफी तनाव है और कोई भी यह निश्चयपूर्वक नहीं कह सकता कि ऊंट किस करवट बैठे। जैसा कि नेहरूजी ने कहा है, हम विषम स्थिति पैदा होने की बाट नहीं जोह सकते। हमको आगे की संभावनाओं का पहले से विचार कर लेना चाहिए। यदि राष्ट्र रेल हड़ताल के दुश्चक्र में फंस जाये तो देश के शत्रुओं को अपनी आक्रमण की योजनाओं को कार्यान्वित करने की उससे प्रेरणा मिल सकती है। सुरक्षा के अलावा देश की खाद्य स्थिति भी ऐसी है, जिसकी उपेक्षा नहीं की जा सकती। देश के उन भागों में, जहां अन्न का अभाव है, अन्न निरन्तर पहुंचते रहना चाहिए।

अपने सेवा आयोगों को सुधारें राज्य

राय की राय | यहां स्कैन करें

जंतर मंतर या रांची में नौजवान आंदोलनों के रास्ते पर तभी बढ़े, जब उन्हें लगा कि सरकारें उनकी बातें नहीं सुन रही हैं और समाज भी उनके प्रति असंवेदनशील हो गया है।

विभूति नारायण राय | पूर्व कुलपति व साहित्यकार

रांची में झारखंड लोक सेवा आयोग (जेपीएससी) और झारखंड कर्मचारी चयन आयोग (जेएसएससी) की भर्ती परीक्षाओं में धांधली के खिलाफ छात्रों का आंदोलन जारी है। हालांकि, झारखंड लोक सेवा आयोग भंग हो चुका है और इसके पूर्व अध्यक्ष गिरफ्तार भी किए जा चुके हैं, मगर छात्र कई अन्य परीक्षाओं को रद्द कराने को लेकर अड़े हुए हैं। यह महज संयोग नहीं था कि जिस दिन नई दिल्ली के जंतर मंतर पर चल रहा कॉकरोच जनता पार्टी के नेताओं का अनशन खत्म हुआ, उसी दिन वहां से 1,200 किलोमीटर दूर रांची में समान प्रकृति और मांगों वाला एक अन्य आंदोलन शुरू हो गया। दोनों के पीछे एक ही आक्रोश था।

नौजवान इस तथ्य से बहुत विचलित हैं कि सरकारी नौकरियों या शिक्षा संस्थानों में दाखिले के लिए होने वाली प्रतियोगिता परीक्षाओं के पर्चों की गोपनीयता में बार-बार सेंध लग रही है। हर दूसरी-तीसरी परीक्षा की शुचिता पर शक किया जा रहा है। बार-बार परीक्षाएं रद्द हो रही हैं या परिणाम घोषित होने के बाद अदालती विवादों में फंसकर सालों-साल अधर में लटके रह जा रहे हैं। नेशनल टेस्टिंग एजेंसी (नीट) या झारखंड राज्य लोक सेवा आयोग की प्रतियोगिता परीक्षाओं में धांधली की शिकायतों पर छात्र तभी उत्तेजित हुए, जब पानी सिर के ऊपर बहने लगा। पिछले कई वर्षों से धांधली की शिकायतें आ रही थीं और सक्षम प्राधिकारी बजाय कार्रवाई करने के लीपा-पोती करते जा रहे थे।

दिल्ली या रांची के आंदोलनों को अपवाद के रूप में नहीं देखा जाना चाहिए। पहले भी कई लोक सेवा आयोगों के अध्यक्षों और सदस्यों के विरुद्ध गिरफ्तारी समेत अन्य दंडात्मक कार्रवाइयां हुई हैं। संघ लोक सेवा आयोग में कुछ वर्षों पूर्व महाराष्ट्र कैडर की एक महिला आईएएस अधिकारी ने नियमों के साथ इतनी आसानी से छेड़छाड़ की थी कि सुनने वाले दंग रह गए थे। ऐसा आयोग के कुछ अधिकारियों की मिलीभगत से ही संभव हो सकता था। परीक्षा लेने वाली संस्थाओं में व्याप्त भ्रष्टाचार और उनके प्रति अभ्यर्थियों मे गुस्सा किसी शून्य से नहीं उपजा है। अपनी वर्षों की मेहनत को जब एक नौजवान तंत्र में व्याप्त भ्रष्टाचार के चलते व्यर्थ जाते देखता है, तो उसकी प्रतिक्रिया उसी तरह की हो सकती है, जैसी दिल्ली और रांची में दिखी या दिख रही है।

भारत के पहले गृह मंत्री सरदार पटेल ने नौकरशाही को भारतीय एकता के लिए जरूरी 'स्टीलफ्रेम' बताया था। संविधान ने सेवाओं के लिए जरूरी प्रावधान बनाए और उनमें चयन के लिए संघ लोक सेवा आयोग और प्रांतीय लोक सेवा आयोगों के गठन की व्यवस्था की। आजादी के बाद शुरुआती दशकों में तो सब कुछ ठीक-ठाक चला, पर नब्बे का दशक आते-आते उनके खिलाफ तरह-तरह की शिकायतें आने लगीं। मुख्य कारण बना आयोगों में योग्यता या सत्यनिष्ठा की उपेक्षा कर राजनीतिक कारणों से होने वाली सदस्यों और अध्यक्षों की नियुक्तियां। इनमें जातियों या व्यक्तिगत वफादारियों को ध्यान में रखकर संदिग्ध व्यक्तियों को नियुक्त किया गया और उन्होंने वह सब किया, जिसकी कल्पना भी संविधान निर्माताओं ने नहीं की थी। उत्तर प्रदेश लोक सेवा आयोग में तो एक अध्यक्ष ऐसे भी आए, जो स्कूल बोर्ड की परीक्षाओं में ठेके पर नकल कराने के लिए बदनाम थे। बड़ी मुश्किल से उच्च न्यायालय के हस्तक्षेप से उन्हें निकाला जा सका। हालात इतने बिगड़ गए थे कि किसी परीक्षा का परिणाम घोषित करने के पहले अनुमोदन के लिए मुख्यमंत्री कार्यालय भेजा जाता था।

किसी भी कीमत पर एक सरकारी नौकरी हासिल करने की मारामारी के पीछे दो महत्वपूर्ण कारण हैं। पहला तो हमारे विकास का आधुनिक मॉडल है। रोजगार-विहीन विकास का यह मॉडल हमें दुनिया मे चौथी या पांचवीं सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था तो बना रहा है, पर एक बड़ी आबादी को समुचित और सुरक्षित रोजगार से वंचित कर साधन संपन्न और वंचितों के बीच एक ऐसी खाई भी पैदा कर रहा है, जो समाज को कभी शांति से नहीं बैठने देगा। अवसरों की कमी का हाल यह है कि उत्तर प्रदेश में हाल में पुलिस कांस्टेबल की 32,679 रिक्तियों के सापेक्ष 21,92,236 अभ्यर्थी लिखित परीक्षा में बैठे थे। एक पद के लिए लगभग 65 उम्मीदवार थे। यह स्थिति अब लगभग हरेक परीक्षा में दिखती है। हमारी जीडीपी बढ़ रही है, पर रोजगार नहीं। हम सबसे तेज बढ़ने वाली बड़ी अर्थव्यवस्था तो बन गए हैं, पर इसमें रोजगार के अवसर निरंतर सिकुड़ रहे हैं।

इस स्थिति के लिए दूसरा बड़ा कारण भी इसी मॉडल से जुड़ा है। उदारीकरण के दौर में निजी नौकरियों के ऊपर सरकारी पर्यवेक्षण कम से कमतर होता गया है, फलस्वरूप काम के घंटों, वेतन या सेवा-शर्तों के मामलों में निजी क्षेत्र मनमानी करने लगा है। कॉरपोरेट दुनिया एक छोटे समूह को पैकेज की भूल-भुलैया में उलझाकर शेष कामगारों को सिर्फ जीवित रह सकने लायक पारिश्रमिक देने में विश्वास करती है। सरकारी सेवाओं, खास तौर से मंझोली और निचले दर्जे की नौकरियों में वेतन, अन्य भुगतान और सुरक्षा निजी क्षेत्रों के मुकाबले बहुत अधिक है, इसलिए भी अब लगभग मान लिया गया है कि रोजगार का मतलब कोई सरकारी नौकरी है। फलस्वरूप, जैसे ही रिक्ति का कोई विज्ञापन छपता है, भीड़ उस पर टूट पड़ती है।

जंतर मंतर या रांची में नौजवान आंदोलनों के रास्ते पर तभी आगे बढ़े, जब उन्हें लगा कि सरकारें उनकी बातें नहीं सुन रही हैं और समाज उनके प्रति असंवेदनशील हो गया है। उन्हें देशद्रोही कहना या किसी दुश्मन देश के एजेंडे पर काम करने वाला मानने से हम न सिर्फ उनके साथ ज्यादती कर रहे हैं, वरन भारतीय लोकतंत्र को भी कमजोर कर रहे हैं। उनके आंदोलन का ही प्रभाव है कि राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ प्रमुख को मुंबई में कहना पड़ा, 'प्रदर्शन लोकतंत्र का हिस्सा है। यदि युवा आवाज उठाएं, तो उन्हें देशद्रोही न कहो'।

जिस जेन-जी ने देश मे विमर्श की भाषा बदल दी, वह हमसे कम देशप्रेमी नहीं है। उन्हें सिर्फ शांति व्यवस्था का मसला मानकर निपटाने की कोशिश आत्मघाती होगी। उनके मन में जायज गुस्सा भरा हुआ है। सरकारों को उनके साथ बैठकर उनकी तकलीफ समझने की कोशिश करनी चाहिए। इसी संवाद से यह समझ भी पैदा होगी कि रोजगार-विहीन विकास के मॉडल से हम अपनी जीडीपी का ग्राफ तो ऊपर ले जा सकते हैं, पर 2047 तक विकसित भारत बनने का हमारा सपना एक मृग-मरीचिका ही बनकर रह जाएगा।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

प्रशासनिक जवाबदेही तय करने लगे डिजिटल मंच

यहां स्कैन करें

प्रेम प्रकाश | वरिष्ठ पत्रकार

लोकतंत्र में चुनाव किसी पार्टी को सत्ता तक पहुंचा सकते हैं, पर जनता का विश्वास एक सरकार में इस बात से बनता है कि उसकी बात कितनी जल्दी सुनी गई और उसकी समस्या का समाधान कितनी ईमानदारी से किया गया? इसलिए आज के दौर में सुशासन का अर्थ केवल योजनाएं बनाना या सेवाएं उपलब्ध कराना नहीं, बल्कि यह है कि सरकार नागरिकों के प्रति कितनी जवाबदेह, पारदर्शी और संवेदनशील है।

अच्छी बात यह है पिछले तीन दशकों के प्रशासनिक सुधारों ने देश में इस सोच को धीरे-धीरे संस्थागत बना दिया है। डिजिटल क्रांति ने इस प्रक्रिया को नई गति दी। जो शिकायतें फाइलों में दब जाती थीं, वे अब ऑनलाइन दर्ज होती हैं, उनकी डिजिटल ट्रैकिंग होती है और संबंधित अधिकारी की जवाबदेही भी तय होती है। यही परिवर्तन सुशासन के उस नए दौर का संकेत है, जिसे 'सुशासन 2.0' कहा जा सकता है। केंद्र सरकार की 'केंद्रीकृत लोक शिकायत निवारण एवं निगरानी प्रणाली' इस बदलाव का सबसे बड़ा उदाहरण है। हर वर्ष लाखों नागरिक इसके माध्यम से अपनी शिकायतें दर्ज करा रहे हैं। प्रशासनिक सुधार एवं लोक शिकायत विभाग लगातार इसके दायरे और दक्षता का विस्तार कर रहा है। वर्ष 2026 में शुरू किया गया एआई आधारित वॉयस चैटबॉट- 'समाधान दीदी' इस दिशा में एक बड़ा कदम है। अब नागरिक भारतीय भाषाओं में बोलकर भी शिकायत दर्ज करा सकते हैं और कृत्रिम बुद्धिमत्ता (एआई) उसे स्वतः संबंधित विभाग तक पहुंचा देती है। साफ है, शिकायत निवारण व्यवस्था अब डाटा-संचालित, बहुभाषी और बुद्धिमान प्रशासनिक प्रणाली में विकसित हो रही है।

जो शिकायतें फाइलों में दब जाया करती थीं, वे अब ऑनलाइन दर्ज होती हैं, उनकी डिजिटल ट्रैकिंग होती है और अधिकारी की जिम्मेदारी भी तय होती है।

वैसे, भारत जैसे विशाल और विविधतापूर्ण देश में एक ही मॉडल सभी राज्यों पर लागू नहीं हो सकता। इस लिहाज से देखें, तो उत्तर प्रदेश ने डिजिटल मॉनिटरिंग व विभागीय रैंकिंग के माध्यम से जवाबदेही बढ़ाने का प्रयास किया है, जबकि मध्य प्रदेश ने शिकायतकर्ता की संतुष्टि को प्रक्रिया का अनिवार्य हिस्सा बनाया। केरल ने सेवा वितरण और शिकायत निवारण का प्रभावी एकीकरण किया, वहीं राजस्थान एवं आंध्र प्रदेश ने स्थानीय प्रशासन की सक्रिय भागीदारी पर जोर दिया। इन विविध प्रयोगों ने एक बात तो स्पष्ट कर दी कि तकनीक तभी सफल होती है, जब वह प्रशासनिक संस्कृति का हिस्सा बन जाए।

इन अनुभवों के बीच बिहार का 'सहयोग' मॉडल डिजिटल शिकायत निवारण के मामले में उल्लेखनीय पहल बनकर उभरा है। लोक सेवा अधिकार अधिनियम, जनता दरबार और ऑनलाइन सेवा वितरण जैसे पूर्ववर्ती सुधारों को यह एकीकृत डिजिटल प्लेटफॉर्म से जोड़ता है। शिकायत दर्ज होते ही उसकी ट्रैकिंग शुरू हो जाती है, संबंधित अधिकारी की जवाबदेही तय होती है और समय-सीमा पार होते ही मामला स्वतः उच्च स्तर तक पहुंच जाता है। इसकी सबसे बड़ी विशेषता सहयोग शिविर हैं, जिसके तहत प्रशासन नागरिकों तक पहुंचकर शिकायतें दर्ज करता है और उनका समाधान सुनिश्चित करता है। सरकारी समीक्षाओं के अनुसार, इन शिविरों में 90 फीसदी मामलों का निस्तारण हो चुका है, जबकि शेष मामलों के लिए 30 दिनों की समय-सीमा निर्धारित है।

हजारों शिकायतों के विश्लेषण से सरकारों की यह समझ बेहतर हुई है कि किन विभागों में ढांचागत कमियां हैं, किन सेवाओं में सुधार की जरूरत है और किन क्षेत्रों में नीतिगत हस्तक्षेप अपेक्षित है। इस अर्थ में शिकायत निवारण अब केवल सेवा वितरण का माध्यम नहीं, बल्कि साक्ष्य-आधारित शासन और नीति-निर्माण का अहम आधार बनता जा रहा है। डिजिटल शिकायत निवारण का सबसे बड़ा परिवर्तन यह है कि शिकायतें अब केवल व्यक्तिगत समस्याएं नहीं रह गई हैं, बल्कि प्रशासन के लिए मूल्यवान सार्वजनिक डाटा का स्रोत बन रही हैं। आने वाले वर्षों में कृत्रिम बुद्धिमत्ता, डाटा एनालिटिक्स और पूर्वानुमान-आधारित प्रशासन इस व्यवस्था को अधिक सक्षम और दूरदर्शी बना सकते हैं।

यह बात भी समझने की है कि तकनीक अपने आप में सुशासन की गारंटी नहीं है। डिजिटल शिकायत प्रणाली की सफलता का वास्तविक पैमाना शिकायतों की संख्या नहीं, बल्कि समाधान की गुणवत्ता, नागरिक की संतुष्टि और प्रशासनिक जवाबदेही है।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

मनसा वाचा कर्मणा

शांति किसके पास

दो व्यक्ति तंग गलियारे में काफी ऊंचे स्वर में बात कर रहे थे। उनकी बातें सुनाई न पड़ना मुश्किल ही था। उनमें से एक व्हेल मछलियों के शिकार के व्यापार का वर्णन कर रहा था कि यह कार्य कितने जोखिम का है, इसमें मुनाफा क्या होता है और सागर की लहरें कैसी भयावह होती हैं? वह बता रहा था कि कुछ व्हेल मछलियां तो सैकड़ों टन वजन की होती हैं। बच्चों वाली मादा व्हेल को मारना ठीक नहीं माना जाता और न ही एक निश्चित समय के भीतर खास संख्या से अधिक व्हेल को मारने की आज्ञा है।... उस आदमी ने बयान करना शुरू किया कि मारने में कैसा विचित्र आकर्षण रहता है, परंतु उसी क्षण चाय आ गई और बातचीत का मुद्दा बदल गया।

मारना मनुष्य को पसंद है। चाहे वह एक-दूसरे की हत्या करना हो अथवा घने जंगल में चमकदार आंखों वाले हिरण की या पशुओं का शिकार करने वाले बाघ की। सुंदर पोशाक पहने, हंसते हुए लोग कीमती बंदूकें लेकर निकलते हैं और एक-दूसरे को पुकार रहे पंछियों को मार डालते हैं। कोई लड़का अपनी बंदूक से चहचहाते नीलकंठ पर गोली दागता है और उसके आस-पास खड़े वयस्क दया का एक शब्द तक नहीं निकालते, न उसे डांटते हैं; इसके उलट, वे उसकी निशानेबाजी की सराहना करते हैं। तथाकथित खेल, आहार के लिए हो या अपने देश की शांति के लिए हत्या करना इन सब में बहुत अंतर नहीं है। बात तो केवल यही है- हत्या न करें।

पश्चिम में हम सोचते हैं कि पशुओं का वजूद हमारे पेट के लिए अथवा शिकार-सुख की खातिर, या फिर उनकी रोएंदार चमड़ी उपलब्ध कराने के लिए है। पूरब में शताब्दियों से यही सिखाया गया है और प्रत्येक माता-पिता उसे दोहराते हैं- जीव हत्या न करो, दया भाव रखो, करुण बनो। यहां पश्चिम में पशुओं में आत्मा नहीं होती, अतः उन्हें बेखटके मार सकते हैं; और उधर पूरब में पशुओं में आत्मा होती है, इसलिए अपने हृदय में प्रेम रखें- यही बताया जाता है। पशुओं, पंछियों का आहार करना पश्चिम में एक सामान्य नैसर्गिक बात मानी जाती है। पूरब में यह बात नहीं है और विचारशील, धार्मिक लोग परंपरा और संस्कृति के चलते ऐसा नहीं करते।

शांति राजनीतिज्ञ अथवा पुरोहित के पास नहीं होती, न ही वह वकील या पुलिस के पास होती है। शांति तो मन की एक अवस्था है, जब प्रेम उसमें विद्यमान रहता है।

हालांकि, यह भी अब तेजी से टूटता जा रहा है। यहां हमने ईश्वर और देश के नाम से सदा हत्याएं की हैं और अब यह सब जगह हो रहा है। हिंसा फैल रही है; लगभग रातोंरात प्राचीन संस्कृतियां इसमें बही जा रही हैं और कार्य-कुशलता, क्रूरता तथा विनाश के साधन सोच-विचारपूर्वक पोषित और मज़बूत किए जा रहे हैं।

शांति राजनीतिज्ञ अथवा पुरोहित के पास नहीं होती, न ही वह वकील या पुलिस के पास होती है। शांति तो मन की एक अवस्था है, जब प्रेम उसमें विद्यमान रहता है।

जे कृष्णमूर्ति

पीयूष गोयल | केंद्रीय वाणिज्य मंत्री

जीवन में सीखने की सहज प्रवृत्ति को बनाए रखिए, अपनी चेतना जगाए रखिए। जो बातें बिना सोचे-समझे स्वीकार कर ली जाती हैं, उनको परखिए और सवाल उठाइए। रुकिए मत, उनका समाधान खोजने का साहस भी रखिए।

अनुलोम-विलोम

क्रीमीलेयर

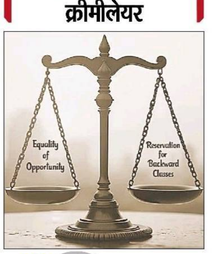

एससी-एसटी में क्रीमीलेयर उचित नहीं

जातीय भेदभाव को पूरी तरह समाप्त किए बिना अनुसूचित जाति (एससी) और अनुसूचित जनजाति (एसटी) में क्रीमी लेयर की बात करना ठीक नहीं है। इस बारे में सरकार और संसद को अपने स्वयं के विवेक से पूरे मामले को जांचना चाहिए और वंचित तबकों को तब तक आरक्षण का लाभ मिलते रहना चाहिए, जब तक उन्हें इसकी जरूरत हो।

लोकसभा और देश की विधानसभाओं में स्थानों की व्यवस्था को लेकर संविधान के अनुच्छेद- 16 (3) और 16 (4) में अनुसूचित जाति के लिए 15 प्रतिशत और अनुसूचित जनजाति के लिए 7.5 प्रतिशत आरक्षण का प्रावधान किया गया है। इसी तरह का प्रावधान शिक्षा और नौकरियों में भी है। पहले इसकी सीमा 10 वर्ष निर्धारित की गई, इसके पश्चात सरकारों द्वारा इसको लगातार बढ़ाया गया। फिलहाल संविधान में 104वें संशोधन द्वारा यह आरक्षण साल 2030 तक सुनिश्चित हो चुका है। यही हाल नौकरियों में आरक्षण का भी है। उधर, उच्चतम न्यायालय के फैसले में इसकी समीक्षा तथा क्रीमीलेयर की बात की गई है। यहां कहना चाहूंगी कि आरक्षण का उद्देश्य लंबे समय से सामाजिक भेदभाव और वंचित समाज को आगे बढ़ाने का अवसर प्रदान करता है, इसलिए आरक्षण की आवश्यकता को नकारा जाना उचित नहीं होगा। अनुसूचित जाति और जनजाति में कुछ परिवार ऐसे भी हैं, जो आरक्षण का लाभ लेकर काफी आगे निकल चुके हैं। यहां तक कि उनकी पीढ़ी-दर-पीढ़ी आरक्षण के साथ आगे बढ़ी है, लेकिन उनके साथ सामाजिक स्तर पर भेदभाव बदस्तूर जारी है। उनके साथ छुआछूत का भेदभाव आम बात है। इसके साथ ही उन्हें उच्च पदों पर आसीन हो जाने के बाद भी समाज में समानता के भाव से नहीं देखा जाता है। हां, अन्य पिछड़े वर्ग में इस तरह की बात न के बराबर है।

उच्चतम न्यायालय ने अपने एक फैसले में अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के आरक्षण में वर्गीकरण की बात कही थी, लेकिन इस तरह से जातीय आधार पर आर्थिक, सामाजिक और पारिवारिक स्थिति देखते हुए आरक्षण पर विचार होना चाहिए, क्योंकि समाज में आज भी वे उस आरक्षण के लाभ से वंचित है, जिनको इसकी अत्यंत आवश्यकता है। यहां यह भी विचार का विषय है कि कुछ राजनीतिक दल के नेता आरक्षण के नाम पर अपनी समय-समय पर राजनीतिक रोटियां सेंकते रहे हैं। इस समुदाय के नेता भी केवल अपने स्वार्थ सिद्ध करने के लिए सुरक्षित सीटों से लोकसभा या विधानसभा में पहुंचकर वैसी आवाज नहीं उठाते, जिसकी अपेक्षा अनुसूचित जाति और जनजाति समुदाय के लोग उनसे करते हैं।

मीना धानिया, टिप्पणीकार

जाति के बजाय राष्ट्रीय हित सर्वोपरि

संविधान द्वारा कुछ जातियों के प्रतिनिधि को लोकसभा व विधानसभाओं में आरक्षण देकर बैठाया गया। नौकरियों और शिक्षा में भी ऐसे ही प्रावधान लागू रहे। ये समाज की उन कुरीतियों को खत्म करने के लिए थे, जिनके तहत आबादी के कुछ हिस्सों को समाज से काटकर रखा गया था और उनके साथ पशुवत व्यवहार हुआ।

आज जो स्थिति है, उसमें आम आदमी की मानसिकता समाज सुधार और वंचित तबकों को समान अधिकार दिलाने या पाने की नहीं रह गई है, बल्कि आरक्षण की मलाई खाते रहने और इसके लिए बिना कोई उपाय किए वंचित बने रहने की हो गई है। आज जातिवादी संकीर्ण मानसिकता व जातिवादी प्रतिनिधियों की अलगाववादी सोच के चलते देश में ऐसे राजनीतिक तत्वों की भरमार हो गई है, जो मानवीय संवेदनाओं को रौंदकर देश को अराजकता की खाई में धकेलने को आतुर रहते हैं तथा भीड़ को उकसाकर देश की एकता और अखंडता को छिन्न-भिन्न कर देना चाहते हैं। समाज में जातियों के ठेकेदारों ने अपना राजनीतिक कद बढ़ाकर अपने-अपने स्वार्थ पूरे किए। उन्हें सामान्य वर्ग के विरुद्ध भड़काकर उद्यम करने के लिए कभी प्रेरित नहीं किया। जाति आधारित सुविधाओं के क्षणिक सपने दिखाकर उनकी सोचने-समझने की क्षमता को ही समाप्त करने का षड्यंत्र रचा गया, ताकि कुछ जातियां सामाजिक सद्भाव एवं सामाजिक संरचना में अपना योगदान देने से परहेज करें और वे केवल अधिकारों के लिए ही संघर्ष करें।

कुछ व्यक्तियों की मानसिकता इस कदर कुत्सित हो गई कि उन्होंने इसी में जीने-मरने को अपनी नियति मान लिया तथा इसी व्यवस्था से अपनी आर्थिक समृद्धि का मार्ग प्रशस्त करने लगे। सामंतवादी मानसिकता से जुड़े लोगों ने इसका नुकसान भी उठाया। इसका परिणाम हुआ कि सामान्य वर्ग में शामिल एक बड़ी आबादी को हरेक प्रकार के सरकारी अवसरों से वंचित होना पड़ा। इससे देश की श्रेष्ठ मेधा कभी देश के काम नहीं आ पाई और वह पलायन करती रही। यही स्थिति देश के रचनात्मक और सकारात्मक विकास में बाधक है।

इसलिए, आवश्यक है कि देश, काल और परिस्थितियों के अनुरूप राष्ट्र की प्रगति हेतु चिंतन हो और ऐसी व्यवस्था बने, जिसमें एक बार आरक्षण का लाभ उठा चुके परिवार को क्रीमीलेयर में लाकर उन्हें इस लाभ से वंचित किया जाए और शेष वंचितों को आगे आकर इसका लाभ लेने के लिए प्रेरित किया जाए। इससे वंचित तबकों में विकास की उम्मीद जगेगी और सही मायने में अनुसूचित जाति-जनजाति वर्ग का विकास संभव हो पाएगा।

सुधाकर आशावादी, टिप्पणीकार

हर रूप में शंकर संकट हरना

आदि देव महादेव को शिव कहें या शंकर या फिर महाकाल या प्रलयंकर। शास्त्रों की माने, तो भगवान आशुतोष के एक हजार आठ नाम हैं, लेकिन लोक मानस के लिए तो वे भोलेनाथ हैं। सावन मास में महादेव के विभिन्न रूपों की चर्चा होती है। वे अपने विविध रूपों से जन-मानस को प्रेरित करते हैं। प्रस्तुत आलेख में हम महादेव के विविध रूपों की चर्चा कर रहे हैं...

अध्यात्म
सद्गुरु

श्रावण मास विशेष

शिव हमेशा से ही एक शक्तिशाली भगवान के रूप में देखे गए हैं। साथ ही एक ऐसे रूप में भी, जो दुनिया की ऊंच-नीच से अनजान है, इसलिए शिव का एक रूप भोलेनाथ कहलाता है। भोलेनाथ का मतलब है- सीधा-सादा। इतने सीधे कि जो कुछ भी मांगो, तुरंत दे दें। क्या सुर-असुर, क्या मनुष्य, उनकी दृष्टि में कोई भेदभाव नहीं। शीघ्र प्रसन्न हो जाते हैं, इसलिए आशुतोष हैं। ऐसे भोले-भाले शिव के अनेक रूप हैं।

नटराज रूप में नृत्य के देवता

नटेश या नटराज। नृत्य के देवता के रूप में शिव का एक अत्यंत महत्वपूर्ण रूप है। नटराज रूप उल्लास और सृजन का नृत्य प्रस्तुत करता है, जो कि अनंत निश्चलता में से अपने आप ही रचित हुआ है। चिदंबरम मंदिर में खड़े नटराज बहुत प्रतीकात्मक हैं। आप जिसे चिदंबरम कहते हैं, वह केवल पूर्ण निश्चलता है।

आमतौर पर शिव को पूर्ण पुरुष कहा जाता है, लेकिन अर्धनारीश्वर रूप में उनका आधा भाग एक पूर्ण विकसित नारी है। यह बताता है कि जब आंतरिक पौरुष और स्त्रैण मिलते हैं, तो आप एक सतत परमानंद की स्थिति में होते हैं। अगर आप यह बाहरी रूप से करने का प्रयास करते हैं, तो ये कभी नहीं टिकेगा।

पौरुष और स्त्रैण का मतलब आदमी और औरत नहीं हैं। ये विशिष्ट गुण हैं। वास्तव में ये दो लोगों के मिलन की चाह नहीं है, बल्कि जीवन के दो आयामों के मिलने की चाहना है- बाहरी साथ-ही-साथ आंतरिक रूप में। अगर आपने इसे भीतर प्राप्त कर लिया है, तो बाहर यह अपनी इच्छानुरूप सौ प्रतिशत होगा, नहीं तो बाहर एक भयानक बाध्यता रहेगी।

यह प्रतीक ये दिखाने के लिए है कि अगर आप पूर्ण विकसित हो जाते हैं और अपनी परम संभावना को पा लेते हैं, तो आप आधे पुरुष और आधी स्त्री- एक नपुंसक नहीं, बल्कि एक पूर्ण विकसित पुरुष और एक पूर्ण विकसित स्त्री होंगे। तभी आप एक पूर्ण मनुष्य बन पाएंगे।

अंत से होता एक नया आरंभ

कालभैरव शिव का वह विनाशक रूप है, जब वे समय का नाश करने के मनोभाव में चले गए थे। भौतिक वास्तविकता समय की सीमा में ही निवास करती है। अगर मैं आपके समय का अंत कर दूं, हर चीज समाप्त हो जाएगी।

शिव 'भैरवी यातना' निर्मित करने के लिए यथा अनुरूप वेष धारण कर कालभैरव बन गए। 'यातना' यानी परम पीड़ा। जब मृत्यु का क्षण आता है, कई जन्म तीव्र तीक्ष्णता के साथ सक्रिय हो जाते हैं, जितना भी कष्ट और पीड़ा आपको भोगना है, वो एक क्षण में हो जाता है। उसके बाद, आपमें अतीत का कुछ भी शेष नहीं रह जाता है। अपने 'सॉफ्टवेयर' को नष्ट करना तकलीफदेह है, लेकिन ऐसा मृत्यु के क्षण में होता है, इसलिए आपके पास कोई उपाय नहीं रहता है। वे इसे ज्यादा-से-ज्यादा संक्षिप्त बनाने की कोशिश करते हैं, यातना को तुरंत समाप्त होना है। ऐसा तभी होगा, जब हम इसे बहुत तीक्ष्ण बना दें। अगर यह हल्का है, तो यह लंबे समय तक चलता रहेगा।

आदि गुरु ही आदि योगी

योग परंपरा में शिव को ईश्वर के रूप में नहीं पूजा जाता है। वे आदि योगी यानी प्रथम योगी और आदि गुरु यानी पहले गुरु हैं, जिनसे योग विज्ञान की शुरुआत हुई। दक्षिणायन की पहली पूर्णिमा गुरु पूर्णिमा है। इसी समय आदि योगी ने अपने पहले सात शिष्यों, सप्त ऋषियों में इस विज्ञान का संचार प्रारंभ किया।

यह सभी धर्मों से पहले की बात है। लोगों द्वारा मानवता को चोट पहुंचाने वाले तरीके आने के पहले ही मानवीय चेतना के उत्थान के सबसे महत्वपूर्ण साधनों का ज्ञान और प्रचार हो चुका था। यह प्रश्न बेकार है कि उस दौर के लोग क्या वाकई इतने कार्यकुशल थे, क्योंकि यह विज्ञान किसी विशेष सभ्यता या विचारधारा से नहीं आया है। यह आंतरिक जाग्रति से उत्पन्न हुआ है। यह स्वयं अदि योगी के उद्गार हैं। आप आज भी इनमें से एक भी चीज बदल नहीं सकते हैं, क्योंकि जो कुछ भी बताने लायक था, उसे उन्होंने बड़ी सुंदरता और बुद्धिमानी के साथ कह दिया है।

ज्ञान का त्र्यंबक रूप

शिव हमेशा त्र्यंबक के रूप में संबोधित किए गए हैं, क्योंकि उनका तीसरा नेत्र है। तीसरे नेत्र का मतलब माथे पर दरार होना नहीं है। इसका केवल यह अर्थ है कि उनका ज्ञान अपनी चरम संभावना तक पहुंच चुका है। दो भौतिक आंखें केवल इंद्रिय अंग हैं। आप जो देखते हैं, वह सत्य नहीं है। आप इस व्यक्ति या उस व्यक्ति को देखते हैं और उसके बारे में कुछ सोचते हैं, लेकिन आप उसमें खुद शिव को नहीं देख पाते हैं, इसलिए एक और नेत्र, एक अधिक गहराई से देखनेवाले नेत्र का खुलना जरूरी है।

आपका कोई भी विचार या तर्क आपके दिमाग में स्पष्टता नहीं ला सकता। आपके तर्कों पर आधारित स्पष्टता को कोई भी काट सकता है। कठिन परिस्थितियां इसे कभी भी डगमगा सकती हैं। आपके पास अंतर्दृष्टि होने पर ही पूर्ण स्पष्टता आ सकती है। हम जिसे शिव कहते हैं, वो चरम अनुभूति का ही मूर्त रूप हैं।

शिव हमेशा त्र्यंबक के रूप में संबोधित किए गए हैं, क्योंकि उनका तीसरा नेत्र है। तीसरे नेत्र का यह अर्थ है कि उनका ज्ञान अपनी चरम संभावना तक पहुंच चुका है। तीसरा नेत्र ज्ञान का नेत्र है।

आस्था-अनास्था
समीर उपाध्याय ज्योतिर्विद्

पुरानी समस्याओं का अब होगा समाधान

गुरु के उदय होने पर बारह राशियों पर क्या प्रभाव होंगे?
-विपुल क्रांति, पटना

बृहस्पति ग्रह गोचर में विगत 15 जुलाई 2026, बुधवार शाम 07.59 बजे से अतिचारी एवं अस्त चल रहे हैं। कल 12 अगस्त, 2026, बुधवार को सुबह 05.03 बजे कुल 28 दिनों के बाद कर्क राशि में उदय होंगे। आइए जानते हैं गुरु के कर्क राशि में उदय होने पर आपकी राशि पर क्या प्रभाव पड़ेगा :

मेष : स्व-रोजगार से जुड़े लोगों को बड़ी सफलता मिलने की संभावना। निवास/कार्य स्थल/कार्य की प्रकृति में परिवर्तन। स्वास्थ्य पर अनावश्यक खर्च।

वृष : परिवर्तनकारी समय। परिवार में भाई-बहनों से जुड़े मांगलिक कार्य। कुछ पुरानी समस्या का समाधान होगा।

मिथुन : आर्थिक लाभ। घर में मांगलिक कार्य होंगे। धन संचय के साथ कुछ पुरानी समस्या का समाधान होगा।

कर्क : मिश्रित प्रभाव। महत्वपूर्ण कार्यों में अतिरिक्त प्रयास की आवश्यकता। स्वास्थ्य एवं मरम्मत पर खर्च।

सिंह : स्वयं या परिवार के सदस्य के निवास/कार्य स्थल में परिवर्तन। निर्माण कार्य तथा खरीदारी पर खर्च।

कन्या : लाभकारी परिवर्तन। नए संबंध/साझेदारी में सफलता। मांगलिक कार्य, विवाह, संतान योग।

तुला : निवास/कार्य स्थल में परिवर्तन। निर्माण कार्य, खरीदारी व मरम्मत पर खर्च की अधिकता।

वृश्चिक : कार्यक्षेत्र में लाभकारी परिवर्तन। कला, शिक्षा, खेल, मीडिया से जुड़े लोगों को अच्छी सफलता।

धनु : संघर्षपूर्ण सफलता। खर्च की अधिकता। महत्वपूर्ण कार्य में आखिरी मौके पर बाधा। विवाद से बचें।

मकर : मांगलिक कार्य। परिवार में मांगलिक कार्य। आर्थिक लाभ। चल-अचल संपत्ति की खरीदारी।

कुंभ : संघर्षपूर्ण सफलता। विवाद/कोर्ट कचहरी का चक्कर। पुरानी स्वास्थ्य समस्या का समाधान।

मीन : संतान पक्ष के लिए शुभ। रुके कार्य बनेंगे। कार्यक्षेत्र में लाभकारी परिवर्तन। महत्वपूर्ण कार्य में सफलता।

सप्ताह के व्रत-त्योहार

11 अगस्त से 17 अगस्त 2026 तक

11 अगस्त (मंगलवार) : श्रावण कृष्ण चतुर्दशी तिथि रात्रि 01.54 मिनट तक। श्रावण शिवरात्रि व्रत।

12 अगस्त (बुधवार) : श्रावण कृष्ण अमावस्या तिथि रात्रि 11.07 मिनट तक। श्रावण अमावस्या।

13 अगस्त (गुरुवार) : श्रावण शुक्ल प्रतिपदा तिथि रात्रि 08.42 मिनट तक। श्रावण शुक्ल पक्ष प्रारंभ।

14 अगस्त (शुक्रवार) : श्रावण शुक्ल द्वितीया तिथि सायं 06.48 मिनट तक। चंद्रदर्शन।

15 अगस्त (शनिवार) : श्रावण शुक्ल तृतीया तिथि सायं 05.30 मिनट तक। हरियाली- सिंघारा तीज। स्वर्णगौरी व्रत। भारतीय स्वतंत्रता दिवस की 79 वीं वर्षगांठ। रबि-उल्लावल (मु.) मास प्रारंभ।

16 अगस्त (रविवार) : श्रावण शुक्ल चतुर्थी तिथि सायं 04.53 मिनट तक दूर्वा गणपति व्रत।

17 अगस्त (सोमवार) : श्रावण शुक्ल पंचमी तिथि सायं 05.01 मिनट तक। नाग पंचमी। भाद्रपद संक्रांति। श्रावण सोमवार व्रत।

-पं. ऋभुकांत गोस्वामी

भेजें अपने सवाल

स्वर्ग-नरक की कल्पना का आधार क्या है?

पाप क्या है, पुण्य क्या है? धर्म क्या है, अधर्म क्या है? ईश्वर की आराधना कैसे करें? ऐसे सवाल अकसर हमारे मन में उठते हैं, पर इनका जवाब हमारे पास नहीं होता। मन-मस्तिष्क में आने वाले ऐसे ही सवालों के जवाब हमारे पैनल में शामिल धर्माचार्य आपको देंगे।

अपने सवाल हमें इस पते पर भेजें :
धर्मक्षेत्र, हिन्दुस्तान, 11वां तल, द आइकॉन टॉवर, एफ सी-24 सी, फिल्म सिटी, सेक्टर-16ए, नोएडा, गौतम बुद्ध नगर-201301 (उत्तर प्रदेश)

अहंकार छोड़ने में ही भलाई

जैन कथा

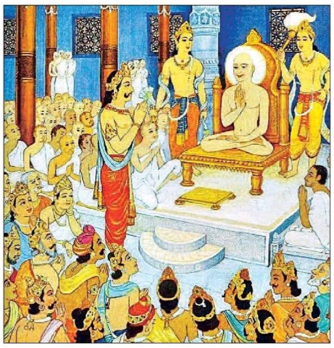

महावीर स्वामी के पास प्रतिदिन हजारों लोग उनके दर्शन करने आया करते थे। इन्हीं श्रद्धालुओं में एक राजा भी महावीरजी के दर्शन करने प्रतिदिन आता था। राजा को अपने राजसी वैभव का बहुत अहंकार था। वह जब भी वहां आता, तो अपने घमंड का प्रदर्शन करता। वह अपने साथ धन, रत्न-जवाहरात आदि लेकर आता था।

राजा के इस वैभव प्रदर्शन को देखकर महावीर स्वामी उससे यह कहते कि राजन इन्हें गिरा दो। महावीर के वचन सुनकर राजा उन रत्नों को वहीं गिरा देता। अगले दिन फिर वही होता। यह क्रम कई दिनों तक चलता रहा। राजा प्रतिदिन महावीरजी के लिए रत्न-जवाहरात लेकर आता और स्वामीजी उससे हर बार की तरह उन्हें गिरा देने की बात कहते। राजा भी उनकी बात सुनकर सभी रत्न और कीमती वस्तुएं वहीं गिरा देता।

ऐसा कई दिनों तक चलता रहा, तो एक दिन राजा को बहुत क्रोध आया कि वह तो प्रेम और श्रद्धा से महावीरजी के लिए रत्न और कीमती वस्तुएं लेकर आता है, लेकिन महावीरजी उसे स्वीकारने के बजाय हर बार गिरा देने की बात कहते हैं।

राजा को स्वामीजी की यह बात बुरी लगने लगी थी। इसके बाद भी काफी दिनों तक ऐसे ही चलता रहा। राजा सोचता कि एक-न-एक दिन महावीरजी उसके दिए उपहारों को जरूर स्वीकार करेंगे।

एक दिन राजा ने अपने मंत्री से इस घटना का जिक्र किया, तो मंत्री ने उन्हें महावीरजी को सिर्फ फूल भेंट देने का परामर्श दिया। मंत्री की बात मानकर राजा इस बार भेंट में देने के लिए फूल लेकर गया, लेकिन महावीरजी ने हर बार की तरह राजा से फूल को भी गिरा देने के लिए कहा। यह देखकर राजा निराश होकर लौट आया और सारी बात मंत्री को बताई। मंत्री ने कुछ सोचते हुए राजा से कहा कि इस बार आप महावीरजी के पास खाली हाथ जाएं।

अगले दिन राजा महावीरजी के पास खाली हाथ गया। राजा ने उनकी ओर देखते हुए कहा कि आज तो मैं आपके पास खाली हाथ आया हूं। आज आप मुझसे क्या गिराने को कहेंगे? महावीरजी ने मुस्कुराते हुए कहा, 'राजन अब स्वयं को गिरा दो।' यह सुनते ही राजा को ज्ञान हो गया कि महावीरजी उससे उसका अहंकार गिराने की बात कह रहे हैं।

राजा महावीर स्वामी के सामने नतमस्तक हो गया और उनसे क्षमा मांगते हुए अपना अहंकार छोड़ने का प्रण किया। इतना करते ही राजा असीम शांति का अनुभव करने लगा।

अश्वनी कुमार

हम लोभ-लालच से बचेंगे तभी होगा जीवन में कल्याण

विचार

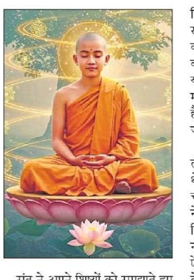

हम एक-दूसरे की ओर ध्यान से देखते हैं, तो पाते हैं कि हम में से हरेक के गुण अलग हैं। तौर-तरीके अलग हैं। विचार अलग हैं। बात और कार्य करने का तरीका भी अलग है। अगर हम अपने आपको श्रेणीबद्ध करने की कोशिश करें, तो चार किस्म की श्रेणियां हैं, जिसमें कि इंसान अपने आपको पाता है।

एक महापुरुष की जिंदगी का एक किस्सा है। एक बार वे अपने शिष्यों के साथ समुद्र के किनारे टहल रहे थे। वहां उन्होंने देखा कि एक मछुआरा अपना जाल डालकर पानी में बैठा हुआ है। जैसे ही वे उस मछुआरे के पास से गुजरे, तो रुक गए। उन्होंने अपने शिष्यों से कहा कि जाकर देखो, उस मछुआरे के जाल में किस किस्म की मछलियां फंसी हुई हैं?

शिष्यों ने आकर संत से कहा कि उन्होंने वहां तीन किस्म की मछलियां देखी हैं। कई मछलियां ऐसी थीं, जो कि जाल में एकदम निढाल होकर पड़ी हुई थीं। वे ऐसे लेटी हुई थीं, जैसे कि उन्हें कुछ नहीं करना। दूसरी किस्म की मछलियां ऐसी थीं, जो जाल में से निकलने के लिए हाथ-पैर मार रही थीं, लेकिन वे जाल में फंसी रहीं। तीसरी किस्म की मछलियां वे थीं, जिन्होंने बहुत हाथ-पैर मारे और मारते-मारते कुछ जाल में से बाहर निकल गईं।

संत ने अपने शिष्यों को समझाते हुए कहा कि हम इंसान भी कुछ ऐसे ही जीते हैं। कुछ लोग ऐसे हैं, जो माया के जाल में ऐसे फंसे हुए हैं कि वे सोचते ही नहीं कि वे जाल में फंसे हुए हैं। वे वैसे ही उस जाल में टिके रहते हैं। उसी में मस्त रहते हैं। दुनियादारी के कामों में लगे रहते हैं। उन्हें कभी यह खयाल भी नहीं आता कि वे किसी जाल में फंसे हुए हैं। ऐसे लोग सबसे ज्यादा है।

फिर कुछ ऐसे लोग हैं, जो थोड़ा-सा समझते हैं कि वो जाल में फंसे हैं। वे कुछ हाथ-पैर मारने की कोशिश करते हैं और जब हाथ-पैर मारते हैं, तो उनमें से बहुत से लोग उस जाल में से नहीं निकल पाते, क्योंकि उन्हें मालूम नहीं कि हाथ-पैर कैसे मारने हैं। उन्हें मालूम नहीं कि बाहर कैसे निकलना है। फिर ऐसे लोग हैं, जो कि खूब हाथ-पैर मारते हैं, खूब खोजबीन करते हैं कि जिंदगी का मकसद क्या है। हमें क्या करना है, क्या नहीं करना और कभी यहां हाथ-पैर मारते हैं, कभी वहां हाथ-पैर मारते हैं। कभी यहां जाते हैं, कभी वहां जाते हैं और उनमें से चंद लोग ऐसे होते हैं, जो जाल में से निकल जाते हैं।

इस पर शिष्यों ने कहा, 'गुरुदेव। ये तो तीन किस्म के आदमी हुए। आप तो कह रहे थे कि चार किस्म के आदमी होते हैं, तो चौथे किस्म के इंसान कौन से हैं?' गुरुजी ने कहा, 'देखो, समुद्र कितना बड़ा है, कितनी सारी मछलियां हैं, जो जाल के नजदीक ही नहीं आई, वे जाल से परे हैं। ऐसे ही कुछ लोग होते हैं, जो मोह-माया के जाल में नहीं फंसते, नहीं अटकते और हमें उसी किस्म का इंसान बनना चाहिए। जीवन में सार्थकता और सफलता तभी आती है, जब हम लोभ-लालच के जाल में नहीं फंसते। जो एक बार इसके जाल में फंसा, फिर वह आसानी से बाहर नहीं निकल सकता।

जिस प्रकार जाल में मछलियां फंसती है, उसी प्रकार मनुष्य मोह-माया के जाल में फंसता है। यह जाल बहुत लुभावना होता है, इसलिए हम इसमें फंसते हैं, लेकिन इस जाल से दूर रहने वाले व्यक्ति ही मुक्ति के रास्ते पर आगे बढ़ते हैं। यह हमें तय करना है कि हमें मुक्ति के रास्ते पर चलना है या बंधन के रास्ते पर।

संत राजिंदर सिंह

रोजनामचा

पं. राघवेन्द्र शर्मा
ज्योतिषाचार्य

मेष : नौकरी में अफसरों से सद्भाव बनाकर रखें। तरक्की के योग बन रहे हैं, परंतु कार्यक्षेत्र में परिवर्तन हो सकता है। विदेश जाने के अवसर भी मिल सकते हैं।

वृष : आत्मसंयत रहें। व्यर्थ के क्रोध से बचें। बातचीत में संतुलित रहें। लेखनादि के कार्यों से मान-सम्मान में वृद्धि हो सकती है। किसी राजनेता से भेंट हो सकती है।

मिथुन : संयत रहें। धैर्यशीलता बनाए रखें। नौकरी में कार्यक्षेत्र में वृद्धि के साथ स्थान परिवर्तन हो सकता है। परिवार से दूर भी रहना पड़ सकता है। खर्च बढ़ेंगे।

कर्क : आत्मविश्वास में वृद्धि होगी, परंतु संयत भी रहें। अपनी भावनाओं को वश में रखें। नौकरी में परिवर्तन के साथ तरक्की के अवसर मिल सकते हैं। आय में वृद्धि होगी।

सिंह : मन परेशान रहेगा। संयत रहें। क्रोध से बचें। बातचीत में संतुलित रहें। कारोबार में परिवर्तन हो सकता है। माता-पिता से धन की प्राप्ति हो सकती है।

कन्या : पढ़ाई में सफलता मिलेगी। लेखनादि कार्यों से आय में वृद्धि होगी। मान-सम्मान की प्राप्ति होगी। परिवार में सुख-शांति रहेगी। मित्रों का सहयोग मिलेगा।

तुला : मन में उतार-चढ़ाव रहेंगे। माता की सेहत का ध्यान रखें। परिवार का साथ मिलेगा। नौकरी के लिए परीक्षा व साक्षात्कारादि कार्यों में सफलता मिलेगी। सम्मान में वृद्धि होगी।

वृश्चिक : आत्मविश्वास में कमी रहेगी। सेहत के प्रति सचेत रहें। बातचीत में संतुलित रहें। पढ़ाई व लेखनादि कार्यों में मान-सममान की प्राप्ति हो सकती है।

धनु : मन परेशान रहेगा। आत्मसंयत रहें। धैर्यशीलता बनाए रखें। परिवार में धार्मिक कार्य हो सकते हैं। भवन के रख-रखाव तथा साज-सज्जा के कार्य में खर्च बढ़ सकते हैं।

मकर : मन में उतार-चढ़ाव रहेंगे। कारोबार का विस्तार हो सकता है, परंतु किसी दूसरे स्थान पर भी जा सकते हैं। परिवार का साथ मिलेगा। खर्चों में वृद्धि होगी।

कुंभ : आत्मसंयत रहें। क्रोध से बचें। नौकरी में कार्यक्षेत्र में बदलाव के साथ स्थान परिवर्तन हो सकता है। परिवार से दूर भी रहना पड़ सकता है। खर्चों में वृद्धि होगी।

मीन : आत्मविश्वास भरपूर रहेगा। पारिवारिक जीवन सुखमय रहेगा। पढ़ाई में सफलता मिलेगी। लेखनादि कार्यों से आय में वृद्धि होगी। मित्रों का सहयोग मिलेगा।

स्कैन करें
भविष्यफल और व्रत-त्योहार जानने के लिए

व्रत और त्योहार | पंचांग | पं. ऋभुकांत गोस्वामी

11, अगस्त, मंगलवार, **शक संवत्** : 20 श्रावण (सौर) 1948, **पंजाब पंचांग** : 27 श्रावण मास प्रविष्टे 2083, **इस्लाम** : 27 सफर, 1448, **विक्रमी संवत्** : श्रावण कृष्ण चतुर्दशी तिथि रात्रि 01.54 मिनट तक। व्यतिपात योग, विष्टि (भद्रा) करण अपराह्न 03.25 मिनट तक। चंद्रमा कर्क राशि में (दिन-रात)।

सूर्य दक्षिणायन। सूर्य उत्तर गोल। वर्षा ऋतु। अपराह्न 03 बजे से सायं 04.30 मिनट तक राहुकालम्। भद्रा अपराह्न 03.25 मिनट तक। श्रावण शिवरात्रि व्रत।

वास्तु सलाह | आचार्य मुकुल रस्तोगी

गंगा स्नान करते समय इन बातों का रखें ध्यान :

- जब भी गंगा स्नान के लिए जाएं, तो जहां से गंगाजी दिखाई दें, वहां से ही जूते-चप्पल उतार दें और नंगे पैर पैदल ही चलें। गंगाजी के पास जाकर उन्हें प्रणाम करें और यह प्रार्थना करें- मां आपके दर्शनों के फल से मेरे अनेक जन्मों के पाप नष्ट हो जाएं। उसके बाद गंगाजी को दंडवत प्रणाम करें और गंगाजी की रज अपने माथे से लगाएं। फिर गंगाजी से प्रार्थना करें कि मैं आपके पवित्र जल को पैरों से स्पर्श कर रहा हूं, मुझे क्षमा करें। उसके बाद गंगाजी का नाम लेकर उसमें डुबकी लगाएं। स्नान के बाद अपने पहने हुए कपड़े इतनी दूर जाकर निचोड़े, ताकि वह जल वापस गंगाजी में न जाए।

वर्ग पहेली : 8417

1	2			3		4		■
■		■	■		■		■	5
6			7	■	8			
	■	■		■	■		■	
9		■	10		11	■	12	
	■	13	■	■		■	■	
14				■	15		16	
	■		■	17	■	■		■
■	18							

बाएं से दाएं
1. थोड़े समय का सुख; अल्पकालीनता; सुख की अल्पावधि (2,2,1,3)
6. कसकर बांधना; सूजन के कारण अंग संचालन न हो पाना (4)
8. भलमनसाहत; शिष्ट व्यवहार; सात्विक व्यवहार (4)
9. अनुचर; अनुयायी; जनता; प्रजा; लोग; मनुष्य; व्यक्ति; दास; सेवक (2)
10. बिजली की चमक; तड़पने का भाव; बेचैनी; स्पंद (3)
12. किसी वस्तु का पीसा हुआ भाग; चूर्ण; बुरादा (2)
14. सन्नद्धता; दक्षता; चतुराई (4)
15. अनबन; झगड़ा; खट-पट (4)
18. इधर-उधर मारा फिरना; उद्योग विशेष में असफल होते रहना; मारा-मारा फिरना (3,2,3)

ऊपर से नीचे
2. बचाने वाला; रक्षा करने वाला; संकटमोचक; सिपाही; पहरेदार; पालन करने वाला (3)
3. ख्याति; नामवरी; प्रसिद्धि; यश; नेकनामी; बड़ाई (2)
4. दृढ़; मजबूत; शक्तिशाली; टिकाऊ (4)
5. रेंगने से उत्पन्न होने वाली ध्वनि; वायु बहने का शब्द (6)
6. अनेक जन्मों तक; जन्म-जन्म तक (6)
7. झुकाया हुआ; जिसका नाम लिखा गया हो; नामांकित (3)
11. जांच; परीक्षा; पहचान (3)
13. यथाशक्ति; जहां तक हो सके (4)
16. तीन घंटे का समय; दिन का आठवां भाग (3)
17. मित्र; मीत; दोस्त (2)

हरीश चन्द्र सन्सी, विविधा विधा, दिल्ली
(उत्तर अगले अंक में)

वर्ग पहेली : 8416

■	1 जी	2 ना	दू	भ	3 र	क	4 र	ना
5 उ	■	स्ति	■	■	स	■	सि	■
6 बा	त	क	र	7 ना	■	8 पं	क	ज
ल	■	ता	■	ग	■	■	ज	■
9 ना	10 ग	■	11 कि	ना	री	■	12 न	13 ग
■	ग	■	■	य	■	14 सु	■	र
15 मा	न	क	■	16 क	म	र	बं	द
■	च	■	17 त	■	■	ता	■	न
18 क	र	व	ट	ब	द	ल	ना	■

सुडोकू : 8371

* आसान

8		5			1	7	2	
					3			
			8	7				1
5	6		9					2
	4			5			9	
9					6		1	3
3				8	9			
			7					
	7	2	4			6		9

खेलने का तरीका : दिमागी खेल और नंबरों की पहेली है यह। ऊपर नौ-नौ खानों के नौ खाने दिए गए हैं। आपको 1 से 9 की संख्याएं इस तरह लिखनी हैं कि खड़ी और पड़ी लाइनों के हरेक खाने में 1 से 9 की सभी संख्याएं आएं। साथ ही 3×3 के हरेक बक्से में भी 1 से 9 तक की संख्याएं हों। पहेली का हल हम कल देंगे।

सुडोकू : 8370

1	9	5	4	2	3	8	7	6
3	4	7	6	9	8	2	5	1
6	8	2	7	1	5	3	9	4
8	7	1	5	6	4	9	3	2
5	2	9	3	8	1	4	6	7
4	6	3	2	7	9	1	8	5
9	5	8	1	4	6	7	2	3
2	3	4	9	5	7	6	1	8
7	1	6	8	3	2	5	4	9

प्रवाह

78 निर्भीक पत्रकारिता का आठवां दशक
स्थापना : 18 अप्रैल 1948 • आगरा

किसी आक्रामक ताकत को रोकने के लिए मजबूत और संतुलित क्षेत्रीय सुरक्षा व्यवस्था बेहद जरूरी है। -जॉर्ज एफ केनन

पूरे मानसून सत्र के दौरान सरकार और विपक्ष के बीच बढ़ते मतभेदों ने संसद की उत्पादकता को जिस बुरी तरह से प्रभावित किया है, वह वाकई चिंताजनक है। सभी को समझना होगा कि संसद का समय राष्ट्रीय संपत्ति है, उसे यों गंवाना किसी भी पक्ष के लिए गर्व का विषय नहीं हो सकता।

ताकि संसद चलती रहे

विपक्ष की मांग को स्वीकारते हुए सरकार ने भले ही दिल्ली में प्रदर्शनकारी छात्रों पर हुई पुलिस कार्रवाई पर गृह मंत्री के जवाब देने पर सहमति जता दी हो, लेकिन पूरे मानसून सत्र में सरकार और विपक्ष के बीच बढ़ते मतभेदों ने संसद की उत्पादकता को जिस बुरी तरह से प्रभावित किया है, वह इस पूरे घटनाक्रम का सबसे चिंताजनक पहलू है। जिन सदनों में प्रतिदिन औसतन सात घंटे काम होने की अपेक्षा रहती है, वहां अब तक कार्यवाही करीब एक-एक घंटे तक सिमटती रही है। अगर दोनों सदनों की कार्यवाही एक-दो नहीं, बल्कि 88 बार स्थगित हो चुकी हो, तो यह महज आंकड़ा नहीं, बल्कि उस समय और अवसर का हिसाब है, जो देश के सबसे महत्वपूर्ण लोकतांत्रिक मंच ने गंवाया है। सबसे गंभीर चिंता तो उन विधेयकों को लेकर है, जो वर्तमान सत्र में लोकसभा में बगैर पर्याप्त चर्चा के पारित करा लिए गए हैं। कानून का निर्माण जितना महत्वपूर्ण है, उसके प्रावधानों पर गंभीर बहस भी उतनी ही आवश्यक है, क्योंकि लोकतंत्र की गुणवत्ता इससे ही तय होती है। संसद में पक्ष और विपक्ष के बीच होने वाला विमर्श ही कानूनों को अधिक व्यापक, व्यावहारिक और जनहितकारी बनाता है। इसलिए, संसद में किसी विधेयक का पारित होना जितना जरूरी है, उसका पर्याप्त परीक्षण भी उतना ही महत्वपूर्ण है। ऐसे में, किसी विधेयक के संभावित प्रभाव, उसके सामाजिक-आर्थिक नतीजे, क्रियान्वयन से जुड़ी व्यावहारिक दिक्कतें और उससे जुड़े सांविधानिक प्रश्न-इन सभी पर संसद में विचार होना ही चाहिए। संसद की कार्यवाही में बार-बार व्यवधान सिर्फ सांसदों या किसी एक दल की समस्या नहीं है। इसका सीधा असर उन करोड़ों नागरिकों पर पड़ता है, जिनके नाम पर कानून बनाए जाते हैं। जरूरत इस बात की है कि सरकार और विपक्ष, दोनों अपने-अपने दायित्व को समझें। सदन में बार-बार गतिरोध पैदा करना कुछ समय के लिए राजनीतिक सुर्खियां भले ही बटोर ले, लेकिन यह संसदीय गरिमा के बिल्कुल अनुकूल नहीं है। उतना ही जरूरी यह भी है कि महत्वपूर्ण विधेयकों को संसदीय समितियों के पास भेजने की परंपरा को मजबूत किया जाए और सदन की कार्यवाही बाधित करने को राजनीतिक रणनीति का नियमित हिस्सा न बनने दिया जाए। गृह मंत्री का संसद में आकर जवाब देना इस गतिरोध से बाहर निकलने की शुरुआत बन सकता है। अब जरूरत है कि इस अवसर को दोनों पक्ष व्यापक संवाद में बदलें। संसद चले, विपक्ष सवाल पूछे और सरकार जवाब दे-यही संसदीय लोकतंत्र का मूल स्वभाव है। हंगामे में कुछ दलों को राजनीतिक फायदा भले दिखाई दे, लेकिन उसकी कीमत लोकतंत्र और जनता, दोनों चुकाते हैं। संसद का समय राष्ट्रीय संपत्ति है, उसे शोर-शराबे में गंवाना किसी भी पक्ष के लिए गर्व का विषय नहीं हो सकता।

एशिया में शक्ति संतुलन बदल रहा है

दशकों तक एशिया में अमेरिका की केंद्रीय भूमिका रही, पर अब स्थिति बदल रही है। चीन की बढ़ती सैन्य ताकत व क्षेत्रीय महत्वाकांक्षाओं के चलते जापान, ऑस्ट्रेलिया, भारत और द. कोरिया जैसे देश आपसी रक्षा सहयोग बढ़ा रहे हैं। इससे एशिया में शक्ति संतुलन बदल रहा है और नए रणनीतिक समीकरण उभर रहे हैं।

पिछले कुछ हफ्तों में चीन ने ताइवान के पूर्वी तट तक अपनी समुद्री गश्त का विस्तार किया है। इसके जरिये उसने यह संकेत दिया है कि जरूरत पड़ने पर वह पूरे द्वीप की समुद्री घेराबंदी कर सकता है। उसने जापान पर सैन्य, व्यापार और कूटनीतिक दबाव बढ़ाया और पनडुब्बी से दागी जाने वाली एक बैलिस्टिक मिसाइल का परीक्षण किया है। चीन की बढ़ती ताकत को देखते हुए क्षेत्र के अन्य देश भी एक-दूसरे के करीब आ रहे हैं। इससे एक नई क्षेत्रीय सुरक्षा व्यवस्था की रूपरेखा उभरती दिखाई देने लगी है।

जापान ने ऑस्ट्रेलिया, फिलीपीन और भारत के साथ अपने रक्षा संबंधों को मजबूत किया है तथा दक्षिण कोरिया के साथ भी रक्षा सहयोग को और गहरा करने पर चर्चा कर रहा है। साथ ही, उसने रक्षा उपकरणों के निर्यात पर लंबे समय से लागू पाबंदियों को खत्म कर दिया है और अब वह दक्षिण कोरिया की तरह क्षेत्रीय हथियार आपूर्तिकर्ता बनने की दिशा में आगे बढ़ रहा है। वहीं, ऑस्ट्रेलिया ने प्रशांत महासागर के द्वीपीय देशों के साथ नए समझौते किए हैं, जिनमें फिजी के साथ पारस्परिक रक्षा संधि भी शामिल है। अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप की सत्ता में वापसी के बाद एशिया की सुरक्षा को लेकर अमेरिका की प्रतिबद्धता पर सवाल उठने लगे हैं। इससे यह आशंका बढ़ी है कि बीजिंग इस अवसर का लाभ उठाकर अधिक आक्रामक नीति अपना सकता है। इसी चिंता ने अमेरिका के सहयोगी देशों को पहले की तुलना में अधिक मजबूती से एकजुट होने के लिए प्रेरित किया है। अब यह बदलाव रफ्तार पकड़ चुका है। हालांकि, इसके साथ नए जोखिम भी पैदा हो रहे हैं।

जेनिफर कवानाघ
द न्यूयॉर्क टाइम्स

इतिहास बताता है कि वैश्विक सुरक्षा व्यवस्था में बड़े बदलाव शायद ही बगैर किसी उथल-पुथल के होते हैं। फिर भी, इसका यह अर्थ नहीं है कि आर्थिक रूप से अत्यंत गतिशील और अमेरिका के रणनीतिक हितों के लिए बेहद महत्वपूर्ण एशिया अब अस्थिरता के दौर में प्रवेश कर रहा है। अगर एशियाई देश अपनी सुरक्षा की जिम्मेदारी खुद ज्यादा उठाएं, एक-दूसरे पर

भरोसा बढ़ाएं और अमेरिका पर कम निर्भर रहें, तो इससे एशिया में ज्यादा स्थिरता और सुरक्षा आ सकती है। यह बदलाव अब टाला नहीं जा सकता। अपनी सैन्य और वैश्विक प्रतिबद्धताओं के बढ़ते बोझ से जूझ रहा अमेरिका अब पहले की तरह लंबे समय तक एशिया की सुरक्षा का जिम्मा उठाने की स्थिति में नहीं रह गया है। ईरान के साथ हुए युद्ध ने भी अमेरिकी सैन्य शक्ति की सीमाओं को उजागर कर दिया है। यही वजह है कि वाशिंगटन को दुनिया के अन्य हिस्सों, विशेषकर एशिया-प्रशांत क्षेत्र से अपने सैन्य संसाधन हटाकर दूसरी जगह लगाने पड़े। ट्रंप स्पष्ट कर चुके हैं कि अमेरिका के सहयोगी देशों को अपनी सुरक्षा की जिम्मेदारी पूर्व की तुलना में खुद ज्यादा उठानी होगी। उनकी सरकार पहले ही यूरोप में अमेरिकी सैन्य उपस्थिति व सुरक्षा प्रतिबद्धताओं में उल्लेखनीय कटौती की घोषणा कर चुकी है। हालांकि, एशिया के लिए अभी तक ऐसी कोई योजना सामने नहीं आई है।

दूसरी ओर, यदि बीजिंग को यह आभास होता है कि अमेरिका की सुरक्षा प्रतिबद्धताएं तेजी से कमजोर हो रही हैं या उसके सहयोगी देश पहले की तुलना में अधिक असुरक्षित हैं, तो वह इसे अपनी क्षेत्रीय और सुरक्षा संबंधी महत्वाकांक्षाओं को आगे बढ़ाने का अवसर मान सकता है। इससे सैन्य टकराव का खतरा और बढ़ सकता है। इसी आशंका और अमेरिका के संरक्षण से वंचित हो जाने के डर ने पूर्वी एशिया में पहले से जारी हथियारों की होड़ को और तेज कर दिया है। चीन लगातार अपनी सैन्य क्षमता बढ़ा रहा है और अपने परमाणु शस्त्रागार का विस्तार कर रहा है। जापान ने हाल ही में लंबी दूरी तक मार करने वाली मिसाइलों को तैनात करना शुरू कर दिया है। दक्षिण कोरिया में अपने परमाणु हथियार विकसित करने को लेकर बहस तेज है, जबकि ऑस्ट्रेलिया परमाणु ऊर्जा से संचालित पनडुब्बियों व उन्नत मिसाइल प्रणालियों में भारी निवेश कर रहा है।

भले ही ये घटनाक्रम चिंताजनक लगें, पर इतिहास गवाह है कि अलग-अलग हितों और सरकारों वाले एशियाई देश, अमेरिका की ज्यादा दखलअंदाजी के बिना भी कारगर साझेदारियां बना सकते हैं। 1967 में स्थापित 11 सदस्यीय दक्षिण-पूर्व एशियाई राष्ट्रों का संगठन (आसियान) अक्सर साझा चुनौतियों पर धीमी और अनिर्णायक प्रतिक्रिया देने के लिए आलोचनाओं का सामना करता है। दक्षिणी चीन सागर में चीन के बढ़ते प्रभाव का मुकाबला करने में भी इसकी भूमिका सीमित रही है। इसके बावजूद, इसने दशकों तक युद्धों से प्रभावित क्षेत्रों में अपने सदस्य देशों के बीच शांति बनाए रखने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है और दक्षिण-पूर्व एशिया तथा चीन के बीच संवाद व सहयोग का एक संस्थागत ढांचा भी उपलब्ध कराया है। सुरक्षा की जिम्मेदारी ज्यादा संतुलित तरीके से बांटने से प्रतिरोधक क्षमता कमजोर नहीं होगी। इसके बजाय जापान, फिलीपीन और ऑस्ट्रेलिया के बीच मजबूत रक्षा सहयोग सुरक्षा खतरों से निपटने की पहली पंक्ति को और मजबूत करेगा। जैसे-जैसे अमेरिका के सहयोगी देश ज्यादा सक्षम और समन्वित होते जाएंगे, वैसे-वैसे यह भी उचित होगा कि वे अपनी सुरक्षा पर होने वाले खर्च का बड़ा हिस्सा खुद उठाएं। वहीं, अमेरिका एशिया-प्रशांत क्षेत्र में अपने सहयोगी देशों के साथ बेहतर तालमेल बनाए रख सकता है। वह अपने रणनीतिक हितों से जुड़े दायित्वों, जैसे प्रमुख समुद्री व्यापारिक मार्गों को खुला और सुरक्षित रखने में अहम भूमिका निभा सकता है। साथ ही, वह चीन के साथ स्थिर संबंध बनाए रखने की कोशिश भी करता रह सकता है। ऐसी सहयोगी सुरक्षा व्यवस्था सैन्य रूप से अधिक मजबूत और लंबे समय तक टिकाऊ होगी। अमेरिका की मदद देर से मिलने या न मिलने पर भी ये देश मिलकर प्रभावी कार्रवाई कर सकेंगे।

जहां तक पश्चिम एशिया का सवाल है, वहां की स्थिति साबित करती है कि अमेरिका की सैन्य भागीदारी भी अंतरराष्ट्रीय प्रतिद्वंद्विताओं को युद्ध में बदलने से नहीं रोक सकती। अमेरिका ने इस्राइल के साथ मिलकर ईरान के खिलाफ युद्ध शुरू किया, जिसके परिणामस्वरूप फारस की खाड़ी में उसके साझेदार देशों को ईरानी हमलों का सामना करना पड़ा और वैश्विक व्यापार भी प्रभावित हुआ। इसी कारण खाड़ी क्षेत्र के कुछ देश वाशिंगटन पर अपनी निर्भरता पर पुनर्विचार कर रहे हैं और सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए नए विकल्प तलाश रहे हैं। अमेरिका आगे भी प्रशांत क्षेत्र की एक प्रमुख शक्ति बना रहेगा, पर रणनीतिक शक्ति संतुलन पहले ही बदल चुका है। अमेरिका के मित्र और प्रतिद्वंद्वी, दोनों आज पहले की तुलना में कहीं अधिक समृद्ध व सैन्य रूप से सक्षम हैं, जबकि अमेरिकी सेनाएं कई वैश्विक मोर्चों पर पहले से ही अत्यधिक दबाव में हैं। एशिया अब इसी नई रणनीतिक वास्तविकता के अनुरूप स्वयं को ढाल रहा है।

©The New York Times 2026

जीवन धारा

आचार्य प्रशांत

बचपन से ही हमें अनेक पहचानें दे दी जाती हैं। कोई हमें बुद्धिमान कहता है, तो कोई साधारण। धीरे-धीरे हम इन शब्दों को ही अपनी सच्चाई मान बैठते हैं। हम यह जानने का प्रयास ही नहीं करते कि वास्तव में हम कौन हैं।

दूसरों की नजरों से खुद को देखना छोड़िए

अहंकार को लेकर हम अक्सर यह मान लेते हैं कि यह हमारे जीवन की सबसे बड़ी समस्या है और इससे छुटकारा पाना आवश्यक है। लेकिन, शायद ही कभी हम स्वयं से यह प्रश्न पूछते हैं कि आखिर अहंकार है क्या। बिना समझे ही हम उससे छुटकारा पाने का निर्णय कर लेते हैं। जब हम किसी बात को स्वयं जाने बिना केवल इसलिए स्वीकार कर लेते हैं, क्योंकि किसी और ने उसे सत्य कहा है, तब हम अपनी बुद्धि से नहीं, उधार के विचारों से जीवन जी रहे होते हैं। बचपन से ही हमें अनेक पहचानें दे दी जाती हैं। कोई हमें बुद्धिमान कहता है, तो कोई साधारण। धीरे-धीरे हम इन शब्दों को ही अपनी सच्चाई मान बैठते हैं। हम यह जानने का प्रयास ही नहीं करते कि वास्तव में हम कौन हैं। यही उधार की पहचान अहंकार का निर्माण करती है। अहंकार दूसरों की नजर में हमारे बारे में बनी हुई वह छवि है, जिसे हमने अपनी वास्तविक पहचान मान लिया है।

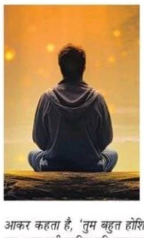

अपने भीतर झांकने के बजाय हम सहजता और आलस्य में अपनी पहचान किसी और से ले लेते हैं। अपने ही बारे में हमारी धारणा और हमारा पूरा आत्म-चित्र हमारे अपने अनुभव से नहीं, बल्कि दूसरों के शब्दों से बनता है। यही उधार की जिंदगी अहंकार है। कोई आपके पास आकर कहता है, 'तुम बहुत होशियार हो।' आप बिना सोचे-समझे इसे सुनकर फूल गए। अब वही व्यक्ति यदि कुछ समय बाद आकर कह दे कि 'तुम मूर्ख हो', तो आपकी स्थिति क्या होगी? यदि आपकी पहचान उसी की राय पर टिकी है, तो उसका यह वाक्य आपको भीतर तक तोड़ देगा। यही कारण है कि अहंकार हमेशा भय के साथ चलता है। यह भय कि कहीं लोग हमारी छवि खराब न कर दें।

अहंकार का अर्थ है 'सेकंड-हैंड' जिंदगी। अपनी आंखों से स्वयं को देखने के बजाय दूसरों की आंखों से खुद को देखना। ऐसे व्यक्ति का सुख भी उधार का होता है और दुख भी। वह प्रशंसा मिलने पर प्रसन्न हो जाता है और आलोचना मिलते ही टूट जाता है। इसी अहंकार को हम अपने रोजमर्रा के जीवन में बार-बार जीते हैं। अच्छा परिणाम आते ही लोग उत्साह में सबको बताने दौड़ पड़ते हैं। वे चाहते हैं कि लोग उनकी प्रशंसा करें, उन्हें सफल कहें और उनकी एक अच्छी छवि बने। जब परिणाम अच्छा नहीं आता, तो वही लोग लोगों से मिलने से कतराते हैं, स्वयं को एक कोने में समेट लेते हैं। देखने में ये दोनों स्थितियां अलग लगती हैं, पर दोनों का आधार एक ही है, दूसरों की नजरों में अपनी छवि को बचाना।

वास्तव में सफलता का प्रदर्शन करना भी अहंकार है और असफलता को छिपाना भी। जब हम इन दोनों क्षणों में सजग रहने लगते हैं, तब धीरे-धीरे हमें यह दिखाई देने लगता है कि हमारी वास्तविक पहचान किसी की प्रशंसा या आलोचना से तय नहीं होती। उस दिन हम दूसरों की राय के गुलाम नहीं रहते, बल्कि अपने विवेक के स्वामी बन जाते हैं।

-प्रशांत अद्वैत फाउंडेशन के सत्रों के संशोधित अंश

खुद को जानें

सूत्र

अहंकार तब जन्म लेता है, जब हम अपनी पहचान स्वयं के अनुभव से नहीं, बल्कि दूसरों की राय से बनाते हैं। प्रशंसा हमें ऊंचा उठा देती है और आलोचना हमें तोड़ देती है, क्योंकि हमारा आधार सत्य पर नहीं, उधार पर टिका होता है। असली स्वतंत्रता तब मिलती है, जब हम स्वयं को दूसरों की नजरों से नहीं, बल्कि अपने विवेक व आत्मबोध से पहचानते हैं।

दूसरा पहलू

वैज्ञानिक एक नए निष्कर्ष पर पहुंचने के करीब हैं कि किसी बड़े तारे के पतन के दौरान एक नया सूक्ष्म ब्रह्मांड कैसे जन्म ले सकता है।

अंतरिक्ष विज्ञान की नई पहेली

■ ऋतुपर्णा दवे

वैज्ञानिक एक नए निष्कर्ष पर पहुंचने के करीब हैं कि किसी बड़े तारे के पतन के दौरान एक नया सूक्ष्म ब्रह्मांड कैसे जन्म ले सकता है। अब तक धारणा यह थी कि तारे के टूटने से ब्लैक होल का निर्माण होता है। यह किसी बड़े तारे के मरने और अपने ही अंदर सिमट जाने से बनता है।

ब्लैक होल को लेकर आज भी कई सवाल अनसुलझे हैं। जैसे, इतना विशाल तारा आखिर एक बेहद छोटे बिंदु में कैसे सिमट जाता है और वहां भौतिकी के नियम कैसे काम करते हैं? इसी तरह, ब्लैक होल का 'इवेंट होराइजन' यानी उसके चारों ओर बनी एक अदृश्य सीमा भी रहस्य है, जिसे पार करने के बाद प्रकाश समेत कोई भी चीज वापस नहीं आ सकती। इन्हीं उलझनों के बीच वैज्ञानिकों ने एक वैकल्पिक अवधारणा पर काम किया है, जिसे 'ग्रैवास्टार' कहते हैं, यानी एक काल्पनिक या सैद्धांतिक खगोलीय पिंड, जो बड़े तारों के टूटने पर ब्लैक होल की जगह बन सकता है। जर्मनी की गोएथे यूनिवर्सिटी फ्रैंकफर्ट के एक शोध में ग्रैवास्टार को ब्लैक होल जैसा बताया गया है, लेकिन इसमें सिंगुलैरिटी या इवेंट होराइजन नहीं होता। इसके भीतर डार्क एनर्जी होती है, जो गुरुत्वाकर्षण के खिलाफ दबाव बनाकर तारे को पूरी तरह ढहने से रोकती है। अध्ययन में यह भी पाया गया कि जब तारा ब्लैक होल बनने के करीब पहुंचता है, उसी समय उसके भीतर एक छोटा-सा नया ब्रह्मांड जन्म ले सकता है। यह वही स्थिति है, जैसी बिग बैंग के समय थी, जब लगभग 13.8 अरब वर्ष पहले हमारा ब्रह्मांड एक बेहद गर्म, सघन और छोटे बिंदु से फैलना शुरू हुआ था। यह कोई बम धमाका नहीं, बल्कि अंतरिक्ष का तेज विस्तार था, जो आज भी जारी है। इसी दौरान समय, अंतरिक्ष और भौतिकी के नियम बने तथा क्वार्क-इलेक्ट्रॉन्स से प्रोटॉन, न्यूट्रॉन और हाइड्रोजन-हीलियम जैसे तत्व बने। बाद में, एडविन हबल की खोज से पता चला कि ब्रह्मांड फैल रहा है। प्रारंभिक ब्रह्मांड के अवशेष के रूप में अंतरिक्ष में सूक्ष्म तरंग विकिरण मौजूद हैं, जो इस सिद्धांत की पुष्टि करते हैं।

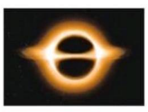

वैज्ञानिकों ने 'ग्रैवास्टार' की अवधारणा दी है, जो बड़े तारों के टूटने पर ब्लैक होल की जगह बनने वाला सैद्धांतिक खगोलीय पिंड है।

हालांकि, ग्रैवास्टार में ब्लैक होल की तरह सिंगुलैरिटी या इवेंट होराइजन नहीं होता। इसके भीतर डार्क एनर्जी होती है, जो गुरुत्वाकर्षण के खिलाफ दबाव बनाकर तारे को पूरी तरह ढहने से रोकती है।

शोधकर्ता इस निष्कर्ष पर भी पहुंचे कि यह उस सवाल का जवाब हो सकता है कि ग्रैवास्टार सामान्य पदार्थ से कैसे बन सकते हैं। कई वैज्ञानिक यह भी मानते हैं कि ब्लैक होल अब भी गुरुत्वीय पतन की सरलतम व स्वाभाविक व्याख्या है। ब्लैक होल और सूक्ष्म ब्रह्मांड को लेकर हो रहे दिलचस्प शोध भौतिक विज्ञान की रोचकता और जिज्ञासा के केंद्र में हैं।

आंकड़े

उर्वरक या जहर

रासायनिक उर्वरकों के अत्यधिक प्रयोग ने कृषि उपज भले बढ़ाई हो, किंतु मृदा व पर्यावरण पर इसके घातक प्रभाव पड़े हैं। इस मामले में चीन सबसे आगे है।

चीन	335
ब्राजील	285
कतर	210
भारत	182
इस्राइल	181

आंकड़े प्रति हेक्टेयर कृषि भूमि पर उर्वरक उपयोग के, किलोग्राम में। | स्रोत : खाद्य एवं कृषि संगठन (एफएओ)

मां सरस्वती के संदेश से निर्धन वृद्ध का उपहास करने वाले धनी व्यक्ति को समझ में आया कि सच्चा ज्ञान दूसरों से श्रेष्ठ होने में नहीं, बल्कि अहंकार को मिटाने में है।

मां सरस्वती का संदेश

पौराणिक कथाओं के अनुसार, एक निर्धन वृद्ध प्रातः नदी के किनारे बैठकर मां सरस्वती का ध्यान करता था। उसके पास यदि कुछ था, तो वह था ज्ञान पाने की सच्ची इच्छा। उसी गांव में एक अत्यंत धनी व्यक्ति भी रहता था। उसके पास सोना, रत्न और असंख्य ग्रंथ थे, लेकिन अपनी संपत्ति और विद्या का उसे इतना अहंकार था कि वह अक्सर वृद्ध का उपहास करता। वह कहता, 'तुम रोज भगवान की पूजा करते हो, पर आज तक तुम्हारी प्रार्थना सुनी नहीं गई। देखो, तुम अब भी निर्धन हो।'

एक दिन दोनों मां सरस्वती के मंदिर पहुंचे। धनी व्यक्ति ने देवी के चरणों में सोने के आभूषण और बहुमूल्य रत्न अर्पित किए। वृद्ध ने आंखें बंद कीं और हाथ जोड़कर प्रार्थना की, 'हे मां! मुझे ऐसा ज्ञान देना, जिससे मैं हर जीव में आपका अंश देख सकूं।' उसी रात मां सरस्वती धनी व्यक्ति के स्वप्न में प्रकट हुईं। उन्होंने कहा, 'धन मनुष्य को वैभव दे सकता है, पर सच्चा ज्ञान उसे विनम्र बनाता है। जिस विद्या से अहंकार बढ़े और करुणा न जगे, वह बोझ है।' सुबह धनी व्यक्ति की आंख खुली, तो उसका मन बदल चुका था। उसे समझ आया कि ज्ञान का अर्थ दूसरों से श्रेष्ठ होना नहीं, बल्कि अपने भीतर के अहंकार से मुक्त होना है।

अंतर्यात्रा
संकलित

अमर उजाला

पुराने पन्नों से — 11 अगस्त, 1951

पाकिस्तानी समाचार पत्रों में भारत विरोधी प्रचार

पाकिस्तान के समाचार पत्र बार-बार भारत और हिंदू विरोधी प्रचार करके पाकिस्तानी जनता के दिमाग में जहर भर रहे हैं। लाहौर के दो समाचार पत्रों *जमींदार* और *एहसान* ने इस प्रकार के लेख लिखने में कोई कसर नहीं छोड़ी है।

मानसून का बदलना अब एक स्थायी संकट

इस साल के मानसून में जलवायु परिवर्तन की कहानी छिपी है। यह बताती है कि अब मानसून का स्वरूप स्थायी रूप से बदल चुका है।

सीमा जावेद | मुद्दा

मजबूत होते अल-नीनो के कारण सामान्य से कम बारिश के अनुमान के बावजूद, जुलाई में बारिश का लक्ष्य पार हो गया। वहीं, गुजरात से लेकर असम तक इस साल फिर बरसात के मौसम ने तबाही मचा दी। मानसूनी बारिश और नदियों का जलस्तर बढ़ने से बाढ़ के कारण असम, गुजरात, केरल, कर्नाटक, ओडिशा और जम्मू-कश्मीर जैसे राज्यों में लाखों लोग प्रभावित हुए हैं और जनजीवन अस्त-व्यस्त हो गया है। दूसरी तरफ झारखंड सूखे की मार से जूझ रहा है। इससे यह साफ हो गया है कि जलवायु परिवर्तन भारत के मानसून को बदल रहा है। असम, महाराष्ट्र, गुजरात और हिमाचल प्रदेश जैसे इलाकों में बादल फटने की जानलेवा घटनाओं, शहरों में जल-जमाव और भूस्खलन का सिलसिला जारी रहा है।

अगस्त और सितंबर, 2025 में, पूर्वी पाकिस्तान और उत्तरी भारत के कुछ हिस्सों में बड़े पैमाने पर बाढ़ आई थी। यह बाढ़ मुख्य रूप से भारत के हिमाचल प्रदेश और जम्मू-कश्मीर के पहाड़ी इलाकों में हुई भारी मानसूनी बारिश के कारण आई थी। इसके बाद अचानक आई बाढ़ (फ्लैश फ्लड) की वजह से भारतीय अधिकारियों को भारत और पाकिस्तान, दोनों के पंजाब में बहने वाली कई नदियों पर बने बांध खोलने पड़े, जिससे निचले इलाकों में बड़े पैमाने पर बाढ़ आ गई। पाकिस्तान के पंजाब प्रांत में 1,400 से अधिक गांव बाढ़ की चपेट में आ गए, और भारत के पंजाब राज्य में भी 1,400 गांव प्रभावित हुए।

इस साल भी पिछले साल की तरह ही इस मानसून में बादल फटने की नौ घटनाएं, अचानक बाढ़ की 19 घटनाएं सामने आई हैं। बादल फटने से प्रभावित चार बड़े इलाकों में 120 सड़कें बंद हो गई हैं और पीने के पानी की आपूर्ति बाधित हुई है। जम्मू-कश्मीर में भूस्खलन और अचानक आई बाढ़ के कारण लोगों और पर्यटकों को यात्रा न करने की सलाह दी गई है। हिमाचल प्रदेश और जम्मू-कश्मीर जैसे उत्तरी राज्यों में लगभग हर साल ही अचानक आने वाली बाढ़ और बादल फटने की घटनाएं होती रहती हैं। दूसरी तरफ, झारखंड में मानसून में 40-79 फीसदी की कमी के चलते खरीफ फसलों की बुआई और रोपाई पर असर पड़ा है। बारिश कम होने से धान और दूसरी फसलों के उत्पादन में कमी आ सकती है। ऐसे में, सरकार ने किसानों को बाजरा बोने की सलाह दी है।

वैज्ञानिकों के अनुसार, जलवायु परिवर्तन की वजह से गर्मी हद पार करती जा रही है। साथ ही, वातावरण में नमी बेहिसाब ढंग से बढ़ रही है। ऐसे में, मौसम का अंदाज बदल रहा है। पहले गर्मियों में तेज लू चलती थी। पसीना आता था, लेकिन जल्दी सूख जाता था। अब गर्मी के साथ उमस भी बढ़ गई है, जिससे शरीर को ज्यादा घुटन और बेचैनी महसूस होती है। अब पसीना सूखता नहीं और न ही शरीर ठंडा होता है। विशेषज्ञों के मुताबिक, पहले मानसून में कई दिनों तक हल्की या मध्यम बारिश होती थी। अब स्थिति बदल रही है। बारिश वाले दिनों की संख्या घट रही है, पर जब बारिश होती है, तो बहुत कम समय में अत्यधिक मात्रा में पानी बरसता है। इसका कारण गर्म होती हवा और समुद्र हैं, जो वातावरण में पहले से अधिक नमी जमा कर रहे हैं। यही नमी बादलों को बेहद भारी बना देती है। इसका एक कारण नदी घाटियों के किनारे बहुत ज्यादा खनन कार्य करना भी है, जिससे गाद जमा होने की समस्या बढ़ी और नदी की पानी ले जाने की क्षमता कम हो गई।

भारत मौसम विज्ञान विभाग के पूर्व महानिदेशक डॉ. के जे रमेश के अनुसार, अब मानसून का स्वरूप स्थायी रूप से बदल चुका है। चाहे अल-नीनो हो या न हो, भविष्य में बारिश कम समय में और अधिक तीव्रता के साथ होने की संभावना बढ़ती जाएगी। उन्होंने कहा कि अरब सागर के रिकॉर्ड स्तर तक गर्म होने से उत्तर-पश्चिम भारत में भी बारिश का पैटर्न बदल रहा है। अध्ययनों से पता चलता है कि भारत के कई हिस्सों में मौसम में उतार-चढ़ाव अनियमित होते जा रहे हैं। सूखे या अल-नीनो के बावजूद, कुछ जगहों पर कई दिनों तक भारी बारिश (सामान्य से कई गुना ज्यादा) होती है।

एक अध्ययन के अनुसार, भविष्य में महाराष्ट्र और गुजरात के तटीय इलाकों में भारी बारिश वाले दिनों की संख्या लगभग एक सप्ताह तक बढ़ सकती है। ऐसे में, अब समय आ गया है कि जलवायु अनुकूल शहरी योजना पर निवेश बढ़ाना होगा। इस साल के मानसून में दरअसल जलवायु परिवर्तन की कहानी छिपी है, जो एक अहम संदेश दे रही है। चुनौती सिर्फ यह नहीं है कि कितनी बारिश होगी, बल्कि यह भी है कि बारिश किस तरह होगी। अगर शहर पुराने मौसम के हिसाब से बने रहेंगे, तो बदलती जलवायु के साथ आने वाली ऐसी चरम बारिश उन्हें बार-बार संकट में डालती रहेगी।

edit@amarujala.com

न्यूज डायरी

हिंदुस्तान कॉपर का मुनाफा 162% उछला

नई दिल्ली। सरकारी कंपनी हिंदुस्तान कॉपर का चालू वित्त वर्ष 2026-27 की पहली तिमाही में एकीकृत शुद्ध लाभ 162.4 फीसदी बढ़कर 352.37 करोड़ रुपये हो गया। पिछले वर्ष जून तिमाही में यह 134.25 करोड़ रुपये था। आय 81.3 फीसदी बढ़कर 936.50 करोड़ हो गया। कंपनी पांच वर्षों में खनन के विस्तार पर 7,188.90 करोड़ रुपये खर्च करेगी। एजेंसी

रूसी क्रूड का आयात दूसरे महीने रिकॉर्ड स्तर पर

नई दिल्ली। रूस से कच्चे तेल का आयात जुलाई में लगातार दूसरे महीने रिकॉर्ड स्तर पर रहा। ऊर्जा एवं स्वच्छ वायु अनुसंधान केंद्र के अनुसार, जुलाई में भारत ने करीब 56,000 करोड़ रुपये का रूसी कच्चा तेल खरीदा। जून के मुकाबले आयात 2.1 फीसदी बढ़ा। तब 46,000 करोड़ का तेल खरीदा गया था। एजेंसी

अगस्त-सितंबर में ऊंची रहेगी बिजली की मांग

नई दिल्ली। विश्व मौसम विज्ञान संगठन और ऊर्जा विशेषज्ञों के अनुसार, अगस्त से अक्तूबर के दौरान तापमान में बढ़ोतरी और कम बारिश के कारण बिजली की मांग में बड़ा उछाल आ सकता है। सेंटर फॉर रिसर्च ऑन एनर्जी एंड क्लीन एअर के अनुसार, कम बारिश से एसी और पंखों की जरूरत काफी बढ़ जाएगी। जलाशयों का जलस्तर घटेगा, जिससे विद्युत उत्पादन में गिरावट आ सकती है। बोनस डेस्क

वोडाफोन आइडिया : घाटा कम होकर 3,754 करोड़

नई दिल्ली। कर्ज से जूझ रही दूरसंचार कंपनी वोडाफोन आइडिया का वित्त वर्ष 2026-27 की पहली तिमाही में शुद्ध घाटा 43 फीसदी कम होकर 3,754 करोड़ रुपये रह गया। बकाया भुगतान को लेकर दी गई सरकारी राहत से कंपनी को सहारा मिला। कंपनी की आय 6 फीसदी बढ़कर 11,689 करोड़ रुपये हो गई। ग्राहक संख्या घटकर 19.31 करोड़ रह गई। एजेंसी

सोना खरीदना क्या अब भी मुनाफे का सौदा है?

अंतरराष्ट्रीय बाजार में 4400 डॉलर के करीब, भारत में दिखेगा 1.5 लाख का भाव

नई दिल्ली। वैश्विक बाजार कॉमेक्स पर सोना एक बार फिर 4,400 डॉलर प्रति औंस के करीब पहुंच चुका है। भारत में सोमवार को एमसीएक्स पर अक्तूबर डिलीवरी का सोना 1,52,999 रुपये प्रति 10 ग्राम के स्तर पर कारोबार करता हुआ देखा गया।

मोतीलाल ओसवाल के मुताबिक, मुद्रास्फीति, ब्याज दरें और मौद्रिक नीति कीमतों को प्रभावित करने वाले महत्वपूर्ण कारक बनकर उभरे हैं। निवेशक वैश्विक संघर्ष का आकलन भी इसी आधार पर कर रहे हैं।

सोना 2,000, चांदी 5,000 रुपये महंगी : दिल्ली सराफा बाजार में लगातार पांचवें सत्र में सोने में तेजी रही। भाव 2,000 चढ़कर 1,56,000 रुपये प्रति 10 ग्राम पर पहुंच गया। चांदी सोमवार को 5,200 उछलकर 2,40,000 रुपये प्रति किलो पहुंच गई।

बड़ी तेजी के आसार

पृथ्वी फिनमार्ट के मनोज कुमार जैन के मुताबिक, 3,950 डॉलर से शुरू हुई यह तेजी जल्द ही 4,550 डॉलर प्रति औंस तक जा सकती है। एमसीएक्स पर इस सप्ताह सोना 1,55,000 से 1,56,000 रुपये प्रति 10 ग्राम तक का स्तर छू सकता है। कमोडिटी विशेषज्ञ अंकित कपूर ने कहा, जल्द ही 1,55,600 रुपये तक के लक्ष्य देखने को मिल सकते हैं। ■ बोनस डेस्क

धूत ट्रांसमिशन आईपीओ : निवेशकों की अच्छी प्रतिक्रिया, पहले दिन 63% भरा

नई दिल्ली। ऑटो कल-पुर्जे बनाने वाली कंपनी धूत ट्रांसमिशन लि. के 3,067 करोड़ रुपये के आरंभिक सार्वजनिक निर्गम (आईपीओ) को सोमवार को बोली के पहले दिन निवेशकों की अच्छी प्रतिक्रिया मिली। इसको पहले दिन कुल 63 फीसदी सब्सक्रिप्शन मिला।

नेशनल स्टॉक एक्सचेंज के आंकड़ों के अनुसार, कंपनी ने 2,49,56,363 शेयरों की पेशकश की थी, जिसके मुकाबले 1,56,51,645 शेयरों के लिए बोलिया मिलीं। खुदरा निवेशकों के लिए आरक्षित हिस्सा 74 फीसदी भर गया। आईपीओ खुलने से पहले बड़े निवेशकों से 918.3 करोड़ रुपये जुटाए गए। इसमें ब्लैकरॉक जैसे दिग्गज निवेशक शामिल हैं। ब्यूरो

12 अगस्त तक लगा सकते हैं बोली : यह आईपीओ 12 अगस्त को बंद होगा। इसके लिए मूल्य दायरा 829 से 871 रुपये प्रति शेयर तय किया गया है। शेयरों के 17 अगस्त को सूचीबद्ध होने की संभावना है।

वैश्विक उथल-पुथल से सुस्त पड़ा देश का आईपीओ बाजार

वित्त वर्ष 2026-27 में 28 कंपनियों ने आईपीओ से जुटाए 47 हजार करोड़

बोनस डेस्क

नई दिल्ली। भारत के प्राथमिक बाजार ने वित्त वर्ष 2025-26 में रिकॉर्ड तोड़ प्रदर्शन करने के बाद 2026-27 में धीमी शुरुआत की है। चालू वित्त वर्ष में अब तक 28 कंपनियों ने आरंभिक सार्वजनिक निर्गम (आईपीओ) पेश किए हैं और 46,872.95 करोड़ रुपये जुटाए हैं। यह पिछले साल समान अवधि में देखे गए ट्रेंड से काफी कम है।

मुख्य शेयर बाजारों में वित्त वर्ष 2025-26 के दौरान रिकॉर्ड 113 आईपीओ आए, जिनके माध्यम से करीब 1.91 लाख करोड़ रुपये जुटाए गए, जबकि 2024-25 में 80 आईपीओ के जरिये 1.63 लाख करोड़ रुपये जुटाए गए थे। मजबूत बाजार सेंटीमेंट और निवेशकों की स्वस्थ भागीदारी ने कंपनियों को रिकॉर्ड पूंजी जुटाने में मदद की।

वित्त वर्ष 2026-27 में अप्रैल से 10 अगस्त तक पिछले साल की समान अवधि की तुलना में 30 फीसदी कम आईपीओ आए हैं। एक अप्रैल 2026 से 10 अगस्त 2026 तक 28 कंपनियां शेयर बाजारों में सूचीबद्ध हुई हैं। इन सबने बाजार से 46,872.95 करोड़ रुपये जुटाए हैं।

बाजार की अस्थिरता ने किया प्रभावित

बढ़ती वैश्विक अस्थिरता, बाजार की कठिन परिस्थितियों और सतर्क निवेशक भावना के कारण इस साल आईपीओ गतिविधियों में तेज गिरावट आई है।

■ कैलेंडर वर्ष 2026 की दूसरी तिमाही में, केवल 2,422 करोड़ रुपये के चार आईपीओ ही आए, जबकि पहली तिमाही में 24,772 करोड़ रुपये के 19 आईपीओ आए थे।

55% कंपनियों ने कराया मुनाफा

वित्त वर्ष 2025-26 में आए कुल 113 आईपीओ में से 62 कंपनियों के शेयर का भाव अपने निर्गम मूल्य की तुलना में ऊपर बना हुआ है। पिछले साल आए आईपीओ में से बेलराइज इंडस्ट्रीज और एथर एनर्जी के निवेशकों को सबसे ज्यादा फायदा हुआ है।

■ बेलराइज का शेयर अपने निर्गम मूल्य से अभी 176 फीसदी ऊपर है, जबकि एथर एनर्जी का शेयर अपने निर्गम मूल्य से 362 फीसदी ऊपर कारोबार कर रहा है।

■ इस साल अब तक आए 28 आईपीओ में से 21 कंपनियों के शेयर अपने निर्गम मूल्य से ऊपर कारोबार कर रहे हैं।

घरेलू निवेशकों के दम पर संभला बाजार

भले ही आईपीओ गतिविधियों में नरमी आई है, लेकिन घरेलू निवेशक बाजार को लगातार सहारा दे रहे हैं। मासिक एसआईपी निवेश 30,000 करोड़ रुपये से ऊपर बना हुआ है। रिटेल निवेशकों की मजबूत भागीदारी से विदेशी निवेशकों के उतार-चढ़ाव को संतुलित करने और बाजार संभालने में मदद मिल रही है।

निवेशकों की रुचि अब उन कंपनियों में है जिनकी बुनियाद मजबूत हैं, संचालन व्यवस्था बेहतर है, आय में वृद्धि की संभावना है और मूल्यांकन संतुलित है।

ग्रामीण बेरोजगारी बढ़कर 4.8% शहरों में स्थिर

नई दिल्ली। देश में अप्रैल-जून 2026 तिमाही में ग्रामीण बेरोजगारी बढ़कर 4.8 फीसदी हो गई। शहरी बेरोजगारी लगभग स्थिर रहते हुए 6.6 फीसदी से बढ़कर 6.7 फीसदी हो गई। सांख्यिकी एवं कार्यक्रम कार्यान्वयन मंत्रालय के अनुसार, 15 वर्ष और उससे अधिक आयु वालों की श्रम बल भागीदारी घटकर 54.6 फीसदी रह गई, जो जनवरी-मार्च तिमाही में 55.5 फीसदी थी। शहरी श्रम बल भागीदारी दर 50.2 फीसदी बनी रही, जबकि रोजगार प्राप्त लोगों की संख्या बताने वाला श्रमिक जनसंख्या अनुपात 46.8 फीसदी रहा। एजेंसी

विनिवेश से सरकारी खजाने में आए 45,306 करोड़

नई दिल्ली। केंद्र ने वित्त वर्ष 2025-26 में विनिवेश और सरकारी परिसंपत्तियों को बेचकर कुल 45,306 करोड़ जुटाए हैं। यह संशोधित अनुमान में तय लक्ष्य से करीब 11,469 करोड़ रुपये अधिक है। वित्त राज्य मंत्री पंकज चौधरी ने सोमवार को संसद में यह जानकारी दी।

सरकार ने वित्त वर्ष 2025-26 के संशोधित अनुमान में विविध पूंजी प्राप्तियों के तहत 33,837 करोड़ रुपये का लक्ष्य रखा था। विनिवेश से 16,885.56 करोड़ और संपत्तियों की बिक्री से उसे करीब 28,420 करोड़ रुपये प्राप्त हुए हैं। एजेंसी

1601 सीरीज वाले नंबर से आएगी बिजली, गैस और कूरियर की कॉल

नई दिल्ली। बिजली, पानी, गैस, एलपीजी और कूरियर कंपनियों की सेवा और लेनदेन की फोन कॉल अब 1601 नंबर सीरीज से आएगी।

भारतीय दूरसंचार नियामक प्राधिकरण (ट्राई) के मुताबिक, पहले चरण में बिजली वितरण, पानी की आपूर्ति, सिटी गैस एवं एलपीजी वितरण, कूरियर, पार्सल डिलीवरी और एक्सप्रेस लॉजिस्टिक्स के क्षेत्र में काम करने वाली कंपनियों को 1601 नंबर सीरीज दी जाएगी। 90 दिनों में यह सेवा शुरू हो जाएगी। 1600 सीरीज का इस्तेमाल बैंकिंग, बीमा तथा लेनदेन संबंधी कॉल के लिए किया जाता है। 1601 सीरीज से महत्वपूर्ण वित्तीय कॉल और दूसरे क्षेत्रों की सर्विस कॉल के बीच अंतर बनाए रखने में मदद मिलेगी। नंबर जारी करने से पहले सत्यापन होगा। ब्यूरो

■ फर्जी कॉल पर लगेगी लगाम

1601 सीरीज धोखाधड़ी और कंपनी बनकर फोन करने वाले जालसाजों पर अंकुश लगाने में मदद करेगी। अलग नंबर सीरीज होने से ग्राहक वैध सर्विस और लेनदेन संबंधी कॉल की पहचान आसानी से कर सकेंगे।

एक्सप्लेनर

महज 20 दिनों में कीमतों में लगी आग

क्या फिर आपके राशन का बजट बिगाड़ेगा गेहूं?

गेहूं की बढ़ती कीमतों के बीच आखिर एफएमसीजी कंपनियों की क्या है तैयारी?

वैश्विक बाजार में गेहूं आपूर्ति का संकट अब आपके किचन तक पहुंच चुका है। काला सागर से आवक घटने और अल नीनो के खतरे ने पूरी दुनिया में गेहूं के रकबे को घटा दिया है।

तेजी की तपिश घरेलू बाजार में साफ महसूस की जा रही है। महज 20 दिनों के भीतर राजधानी दिल्ली में गेहूं का भाव करीब 4 फीसदी तक उछलकर 2,880 रुपये प्रति क्विंटल पर पहुंच गया है।

आखिर क्यों महंगा हो रहा गेहूं?

■ रूस-यूक्रेन युद्ध के चलते काला सागर में अनाज ले जाने वाले जहाजों पर हमले और नोवोरोस्सिएस्क के पास ड्रोन हमलों ने शिपमेंट को अनिश्चित बना दिया है। अल-नीनो के कारण उत्तरी अमेरिका, यूरोप और ऑस्ट्रेलिया में भीषण गर्मी और सूखे के चलते किसानों ने बुवाई का रकबा घटा दिया है।

■ उधर, पश्चिम एशिया संकट से खाद के दाम काफी बढ़ गए हैं, जिससे किसानों ने गेहूं की जगह कैनोला, सोयाबीन और मक्का जैसी फसलों का रुख किया है। भारतीय रुपये का डॉलर के मुकाबले गिरना भी आयातित जिंसों को महंगा कर रहा है।

उत्पादन और वैश्विक आपूर्ति में गिरावट

■ इंटरनेशनल ग्रेन्स काउंसिल और अमेरिकी कृषि विभाग के हालिया आंकड़े दुनिया भर के लिए चिंताजनक हैं।

■ 2026-27 सीजन में वैश्विक गेहूं उत्पादन घटकर 82.1 करोड़ टन रहने का अनुमान है, जो पिछले सीजन में 88.4 करोड़ टन था। उत्तरी अमेरिका और यूरोप में उत्पादन 2.4 करोड़ टन तक गिर सकता है।

■ इस वजह से शिकागो बोर्ड ऑफ ट्रेड पर गेहूं के वायदा भाव 6.54 डॉलर प्रति बुशेल (240.30 डॉलर प्रति टन) पर कारोबार कर रहे हैं, जो इसके दो साल के उच्चतम स्तर के बेहद करीब हैं।

क्या-क्या हो सकता है महंगा?

■ गेहूं केवल आटे तक सीमित नहीं है, यह खाद्य प्रसंस्करण उद्योग की रीढ़ है। थोक गेहूं महंगा होने से पैक और खुला आटा 5-8 फीसदी तक महंगा हो सकता है। ब्रेड, बिस्कुट, पास्ता और नूडल्स की निर्माण लागत सीधे बढ़ जाएगी। रेस्टोरेंट और ढाबों में तंदूरी और सामान्य रोटियों के दाम बढ़ सकते हैं।

कंपनियों की क्या है तैयारी?

■ कच्चे माल (गेहूं, चीनी, पाम ऑयल और क्रूड ऑयल) की बढ़ती महंगाई के बीच देश की दिग्गज एफएमसीजी कंपनियां सितंबर तिमाही में 1.5 से 5 फीसदी तक कीमतें बढ़ाने या उत्पाद का आकार घटाने की तैयारी में हैं।

■ ब्रिटानिया के एमडी रक्षित हरगावे के मुताबिक, गेहूं, चीनी और पाम तेल की ऊंची कीमतों के कारण 5 रुपये और 10 रुपये वाले बिस्कुट पैकेट का वजन घटाया जाएगा और कीमतों में 1.5 से 2 फीसदी की प्रभावी बढ़ोतरी होगी।

■ बोनस डेस्क

अमर उजाला Job Alert

Real-time job alerts amarujala.com/jobs

भारतीय स्टेट बैंक में संभावनाएं

जूनियर एसोसिएट के पदों पर रिक्तियां

11403 पद

आवेदन की अंतिम तिथि : 27 अगस्त, 2026
योग्यताएं : ग्रेजुएशन डिग्री व अन्य निर्धारित पात्रताएं
यहां आवेदन करें : sbi.bank.in

आईटीबीपी में निकली भर्ती ■ 282 पद

मेडिकल ऑफिसर व अन्य पदों पर मौके
आवेदन की अंतिम तिथि : 08 सितंबर, 2026
योग्यताएं : एमबीबीएस व अन्य निर्धारित पात्रताएं
यहां आवेदन करें : recruitment.itbpolice.nic.in

सरकारी चिकित्सा विज्ञान संस्थान ■ 100 पद

स्टाफ नर्स के पदों पर रिक्तियां
आवेदन की अंतिम तिथि : 07 सितंबर, 2026
वेतनमान : रुपये 44,900 प्रतिमाह निर्धारित
यहां आवेदन करें : gims.ac.in

डीटीयू में आवेदन आमंत्रित ■ 73 पद

प्रोफेसर व असिस्टेंट प्रोफेसर के पद खाली
आवेदन की अंतिम तिथि : 07 सितंबर, 2026
योग्यताएं : बीई, बीटेक व अन्य निर्धारित पात्रताएं
यहां आवेदन करें : dtu.ac.in

इसरो एनआरएससी में अवसर ■ 48 पद

रिसर्च साइंटिस्ट व अन्य पदों पर मौके
आवेदन की अंतिम तिथि : 21 अगस्त, 2026
योग्यताएं : एमई, एमटेक व अन्य निर्धारित पात्रताएं
यहां आवेदन करें : nrsc.gov.in

हरियाणा केंद्रीय विश्वविद्यालय ■ 33 पद

प्रोफेसर, एसोसिएट प्रोफेसर व अन्य पद खाली
आवेदन की अंतिम तिथि : 31 अगस्त, 2026
योग्यताएं : पीएचडी डिग्री व अन्य निर्धारित पात्रताएं
यहां आवेदन करें : cuh.ac.in

यहां भी रोजगार के अवसर...

राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम : यंग प्रोफेशनल के लिए करें आवेदन।
■ आवेदन की अंतिम तिथि : 25 अगस्त, 2026
■ ncdc.in

इलाहाबाद विश्वविद्यालय : जूनियर रिसर्च फेलो के पदों पर रिक्तियां।
■ आवेदन की अंतिम तिथि : 27 अगस्त, 2026
■ allduniv.ac.in

अपनी प्रतिक्रियाओं और सुझावों के लिए हमें udaan@amarujala.com पर ई-मेल करें।

एजुकेशन & कॅरिअर

आपकी सबसे बड़ी प्रतिस्पर्धा खुद से है। हर दिन खुद को बेहतर बनाएं।

आशा स्कॉलरशिप 2026-27

एसबीआई की यह स्कॉलरशिप कक्षा नौवीं से लेकर उच्च शिक्षा प्राप्त कर रहे छात्रों के लिए है, चार सितंबर तक करें आवेदन

ऋतंभरा कुमारी
कॅरिअर सलाहकार

एसबीआई फाउंडेशन की ओर से एसबीआई प्लेटिनम जुबली आशा स्कॉलरशिप 2026-27 की शुरूआत की गई है। इस स्कॉलरशिप का उद्देश्य आर्थिक रूप से कमजोर पृष्ठभूमि के मेधावी छात्रों को पढ़ाई जारी रखने में आर्थिक सहायता देना है। योजना के तहत कक्षा नौवीं से बारहवीं, स्नातक, स्नातकोत्तर, एमबीबीएस, आईआईटी, आईआईएम और विदेश में उच्च शिक्षा प्राप्त कर रहे छात्रों को अलग-अलग श्रेणियों में स्कॉलरशिप दी जाएगी।

■ किसे मिलेगा लाभ

स्कॉलरशिप के लिए अलग-अलग श्रेणियों में शैक्षणिक योग्यता और पारिवारिक आय की सीमा तय की गई है। कक्षा नौवीं से बारहवीं तक के छात्रों के लिए पिछली शैक्षणिक कक्षा में कम से कम 7.5 सीजीपीए या 75 प्रतिशत अंक प्राप्त करना अनिवार्य है। एससी/एसटी छात्रों के लिए यह सीमा 65 प्रतिशत व पीडब्ल्यूबीडी छात्रों के लिए 60 प्रतिशत है। इस श्रेणी में परिवार की वार्षिक आय तीन लाख रुपये तक होनी चाहिए और चयनित विद्यार्थियों को 15 हजार रुपये की स्कॉलरशिप मिलेगी। यूजी और पीजी छात्रों के लिए न्यूनतम 7.5 सीजीपीए या 75 प्रतिशत अंक तथा परिवार की आय छह लाख रुपये तक निर्धारित है। उन्हें क्रमशः 75 हजार और 1.50 लाख रुपये की सहायता मिलेगी।

■ मेधावी छात्रों को आर्थिक मदद

एमबीबीएस छात्रों के लिए दो लाख रुपये की स्कॉलरशिप है। इसके लिए विद्यार्थी का एम्स या एनआईआरएफ की टॉप-50 मेडिकल कॉलेजों में अध्ययनरत होना और वर्तमान या पिछले शैक्षणिक वर्ष का वैध नीट स्कोरकार्ड होना अनिवार्य है। आईआईटी में पढ़ने वाले छात्रों को दो लाख रुपये तथा आईआईएम के छात्रों को पांच लाख रुपये की स्कॉलरशिप दी जाएगी। आईआईटी और आईआईएम श्रेणी के लिए क्रमशः वैध जेईई एडवांस्ड और कैट स्कोरकार्ड जरूरी है। विदेश में पोस्टग्रेजुएट या उससे उच्च स्तर के पाठ्यक्रम के लिए चयनित छात्रों को पंद्रह लाख रुपये तक की सहायता मिलेगी। इसके लिए क्यूएस की टॉप-200 यूनिवर्सिटी में अध्ययन या वैध ऑफर लेटर व निर्धारित प्रवेश परीक्षा स्कोर जरूरी है।

■ चयन प्रक्रिया

उम्मीदवार को एसबीआई स्कॉलरशिप की आधिकारिक वेबसाइट sbiashascholarship.co.in पर जाकर पहले रजिस्ट्रेशन करना होगा। लॉगिन के बाद अपनी श्रेणी चुनकर आवेदन शुरू करना होगा और मांगी गई जानकारी भरने के साथ जरूरी दस्तावेज अपलोड करने होंगे। इसके बाद नियम एवं शर्तें स्वीकार कर आवेदन की जानकारी की समीक्षा करके उसे सबमिट करना होगा। आवेदन करने की अंतिम तिथि चार सितंबर, 2026 निर्धारित की गई है।

पहले से कर लें ये तैयारियां

आवेदन के दौरान छात्रों को पिछली और नवीनतम कक्षा या सेमेस्टर की मार्कशीट, सरकारी फोटो पहचान पत्र, पासपोर्ट साइज फोटो, परिवार की आय का प्रमाण और बैंक पासबुक जैसे दस्तावेज तैयार रखने होंगे। इसके अलावा संस्थान का बोनाफाइड या एडमिशन प्रूफ, फीस रसीद अथवा फीस स्ट्रक्चर भी देना होगा। आरक्षित वर्ग के विद्यार्थियों को जाति प्रमाणपत्र और संबंधित श्रेणी के अनुसार प्रवेश परीक्षा स्कोरकार्ड, ऑफर लेटर या दिव्यांगता प्रमाणपत्र जैसे अतिरिक्त दस्तावेज भी जमा करने होंगे।

आवेदन आमंत्रित

ओशन साइंस क्विज

- भाषा : हिंदी व अंग्रेजी
- प्रश्नों की संख्या : 20
- अवधि : सात मिनट
- कुल अंक : 20
- लाभ : प्रमाणपत्र
- क्विज की अंतिम तिथि : 15 अगस्त, 2026
- आधिकारिक वेबसाइट : tinyurl.com/4dr94nkj

फेलोशिप प्रोग्राम

नेशनल पोस्ट डॉक्टरल फेलोशिप

- संस्थान : अनुसंधान नेशनल रिसर्च फाउंडेशन
- पात्रताएं : पीएचडी, एमडी, एमएस व अन्य निर्धारित योग्यताएं
- आयु-सीमा : अधिकतम 35 वर्ष
- फेलोशिप : प्रतिमाह 50,000 रुपये से लेकर 80,000 रुपये तक
- रिसर्च ग्रांट : प्रतिवर्ष 2,00,000 रुपये
- ओवरहेड्स : प्रतिवर्ष 1,00,000 रुपये
- आधिकारिक लिंक : tinyurl.com/bde5swbp

एग्जाम अलर्ट

बीओआई क्रेडिट ऑफिसर परीक्षा

- परीक्षा की तिथि : 16 अगस्त, 2026
- इस परीक्षा में अंग्रेजी भाषा से 25 अंकों के 25 प्रश्न व पद के आधार पर व्यावसायिक ज्ञान से 100 के 100 प्रश्न पूछे जाएंगे। इन प्रश्नों को हल करने के लिए दो घंटे का समय दिया जाएगा।
- यहां से प्रवेश-पत्र डाउनलोड करें tinyurl.com/4df5nrfy

इंटर्नशिप प्रोग्राम

स्टूडेंट कैंपेन कोऑर्डिनेटर इंटर्नशिप

- संस्थान : मिंडेनीयस एडुटेक एलएलपी
- आवश्यक कौशल : बाजार अनुसंधान और विश्लेषण का ज्ञान, विपणन रणनीति, स्वतंत्र रूप से और टीम के साथ काम करने की क्षमता व समस्या-समाधान क्षमता आदि।
- अवधि : दो माह
- स्टाइपेंड : प्रतिमाह 15,000 रुपये
- आवेदन की अंतिम तिथि : 19 अगस्त, 2026
- आधिकारिक लिंक : tinyurl.com/yrjsemwv

सामान्य ज्ञान

1. भारत के किस हवाईअड्डे ने देश की पहली उपग्रह-निर्देशित हेलीकॉप्टर एप्रोच प्रक्रिया को कार्यान्वित किया?
(a) जुहू हवाईअड्डा, मुंबई
(b) एचएएल हवाईअड्डा, बंगलूरू
(c) सफदरजंग हवाईअड्डा, दिल्ली
(d) बेगमपेट हवाईअड्डा, हैदराबाद

2. सोनाई रूपई वन्यजीव अभ्यारण्य किस राज्य में है?
(a) असम (b) मणिपुर
(c) त्रिपुरा (d) नगालैंड

3. कद्र-एफ किस देश द्वारा विकसित मध्यम दूरी की बैलिस्टिक मिसाइल है?
(a) ईरान (b) इस्राइल
(c) इराक (d) सऊदी अरब

4. अबेलार्डो डे ला एस्प्रिएला ने किस देश के 36वें राष्ट्रपति के रूप में शपथ ली?
(a) अर्जेंटीना (b) बोलीविया
(c) उरुग्वे (d) कोलंबिया

उत्तर-1.b, 2.a, 3.a, 4.d

आज का दिन

11 अगस्त, 1961

संविधान के दसवें संशोधन के तहत दादरा और नागर हवेली औपचारिक रूप से भारतीय संघ में शामिल हुआ और इसे केंद्रशासित प्रदेश का दर्जा मिला।

■ 1919 : जर्मनी में वाइमर संविधान पर हस्ताक्षर किए गए।
■ 1962 : सोवियत संघ ने अंतरिक्ष यान 'वोस्तोक 3' लॉन्च किया था।
■ 1974 : भारतीय महिला क्रिकेटर अंजू जैन का जन्म नई दिल्ली में हुआ था।
■ 2020 : उर्दू के मशहूर शायर और गीतकार राहत इंदौरी का निधन हुआ था।

व्रत त्योहार

आज : श्रावण कृष्ण पक्ष चतुर्दशी।
कल : हरियाली अमावस्या, वर्षा ऋतु, सूर्य दक्षिणायने, उत्तर गोले।
राहुकाल : दिन में 12.00 से 13.30 तक।

■ सूर्योदय : 05.52
■ सूर्यास्त : 18.59
(भारतीय मानक समयानुसार)

कल का पंचांग

विक्रमी संवत 2083, 21 श्रावण मास शक 1948, श्रावण मास 28 प्रविष्टे, 28 सफर हिजरी 1448, श्रावण अमावस्या 23.06 तक उपरांत श्रावण शुक्ल पक्ष प्रतिपदा, पुष्य नक्षत्र 07.59 तक उपरांत आश्लेषा नक्षत्र, व्यतिपात योग 15.25 तक उपरांत वरियान योग, चतुष्पाद करण 12.29 तक उपरांत नाग करण, चंद्रमा कर्क राशि में दिन-रात।

राशिफल

amarujala.com/astrology
■ पं. विनोद त्यागी

मेष : दिनमान अनुकूल रहेगा। जमीन जायदाद के अटके कार्य बनेंगे। नौकरी में तबादला हो सकता है।

वृष : आत्मबल बनाए रखें। कार्य क्षेत्र में मान-सम्मान बना रहेगा। सहोदरों का सहयोग मिलेगा।

मिथुन : पारिवारिक कार्यों में व्यस्त रहेंगे। आर्थिक स्थिति में सुधार आएगा। नौकरी में कार्य भार बढ़ सकता है।

कर्क : मन प्रसन्न रहेगा। पूर्वनियोजित कार्य में सफलता मिलेगी। नौकरी में प्रभाव बना रहेगा।

सिंह : आरोग्य सुख में कमी रहेगी। नौकरी में वाद-विवाद से बचें। बढ़ते व्यय से चिंता होगी।

कन्या : समाज में प्रभाव बना रहेगा। राजनीतिक संबंध सहायक रहेंगे। अटका धन मिल सकता है।

तुला : राजकाज में सफलता मिलेगी। नौकरी में प्रमोशन के योग हैं। सुख साधनों पर व्यय होगा।

वृश्चिक : महत्वपूर्ण कार्य में सफलता मिलेगी। विरोधी शांत रहेंगे। धार्मिक कार्य में रुचि रहेगी।

धनु : दिनमान प्रतिकूल रहेगा। योजना में निराशा होगी। धन उधार देने से बचें। वाहन नियंत्रित चलाएं।

मकर : मन प्रसन्न रहेगा। नौकरी में आपकी प्रशंसा होगी। अटका धन मिल सकता है। स्वास्थ्य ठीक रहेगा।

कुंभ : मौसम जनित रोगों से बचें। नौकरी में मनोनुकूल सफलता मिल सकती है। स्वजन सहयोग मिलेगा।

मीन : मनोत्साह बना रहेगा। संतान पक्ष से शुभ सूचना मिल सकती है। कार्य क्षेत्र में सम्मान बढ़ेगा।

सुडोकू

		8			6			
	4		5	2				
	3		7			9		
		3				2		6
	2			7			8	
9		4				3		
		2			8		7	
				9	7		5	
			3			6		

सुडोकू 81 वर्गों का ग्रिड है, जो 9 वर्गों के ब्लॉक में बंटा हुआ होता है। कुछ वर्गों के अंक लिखे हैं और खाली वर्गों में 1 से लेकर 9 तक के अंक लिखने होते हैं। कोई नंबर 1 पंक्ति, कॉलम या 9 वर्ग वाले छोटे ब्लॉक में दोबारा नहीं आ सकता है।

उत्तर

7	1	8	9	3	6	4	2	5
6	4	9	5	2	1	7	3	8
2	3	5	7	8	4	9	6	1
8	7	3	1	5	9	2	4	6
1	2	6	4	7	3	5	8	9
9	5	4	8	6	2	3	1	7
5	9	2	6	4	8	1	7	3
3	6	1	2	9	7	8	5	4
4	8	7	3	1	5	6	9	2